ॐ श्री श्री महापुरुष अरक्षित दासाय नम:

भक्ति

एक समर्पित आलेख

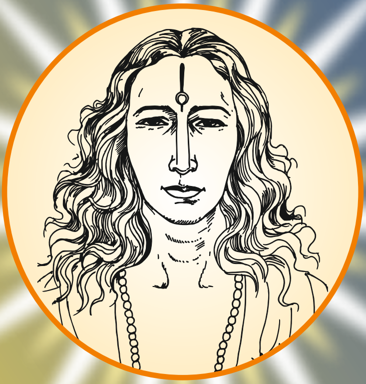

प्रज्ञापन - पद्मश्री डा. श्रीनिवास उद्गाता, विद्या वाचस्पति

- वर्ण-मार्जन सहयोग -

विजयलक्ष्मी सामल

- तत्वावधारक -

शरणारविन्द (संस्कृति गवेषक)

- प्रकाशक -

ओलाशुणि गुफा प्रचार प्रसार कमिटि, कर्तुक

नवकिशोर सामल

भक्ति

०

बद्म श्री ,साहित्य भारतीातिबड़ी सम्मानालङ्कृत
डॉ. श्रीनिवास उद्गाता, विद्यावाचस्पति

ॐ श्रीश्री अरक्ष रक्षक महापुरुष संत अरक्षित दासाय मनोनमः

०

भक्ति

०

पद्म श्री ,साहित्य भारती ,अतिबड़ी सम्मानालङ्कृत विद्यावाचस्पति

डॉ.श्रीनिवास उद्‌गाता

०

वर्ण परिमार्जन सहयोग

सुश्री विजयलक्ष्मी

०

प्रकाशक

ः

ओलाशुणी गुफा(पीठ) प्रचार प्रसार कमिटी

विश्वशान्ति. मैत्री, प्रीति, भक्ति,
पारस्परिक परिपूरक स्नेह सोदर भाव
अभिन्न, अभेदी, अन्तरङ्ग भाव–सम्बन्ध के
आसक्त अनुरागी कगत्‌कर्ता पालक करुणावरुणालय
अव्यक्त, अव्यय, अक्षय, असीम,अनन्त, अभय,
प्रभु के श्रीचरणाविन्दों में चरम आस्था, परम विश्वास के प्रति
उत्सर्गीकृत
०००

०सूची०

०००

१.उपक्रमणिका ५

२.भक्तियोग ९

३.भक्ति ।।एक। १३

४.इन्द्रप्रस्थ १७

५.भगति भाव भोला भगत गाथा २०

(*पूरोवाक् के उपरान्त –क.* रैक्व *उाख्यान ख.* रसखान *। कवि* सालबेग *। ग. जब मनहो चङ्गा (*रैदास)

६.माँ बले डाकिते जानना... ।। *(श्रीश्रीठाकुर रामकृष्ण परमहंस ।* पण्डित *अर्जुन होता।* ३१

७ . कन्या और बधूरूपा वरदा **भक्ति** रूपिणी **शबरी** । ३९

८.**रामेश्वर** तन्मय भक्त **रावण** ४५

९.सखा भावभोला भक्त आत्म समर्पित **उद्धव । ० सुदामा** **५२**

१०.माँ की गोद से ... ५९

११.भगतिभावकी शरधाबालि ...भगत सिद्ध अमर गण ६५

१२.भगति भगतसिद्ध नभचारी ७२

१३.भकति भाव-भोली महासती अभिशाप करेंगे नहीं क्या अङ्गीकार भगतदास ! ७८

१४.पराये घर में।, ८२

१५.ओळाशुणी में उद्गाता... ८३

१६,सबका मालिक एक... ९१

१७.ॐ श्रीश्री महापुरुष अरक्षित दासाय नम: ९५

१८.आतङ्कनाशन हे... ९६

१९.सर्वनाम कृपामय कर्ता पुरुष का... ९९

२०.हरि अनन्त हरिकथा अनन्ता । १०१

२१.अनाथनाथ। ॐ १०६

०००

।। भक्ति ।।

०

उपक्रमणिका

०

श्रीकृष्ण द्वैपायन महर्षि नारायणस्वरूप श्रीमद्भागवत महापुराण एकादश स्कपन्ध में इस आख्यान का प्रज्ञापन किया है। कराल कलि समुपागत। सिद्ध ऋषि–मुनि–तपस्वी–साधक–योगी–सुधु–भक्तमण्डली किस भाँति आगामी दुर्विसह विपर्यय का प्रतिकार करके जगत और जगतजन , मानवेतर जीव और वानस्पतिक जगत की सुरक्षा पूर्वक उद्धार कर पाएँगे उस प्रसङ्ग में चर्चा और मतपोषण करनेके लिए **नैमिष्यारण्य** में आहूत समावेश में सम्मिलित होने के लिए **देवषि वामदेव नारद** की यात्रा करते समय एक वृक्ष की छायातले म्लान विषण्ण बैठी एक तरुणीको दे्खा। तरुणी की दोनो और शोये दो रुग्ण असमर्थ वृद्धों को देखा। नारद को तरुणी पहचाना–पहचानी–सी लगी। परन्तु उसकी मलिन मुरझायी–सी रूप–सूरत देख सही ठौरा नहीं पाए। किन्तु, उन्हें देख कर तरुणी ने उन्हें प्रणाम करके कहा – 'देवर्षि , मैं आपकी प्रतीक्षा में थी कि आप इसी पथ ही से यात्रा करेंगे। वह मेरा अनुमाान था। **नैमेष्यारण्य** में आपलोग जगत उद्धार करने जो तय करेंगे लौटते समय मुझे अगाह करते जाएँगे , यह मेरी आपसे विनम्र द्रार्थना है। तत्पश्चात नारद के लिए माता '**भकित**" का परिचय अगोचर नहीं रहा । ' मैं भक्ति । कलि आएगा । मात्र उससे यदि मेरे दोनों पुत्रों की यह दुरवस्था है तो उसके पश्चात और भी बहुकाल युगों के लिए टिका रहेगा । तब नारद ने पूछा 'माता , आप तरुणी है, परन्तु आप जिन्हें अपना पुत्र बतारही हैं वे परिणत असमर्थ वृद्ध हैं ' । तब भक्ति ने उत्तर में कहा – 'मेरी तनु लावण्य ज्येतिहीन म्लान होगयी है । आप तो देख ही रहे हैं । किन्तु मेरे दानो पुत्र '**ज्ञान** ' और '**वैराग्यं** ' की अवस्था वह भी आप देख ही रहे हैं ।' नारद ने कहा – ' माता,भक्ति सदा पवित्र, धवल, निर्मल कान्त। वह निरत निरन्तर देदीप्यमान बनी रहेगी। **नारायण , नारायण** !! क्या विचार करेंगें। वह तो तुम्हें ज्ञात है। मैं सोच रहाहूँ उनके समीप होनेवाले साधु संतों को जगत

कल्याण हेतु अनुप्रेरित करके धरावतरित करेंगे कराएँगे। वे ही तो कर्तापुरुष। आप माता चिन्ता न करें।

देवर्षि वामदेव नारद ने लौट कर माता से कहा –' माता , **कलौ नामेव केवलम्** ! किन्तु निर्मल **भक्ति** के विना नामोच्चारण मात्र एक अभिनय है न ? अपने स्वारथ ऐश्वर्य प्रदर्शन जो समकालीन राजनीति के भ्रष्ट पुरुष , कालाबाजारी परस्व अपहर्ता , सौहार्द्द की छलनामयी सहानुभूति के बहाने चिकित्सक का लुण्ठन आदि किया करते हैं, जो कलि में होगा, तीव्र होगा । पर जो जैसा भी विश्व विषम विपर्यय , धरित्री का आतुर कातर रोदन निवेदन , पुराण इतिहास से लिपिबद्ध होकर है , उस से दुगुना अधिक समकालीन धरित्री का आर्तनाद असहनीय है। पड़ोशी राष्र मित्र नहीं वैरी हैं। विपुल नरसंहार , समग्र भूमंडल ध्वस्त विध्वस्त करदेने के लिए नव–उद्‌भावित मारात्मक मारणास्त्र प्रयोग । समान राष्ट्र से पड़ोशी प्रान्तों के स्वार्थी षड्‌यंत्र। जगतकर्ता जगन्नाथ, श्रीमन्दिर भी उससे मुक्त नहीं है। बीच सड़क में सेवक सेवायत की हत्या । रुष्ट प्रकृतिऋतु के विपरीत विनाशक ताण्डव आदि आदि। ज जनता तो अतिष्ठ परेशान हैं किन्तु , श्यामसखा मुझमें यह आस्था विश्वास क्यों जागरित करते है कि रत्न भण्डार **बिलकुल शून्य है** । गोविन्द रीति गोविन्द जाने। उसीके रहते है महिमा महिमार्णव साधु भगतों के प्रति आश्वासना निरीह असहायों कों बस बचे रहने की आश्वासना ही है न कृपानिधान! माता , उन्ही साधु भगतों में तुम हो दीप्तिमती, लावण्यमयी अनन्तयौवना **भक्ति** । विभु निराजना के योगसूत्र स्वरूप बनी रही हो तब न दुष्कृत विनाश धर्म संस्थापना साधु सज्जन–परित्राण तथा यब कभी भी धर्म का ग्लानिकाल उपस्थित होगा, तब हे भरतवंशोद्भव पार्थ मैं सम्भवित होऊँगा। धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र रणाङ्गन में आप हीं ने तो जगत को आश्वासित करके कहा है (**श्रीगीता**) – " यदा यदाही धर्मस्य **ग्लार्निभवति भारत / परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृतां**, धर्म संस्थापनार्थाय संम्भवामि युगे युगे "। हे लीलामय , उसी द्वापर में ही तो करूणानिधान ने कंस जरासन्ध संहार कर के भक्ति प्रीति की तन्मयी समर्पिता प्रियतमा रुक्मणी हरण पूर्वक सनातन सत्य का प्रतिपादन किया है। दुष्कृत नाशन और धर्म संस्थापन का चरम निदर्शन तो है न महाभारत महा समर ! उत्शृङ्खल

अननुशासित अहंकार अपने यदुकुल के विनाश हेतु तिलार्द्धप्रमार कुण्ठित हुए नहीं करुणानिधान!

प्रेममयी प्रीति भक्ति तो अभिन्न अभेदी है। उसका परम चरम निदर्शन है ब्रज गोपाङ्गनाओं की अलौकित प्रीति। तुम सबके हो प्रेममय ! षोलह सहस्र गोपिकाओं के हो प्रेमयय ; आपको केवल अपनामानती रही थीं । उसके लिए उनकी श्रद्धा और धैर्य , प्रतीक्षा की कोई तुलना नहीं है , अप्रतिम है। त्रेतया में कृपामयके रामावतार में वही सोलह हजार सिद्ध ऋषि–मुनि–तपस्वी अरण्य पथ पर आपको देखकर मोहित होकर आपके सख्य, सान्निध्य की कामना की तो आपने उन्हें वायदा करके कहा – '' इस जन्म में नहीं । मैं द्वापर में श्रीकृष्ण के रूप में अवतरित होऊँगा । मेरी लीला खेला के वाल्यकाल गोप व्रज में अतिवाहित होगा। तब आपलोग गोपाङ्गनाओं के रूपमें जन्म लेकर आपलोगों की जो अभिलाषा है , प्राप्त होंगे। मणिमा अनन्त ...भक्ति के चरम परम अनुरागी गोस्वामी ने प्रज्ञापित किया है ...'**हरि अनन्त...हरिकथा अनन्ता**।'

उन गोपाङ्गनाओं की प्रीति भक्ति हेतु स्वरूप प्रभु पर भी उनका अधिकार विचित्र अनुपम था। परन्तु मैं यहाँ अगणित में से केवल एक ही की अवतारणा कर रहा हूँ। गोपी बोल रही हैं – ' **हे मूरहर मा कुरु मुरली रवं मधुरम**" । मैं तुम्हारे वंशीस्वन सुन सकती हूँ । तुम्हें पता है मैं एक गृहिणी हूँ। रंधन संपादन कर के जाना मेरेलिए कर्तव्य बनता है । पर मैं वह कर नहीं पा रही हूँ। क्यों की बांसरी की मूर्च्छना से जलती लकड़ी पल्लवित हो जाती है और आग बूझ जाती है। हे मूर दैत्य के संहारक बांसरी का वह मधुर वादन करो नहीं। इस प्रकार के अपरिमित उदाहरण मूल व्यासकृत संस्कृत श्रीम्द्भागवत में है। उतकलीय जगन्नाथ दास कृत अनुसर्जित भागवत में भी है। उसी अप्राकृत प्रीति भक्तिकी विवेचना हेतु उत्कीलय कवि **अभिमम्यु सामन्त सिंहार**की रचना **विदग्ध चिन्तामणि** उल्लेखनीय है । **अपारे काव्य संसारे कविरैव प्रजापति** कहा गया है। उसीके साथ ही **कवि** मनीषी, स्वयंभू; सर्वश्रेष्ठ कवि , गायक कलाकार जगत पालक कर्ता के प्रतिरूप अन्तरात्मा स्वरूप विदित **माता शारदा सरस्वती** उनकी मुखपत्रिका है। अवधि कोसली वर्ग की रचना – वेणुपाणि वांसरी वादन कर रहे हैं । राग **वागेश्री** । उनकी ऊंङ्गलीमें जो **सुँदरी** वह **राधा नामाङ्कित**! **वांसरी में वागेश्री मुँदरी में**

राधा का नाम । परमपूजनीय भाररतरत्न **पण्डित भीमसेन जोषी** औंर परम आदरणीया कोकिलकण्ठी **लता मङ्गेशकर** के युगल गायन है । रास का काल है **शरत पूर्णिमा** । मध्यरात्र। आवाहन की मंत्रध्वनी है वागेश्री। किन्तु , जिन **अरूप अनाकार** विश्वनियन्ता के प्रतिरूप **भक्ति** –अनुप्रेरित है। जो भागवत के पांच अध्यायों में अभिव्यक्त होकर है , वह **ज्ञानगम्य** नहीं है ,है **बोधगम्य**। परवर्ती काल में रसमर्मज्ञ भक्त विद्वान **रास पंचाध्यायी**के नामसे संग्रहीत करके समीक्षात्मक विवेचना की है। वह केवल एकात्म अभिन्न प्रीति–भक्ति का शाश्वत सनातन विचार है। इस विचार से **श्रीमद्भागवत** को विश्व के श्रेष्ठतम , महानतम तन्मय **प्रीति कव्य** कहा जा सकता है।

०००

।।भक्ति योग।।

०

भक्तियोग । भक्तियोग कोई साधना तपस्या , कर्मकाण्डीय क्रिया नहीं है, वह जगतपालक कर्ता पुरुष की करुणा है। अरक्षरक्षक महापुरुष अरक्षित दास ; उनकी स्वयं की भाषा में अपने धरसे पराये घरको अवतरित हो आते समय जिन कर्तापुरुष के चरणाश्रित हो कर थे उन परम दाता ने निर्देशित करके जगत कल्याण हेतु धरावतरित कराया तब ही उन्हें भक्ति संस्थापित करके इस भाँति मोहित सम्मोहित कर रखा है कि सभी सुख स्वाच्छंद्य के मोह तज कर राजपुत्र ने राजपुरी परित्याग करके मही में भ्रमित होने में और परोक्ष रूप से सत्य की अन्वेषाव्रती होने में आनन्दानुभव प्राप्त हुए । महापुरुष अरक्षित दास का गृहत्याग और तथागत के गृहत्याग चिन्ता चेतना से आपाततः एक समान है। इस पावन उत्कल माटी में जितना बुद्ध विहार है ,समय क्रम में प्रतिष्ठित होकर है अन्यत्र है नहीं । कपिलेश्वर प्रसाद तथागत की पावन जन्म भूमि है। वह है भिन्न प्रसङ्ग है। उत्खनन से सम्राट अशोक के द्वारा विज्ञापित एक शिलालेख के आधार से उन्होंने कहा है – इस प्रकार कि **कपिलेश्वर प्रसाद तथागत** की पवित्र जन्मभूमि होने के कारण मैं **रत्नगिरि** विहार की प्रतिष्ठा का सहभागी बना। इस प्रसङ्ग आधिक पल्लवित न करके मैं विदग्ध अन्वेषी पाठकवर्ग से अनुरोध करना चाहूंगा कि वे महापुरुष के प्रज्ञापित **महीमण्डल गीता** का एकाग्र वाचन मनन अनुध्यान करें। मैंने उसे हिन्दी में काव्यान्तरित किया है। ग्रंथमें अनेकत्र भक्ति पर मन्तव्य टिप्पणी सहित उसकी व्याख्या की है। उसका आद्य संस्करण महापुरुष की पावन २६०तम जन्म तिथि के पवित्र अवसर पर अरूप अव्यक्त अनाकार के सुनावेश एकादशी २०२१ के शुभ अवसर पर प्रकाशित हुआ था । वह काव्यान्तरित भाषान्तरण मेरी अस्वस्थता के विचार से दुष्कर है ,सम्भव हो नहीं पाएगा कह देने के कारण कृपावारिधि ने स्वप्न में उदित विराजित होकर कहा – **" मैं हूं ! तुम्हारे साथ साथ रहूंगा। कर देंगे । होगा। मना क्यों कर दिया "**। और वह सारस्वत कर्म सम्पन्न यथा समय समापित होगया है। **ओळाशुणी** का पवित्र तीर्थ पीठ ने मुझ अकिंचन को

३.४.२२रविबार के दिन प्रकार संवर्धित किया है, वह भव्य समावेश मेरेलिये अविस्मरणीय है । "**ओळशुणी में उद्गाता** "। आमत्रण पत्र में अतिथि वक्ता के रूपमें उल्लिखित थे चौदह समर्थ विद्वान विद्यावती। वे हैं , सुलेखिका श्रीमती सौदामिनी उद्गाता,शरणारविन्द (प्रार्थना) , अभिनेता धूरीण चित्रकर श्री चिन्तामणि विश्वाल, भाई मतलूब अली के सुयोग्य पुत्र सेक मसूद अली । दूरदर्शन निद्देशिका श्रीमयी दीप्ति मिश्र , महीमण्डल गीता के अंग्रेजी अनुवादक श्री जीवनानन्द पण्डा प्रमुख। कवि भाई डॉ.श्री प्रसन्न कुमार पाटशाणी के पहुंचने में देर हुई । वे आकर मुझसे मेरे अतिथि कक्ष में मिले थे। बापा श्री नवकिशोर और लाड़ली बहन सुश्री विजय लक्ष्मी और मेरी माँ संध्याराणी की मौजूदगी में । समारोह की अभिनव उपस्थापना की थी शरणारविन्द ने । दूरदर्शन केन्द से कार्यक्रम का प्रसारण हुआ था और बादमें मेरा साक्षात्कार भी।

मैंने उस भव्य संवर्द्धना के उत्तरस्वरूप कहाथा – " जो कियाहै , महापुरुष ने किया है । परन्तु, मैं उस सारस्वत सर्जना हेतु प्रमुदित हूँ ,गर्वित हूँ। यहां कहदेना उचित होगा कि अरक्षरक्षक महापुरुष अरक्षित दास की तरह परम कर्ता पुरुष प्रभु के नितान्त अपने होते हैं । वे अमरात्मा , सिद्ध किन्तु, अपने आपको सिद्ध मानते नहीं है । और निरत निरन्तर हे अरूप अनाकार प्रभु मुझे भक्तियोग की सिद्धि प्रदान करें ; अटूट प्रार्थना करते रहते हैं।

इसके उपरान्त महीमण्डल गीता के सारव्वत कर्म संपादन के मुहूर्तें मेंने जिन अलौकिक रोमांचकर अनुभवों वे रोमांचित हाता रहा था उन्हें प्रज्ञापित करने की इच्छा करूंगा। मैं निश्चित **महीमण्ड गीता** का हिन्दी **काव्यान्तरण** करूंगा , उसके पृष्ठपट पर सारस्वत सत्पुरुष भाई सेक मतलूब अली की अटूट अभिलाषा थी जिससे मैं अपनी परिणतआयु, भग्नस्वस्थ्य की ताड़ना के बावजूद मुझे आपातत: वाध्य कर दिया था। उस समय मैंने अनुभव किया मानों मेरी चेतनता को तरंगायित करते हुए महापुरुष बोल रहेहैं " मना करो नहीं । मैं बराबर तुम्हारे साथसाथ विद्यमान रहूंगा " । और मेरी आखों को सही दिखता न होगा, यबकांच के सहारे वर्ण पहचानते हुए कम्पूटर पर वर्ण जूम करके एक घँटा के काम के लिये एक देढ़–दो दिन लेकर शीथिल क्लान्ति में धिरज धरे आगे बढ़ते समय

महापुरुष मेरे पास हैं यह उपलब्धि होती रही है। अमरात्मा महापुरुष ने मुझे अविकसित ओळाशुणी गुम्फा तथा तथा समाधि के क्षेत्र भर साथ चलकर घूमा फिरा कर दिखाये हैं। मैं कभी भी ओळाशुणी देखा नहीं था परन्तु सब कुछ कण-कण देखेहुए की भाँति सही- सही बखान करते जाते समय कल्याणीय बापा नवकिशेर ने विस्मय चकित होकर पूछा था -" क्या आपने महापुरुष को देखा है " ? काल समर्पित होती जाती नेत्रज्योति के कारण चित्रांकन मेरे लिये सम्भब नहीं है। परन्तु, उस समय मैने महापुरुष के जो रूप दर्शन किया था उसे किस कृपा करुणा के बल से स्केच स्वरूप तत्काल अङ्कित करदिया जिसे मेरे पचिाचित सुहृद कुशल चित्रकार श्री दिल्लीप सिंह देव ने मेरे निर्द्देश और मार्गदर्शिता में रोखाङ्कित करदिया। । उसी से अवलंवित होकर समर्थ प्रवीण ाचत्रकार श्री चन्दमणि विश्वाल " देढ़-दो" आकार में तैलरङ्ग में प्रतिकृति करदेंगे। मुझे अभिनन्दित करने के अवसर पर अङ्गीकार किया है। वर्तमान गुम्फा और समाधि तो पूर्णरूपमें विकशित होगया है। उसीके साथ माता अभयदा ओळाशुणी की निराजना मंदिर भी। भव्य मंदिर, अतिथि भवन, भवन , सभागार किसने करदेने की इच्छा की , कैसे हुआ, वह अकल्पनीय है । भकित सिद्ध जो भी मन करेगा जगतकरता पालक प्रभु स्रष्टा पुरुष वह स्वयं करदेंगे करा लेंगे। जो करता कराता है वही कर्ता कहलाता है। व्याकरण का भी सूत्र यही है। उसी भक्ति की अभयदा प्रेरणा से आयुष्मान नवकिशोर ने जिसे प्राप्त होकर सब करते सुव्यवस्थित करते जारहे हैं ,वह वे नहीं ,कर्तापुरुष करालेते हैं।

परमानन्द अरूप निराकार जगतपालक स्रष्टा पुरुष के प्रतिरूप है **भक्ति**। उसकी करूणा, उसके स्वत: उदित विराजित होने के उपरान्त जिसपर कृपा हो वह एकाग्र, तन्मय कर्मनिष्ठ आदि होजाता है। हो सकता है वह उसकी निराजना का मंत्र है। वह उच्चारित वाक् नहीं मौन कर्मानुष्ठान है। कब उन माता की करुणा उद्भास्ति हुई कि अमरात्म महापुरुष के अनुभव में कि वे मार्गदर्शी बनेरहै और जो सुझसे सम्भव होगा नहीं सोच रहा था काव्य विन्यास के विभिन्न परिपंथी प्रयोग के कारण , वह किस तरह निहायत कम समय में समापित भी होगया वह मेरे स्वयं के लिए भी विस्मयकर है। जो हुआ है वह **भक्ति** की करुणा से महापुरुष ने ही किया है। मैं निमित्तमात्र हूँ । इस प्रसङ्ग की उपस्थापना के क्षण स्मरण हो आता है भक्ति

के परम भक्त अतुलित बलधाम मारुति नन्दन की उक्ति। जब बानर समूह ने उनकी उछ्वसित प्रशंसा करते हुए कहा – '' केशरी नन्दन , तुम ही हो जो शतयोजन महासागर अक्लेश अनायास लाँघ गये "! तब हाथ जोड़ कर विनम्र कंठ से उन्होंने कहा – '' मैंने कुछ भी किया नहीं है। वह उस परम कृपामय प्रभु श्रीराम की कृपा जो कि विशाल महोदधि मुझे सामान्य गोस्पद समान लगा। और में अनायास लाँघ गया।" वह भक्ति का निदर्शन हैं।

गोस्वामी तुलसी दास ने अपनी एक संस्कृत रचना में उसे '' गोस्पद कृत वारिधि " कहा है। भक्ति के भक्त शिरोमणि आदि महाकवि बाल्मीकि के परावतार की जीवनवृत्तान्त की रचना की है बाबूजी अमृतलाल नागर ने।**मानस हंस** का ओड़आ भाषान्तरण इस अधम ने किया है

जो २००२ में ग्रंथ मंदिर कटक ने प्रकाशित कियाथा (द्रष्टव्य)

स्वयं मर्यादा पुरुषोत्तम सकल गुणधाम श्रीराम को लङ्का विजय, प्रवल पराक्रमी रावण संहार के उपरान्त लौट कर , चौदह वर्ष पूरा होने में एक दिन बाकी था इस कारण, नन्दीग्राम जहां भरत ने प्रतीक्षा की थी पहूंचे तब राजगुरु महर्षि वशिष्ठ ने कहा –'' पुरुषोत्तम श्रीराम , तुम हो तब न यह विजय सम्भव होपाया।" तब प्रभु ने हाथ जोड़ कर कहा – '' मैंने कुछ किया नहीं है गुरुदेव , आपके आशीर्वाद के विना क्या यह सम्भव हो पाता ? वही अरूप अनाकार **भक्ति। भक्ति** की अपरमित **शक्ति** कल्पनीय। ।

०००

४,१,२०२३

।। **भक्ति**।।

एक

भारतीय पुराण इतिहासों में तथा उपनिषदीय कथ कहानियों में , किंवदन्ती जातक कथादिओं में और महापुरुषों के विवृत कथा प्रवचनादियों में **भक्ति** के होने के वाबजूद परमानन्दमय अरूप अव्यक्त निराकार जगत्स्रष्टा पालक प्रभु अनुरूप ज्ञानगम्य नहीं बोधगम्य हैं। वह हैं प्राप्ति जन-जन में भिन्न। जगन्नाथ दास के उत्कलीय श्रीमद्भागवत की उकित में – ''ये पक्षी उड़े य़ते दूर । से जोणे तहिंर वेभार ।।भक्तिगाथा उपरोक्त सम्भारों में शतसहस्राधिक हैं। जिन्हें भेदकरने के लियेआयुष्काल अनेकेनेक कम है। ये भक्तभक्ष अमरात्मा और आत्मभोला। वे जो चिन्ता करते हैं सवर्नियन्ता पालक प्रभु उसे सम्प्न्न समापित कर देते हैं। इस रचना के अन्तिम पर्याय में उस प्रकार कुछेक कथा की अवतारणा करने की इच्छा की है जैसी मेरी सकल दु:खावसाद हर्ता श्यामसखा की इच्छा!

ॐ अरक्ष रक्षक महापुरुष अरक्षित दासाय नम: । ''कालोयहं निरवधि विपुाच पृथ्वी"। सब तो ओळाशुणी ने दिखादिया। यह विपुलायतना धरित्री के और कहां कहां तुझसे बोध में मिलने के अनूराग से भ्रमित हो हो कर भटकत फिरूंगा माता ? करुणा तेरी किंचित भी घटा देना नहीं। मैं अधम , मेरी क्या हैसमर्थता , क्या भी साध्य हो पाएगा मुझसे ? अपनी अक्षम असमर्थता के कारण तेरी आराधना के मंदिर बाना हूंगा , नहीं नहीं कहके हाँ भर तो दिया हँ मेरेजगत्तकर्ता पालक श्यामसखा और तू कल्याणी माता भक्ति के आ्श्रित होकर । जागतिक विचार से असमर्थ पर कृपा करुणा कीवर्षा करके कि वह अकपट चित्त से जाहे , जिसे कर्ता पुरुष पूरा कर देंगे।और तूने तो वह प्रतिपादित प्रमाणित भी कर दियाहै अरक्ष जन को तेरी करुणा से मोहित सम्मोहित करके !

किसी प्रतिपत्तिशील ल धनाढ्य, क्षमतासम्पन्न नहीं , मैं उस कृतज्ञ, विनयी नवकिशोर सामल के प्रसङ्ग में जिक्र कर रहा हूं जो समकालीन जागतित्क विचार से जो अति सामान्य सेधारण आदमी है । वह भाग्यवान है कि उसे **भक्ति** की करुणा प्रदान करने की कृपा की है। वृत्ति उसकी कोई ऊँचे पद पदबी ओहदे की

नही , है चौथे दर्जे का। तदनुरूप शैक्षिक योग्यता ।**ओळाशुणी** को और और विकसित करने को लेकर निरत निरन्तर कुछ न कुछ सोचता रहता है, वह चाहता है और परमानन्द पुरुष उसे साकार रूप देकर पूरा कर देते है । किस भांति , कैसे, उसकी कल्पना करना भी असम्भव है। उसीने सोचा कि यह काम एक का नहीं है। ओळाशुणी गूपा प्रचार प्रसार के लिए समिति होना नितान्त आवश्यक है। और एक कमिटी अपने आप भक्तों को लेकर बनगयी । क्या प्रसारि हुआ और और किस बात का प्रचार हुआ कि , किसने किया । फिलहाल प्रतिदिन सहस्राधिक दर्शनार्थी आकर मनौती कर दर्शन कर जाते है । उसी परिसर में श्री राधाकृष्ण मंन्दिर , महन्त हैं श्रीश्री नामानन्दजी महाराज, विद्वान , सूगज्ञ सुठाम बपुवन्त आलुलायित केश श्मश्रु, देवगुरु वृहस्पतिसदृश प्रशान्त मुखमुद्रा। उन्होंन मुझे महीमण्डल गीता के काव्यान्तरण, बीचबीच में भक्ति पर टीका टिप्पणी के लिए समिति कीं ओर से अभिनन्दित किया था। आयोजन भव्य था।

बलाङ्गीर में अविरत मेरी परिणत आयु की सुरक्षा स्वाच्छन्द्य हेतु एकनिष्ठ तत्पर मेरा पुत्र शुभेन्द (लुलू) स्वयं अपनी गाड़ी चलाकर हम पति-पत्नी को भुवनेश्वर तक ले चला था । वहां से हमारे साथ कल्याणीया आदरणीया बहन आल्हादिनी, भगिनीपति चित्रकार सङ्गीतज्ञ (तबला) आयुष्मन पद्मनाभ मिश्र मेरी अभिनन्दन-अभ्यर्चना के सहभागी होंगे , इस पूर्व निश्चि योजना की सूचना पाकर प्रमुदित हो कल्याणीय नवकिशोर ने कहा - भुवनेश्वर से मैं स्वयं गाड़ी लेकर आपलोगों से साथ रहूंगा । क्यों कि वहां से राह बताते हुए ले चलना निहायत आवश्यक होगा । आपालोग अपनी गाड़ी भुवनेश्व में रखे चलेंगे। वहां पीठ के लिए दो पथों से एसी बन्द गाड़ी के भीतरसे मैं अब दो ही स्मरण कर पाता हू , चलते हुए बालिचन्द्रपुर बाजारऔर वापसी के मार्गपर सालेपुर। हमने वहां अरक्षरक्षक संत की समाधि पीठ की अतिथिशाला में तीन दिन आराम आनन्दसे व्यतीत कर आए।यथार्थ हम अपनी गाड़ी लेकर चलते तो बेहत हैरान हुळ होते। नव किशोर एक बडी गाड़ी लेकर आए और हमलोगों से बहन के घरसे ,वहीं अपनी गाड़ी रखकर नवकिशोर की मार्गदर्शिता में निकल पडे। मैं, श्रीमती, भगिनी , भगिनीपति , नवकिशोर तथा चालक के लिए कोई असुविधा या दिक्कत हुई नहीं।

नवकिशोरने कहा महापुरुषकीदया कृपा से हमारे दो कार्यालय हैं। गाड़ी सहित उसके चालक रहते हैं। कोई भक्तचाहे तो ले चलेंगे। बाहर की तुलना में व्यय भीळचित कम होगा। मार्ग दुर्गम नहीं है , परन्तु दिशाभ्रमित होने कीआशंकाबनी रहती है।

इन कार्यालयों की स्थापना २००७ में हुई है। प्रतिष्ठाताके स्वरूप सूचित है नवकिशोर सामल । उस समर्पित भक्त की जो चाह होगी प्रभु अन्तर्यामी पुरूष उसे पूरा कर देते है। कल्याणीय भी मालूम कर नहीं पाते। किसने किया , कैसे हुआ , अर्थ व्यवस्था कैसे कहां स`हुई। आदिआदि।

मुख्य कार्यालय

०

प्लॉट ६१२ शबर साहिर, रसुलगढ़ , भुवनेश्वर ७५१०१०

०

शाखा कर्यालय

००

मु.पोस्ट , ललितगिरि, महाङ्गा जि, कटक ७५४२०५

चलभाष ७९७८६२८७२९ / ९७७६३४३५०३ / ९९३७६३२३९३

कृतज्ञता

०

बारबार कृतज्ञता ज्ञापित करना द्विरुकि नहीं है ,सोचताहूँ । नेत्रज्योति काल ने वापस लेलेने की जिदधरे अड़ा बैठा है। परिणत निन्यानबे ,देख–पढ़ नहीं पाता यवकाँचके सहारे वर्ण पहचानता हूँ। कम्प्यूटर में जूम करके बिन किसी ड्राफ्ट के ,लगता ऐसा कि करूणानिधान मेरे श्यामसखा जो कहेजाते है श्रुतलेख की तरह उतारेजाता हूँ । मेरी कोई शङ्का नहीं न दिक्कत है। जब तक जो करनेको कहे जाएंगे, **आओरी दासी** कहें तो **हाँजीआयी** बोल पहूंचता रहूंगा। मुझसे पाँच–दस साल अयु से कनिष्ठ सारस्वत मित्रगण अपने धाम लौटे जा रहे हैं मुझे कबतक इस फरा के मेरे पराये घर में बसाए रखोगे सखा ? अपने घरपर आप करुणानिधान

के श्री चरणों में माथा टेक कर कुछसमय व्यतीतकरने की इच्छा हो रही है । भारतीय वैष्णव सैद्धान्तिक विचार से वे ही कर्तापुरुष लीलामय मायाधर ;वे ही एक मात्र पुरुष और बाकी मानवमानवेतर वानस्पतिक प्रकृति सभी नारी हैं , जगत्पति !

बारंवार सत्य का उच्चारण पाप नहीं है , परन्तु एक बार भी निथ्या का उच्चारण पाप हैं न सखा ?

०००

१५.१.२०२३

इन्द्रप्रस्थ

०

मायाधर ,विनोद विहारी , सर्व नियन्ता,अनन्तदाता, महाबाहु महिमार्णव ! पितामह भीष्मदेव समेत मौन श्रीकृष्णद्वैपायन नारायणस्वरूप महर्षि व्यसदेव भक्ति के प्रतीक नीतिवन्त महात्मा विदुर की तुम्हारी चेतना से तन्मय अनूज दासीपुत्र तथा सभासदों के द्वारा समर्थित होकर यह निश्चित हुआ कि कालकाल की वैरी विबाद का अन्त करने के लिये राज्य को दो भागों में विभाजित करदेना समीचीन होगा। उस समय भक्ति प्रीति के पृतीक महिमा वारानिधि ! पाण्डवोंने कहा हमारे लिये श्रीकृष्ण जो जिस प्रकार चयन करें वह अपरिवर्तनीय होगा। यह आपको स्मरण करा रहा हूँ , मेरा दोष न धरो करुणा अकूपार श्यामसखा। उस समय पद्म पाटल अधरों पर मन्दमन्द स्मित बिखेर कर निश्चिन्त सभा के आगे बोले – **ठीक है , पाण्डवों को इन्द्रप्रस्थ करें** ! सभा विस्मित चकित। कौरवगण आनन्द विभोर । वयोज्येष्ठ हितैषी समुदाय अवाक् निर्वाक । पाण्डव गण स्तब्ध। श्यामसखा कृपामय ,आपके निर्णय को स्वीकार करलेने के अतिरेक उनका कोई गत्यन्तर नहीं था।

प्रस्तरमय, दन्तुरित, कठिन, सर्प, विषधर सरीसृप–सङ्कुल अनुर्वर जलहीन भूमि था इन्द्रप्रस्थ जो शतयोजन सीमा से आरम्भ होकर पाण्डबों के अधिकार का क्षेत्र हुआ। कमलनयन! आपने तब पूछा था न ''उचित हुआ तो '' ? वे क्या भी उत्तर देते ! सब ने मौन सम्मति की तरह सर नवॉए खड़े रहे । तब आपने निश्चिन्त चित्त से कहा न– '' सब तो होगया ! मैं द्वारका चल कर यथासमय वापस आ पहुंचूंगा। उस बीच ज्येष्ठभ्राता, सानुज राजलक्ष्मी द्रौपदी के साथ इन्द्रप्रस्थ के लिएप्रस्थान करें। सब मिल कर इन्द्रप्रस्थ की भूमि को समतल करते रहें! स्वंय आप सब सम्पादित करेंगें उस काम हेतु कोई सेबक , मजदुर नियुक्त करेंगे नहीं''।

'' और ,सखा पार्थ ! खाण्डव वन दहन करके विषधरों को भगाने का काम करना ! जो प्रतिरोध करेगा , वह मरे तो मरे , उसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं''।

वे चलकर अपने अपने कामों में जूटगये। केवल राजमाता कुन्ती श्रम न करके उनके साथ हस्तीना से शासकों के अत्याचार पीड़ित हो क्षेत्रत्याग कर आए पजरगणों के लिये भोजन की व्यवस्था करती रही। साम्राज्ञी यज्ञसम्भवा याज्ञसेनी मलवे ढोने को डाला धरे मजदुरन बनी रही था।

कर्तापुरुष हे कृपालु , आप आए। जब पहुंचे तब तुम्हारी प्रिय सखी कृष्णा एक बकुल तरु के सहारे बैठी चबुतरे पर क्लान्त श्रान्त बैठी हुई थी। शाम ढलने लगी थी । पाण्डव भाई गण विश्राम कर रहे थे।

उपस्थित होकर दुलारते-से कहा-' तुम क्लान्त श्रान्त हो। मुझपर रोषकरे रुठी बैठी हो क्या प्रियसखी! '

और लीलाधक आपने अपनी गोद थपकाए कहा न ? आओ कुछ थकान तो मिटालो।! और कृष्णा के आपकी गोद पर सर थामें लेट जाने के बाद आप उन्हें थपकी दे सहलाने लगे और कृष्णा पस्क भर में सम्मोहिता सी गहन निद्रा में खोगयीं।

हे मायाधर ! माया स्थपति मय को निर्माण के यथोचित आदेश देकर ब्राह्म मुहूर्त्त में प्रियसखी को हिलाए जगा कर कहा न लीलाधर - 'उठो , जागो प्रियसखी, इन्द्रप्रस्थ का निर्माण समापित होचुमा है। पर तुम नारियों की अपरितोष बनी रहती है । बाद में कहीं यह न कहो कि ' हुआ पर कुछ ऐसा कि वैसा होता तो और अच्छा होता । ' सुबह होने को एक प्रहर बाकी है , तुम देख कर जो कहोगी उसीके अनुरूप परिमार्जन हो जाएगा , तुम्हें प्रमुदित आह्लादित करने के लिए । ' कृष्णा के पास कहने को कुछ नहीं था । वे आनन्द विभोर हो अपने को प्रियसखा के निविड़ आश्लेण में खोगयीं आत्महरा होकर। उस अप्राकृत भक्ति प्रीति में कोई भेद नहीं होता। एक ही रात में अकल्पनीय राजपुरी, राज्य का अभिनव निर्माण सम्पन्न करके सब के दृश्यान्तराल में रह कर कृपामय से माया स्तपति प्रस्थान करने की अनुमति की भिक्षा कर रहे थे।

०००

(महामना, त्रिपुर विजयी,सप्तद्वीपाधिपति, वेदाध्यायी , अग्निहोत्री.परमशक्तिमान, परम भक्त, सच्चरित्र, त्रिकालदर्शी,सर्व शास्त्र शस्त्रज्ञ , सङ्गीतज्ञ, रुद्रवीणावादन

प्रवीण, सङ्गीतरर्णव चन्दिका, उड्डीश तंत्र, प्रणेता , रामेश्वर भक्ति शिरोमणि प्रवीण कर्मकाण्डविद् , परम भक्त सच्चरित्र लङ्केश रावण के महासुरपुत्री सती साध्वी, साम्राज्ञी मन्दोदरी के पति हैं। महिमा महिमार्णव हे महाबाहु! त्रेतया में मनोरमा पत्नी की वचन-रक्षा करने आपने उनका उद्धार करके मोक्ष मुक्ति की अनुकंपा की थी न?

रावण **जय** अन्य भाई **विजय** है कुम्भकर्ण! '

०००

भाषान्तरण

४.२.२०२३

भक्ति

।। दो ।।

०

भकति भाव भोले

भकत गाथा

०

जगत्कल्याणी भारत भूमि की पावन गोद में अनेकानेक भक्ति भाव के भोले अवतरित हुए हैं। विश्वगुरु यह देश। अरूप अनाकार जगत्नाथ नीलाद्रीविहारी के श्रीक्षेत्र ने अगणित भक्तमण्डली लेकर अनेक गाथा, इतिहास कथाएँ लिपिबद्ध होकर हैं। वे असीम अनन्त शत सहस्राधिक होंगी। पञ्चसखा समूह सारस्वत सत्पुरुष सत्यवाक्, त्रिकालदर्शी भविष्यवक्ता भावामोदी, विभुकरुणाश्रयी निष्काम भक्त अवतरित हुए। अवतरित हुए तन्मय तद्‌गत कवि जयदेव । किसी उनके समकालीन कवि रचनाकार ने **जयदेव चरितम्** शीर्षक से कहाहै (यह पद्य हमारे मेट्रिक पाठ्यक्रम **संस्कृथ प्रवेशम** पद्यभाग के अन्तर्गत था अप्रमादी शास्त्रीय मान्यता प्राप्त **ओड़िआ** की सुरक्षा संरक्षण हेतु इसका पुन: प्रचलन परम आवश्यक है– उद्‌गाता)। कहागया है ' पुरा प्राची तटे केन्दुविल्व इति ख्यात ग्राम ब्राह्मण संकुल' , उसी ग्राम में **श्रीराधा माधव** प्रीति–भक्ति की मनोज्ञ रचना **श्रीगीतगोविन्द** के रचयिता गायक शिरोमणि **पद्मावती चरण चारण चक्रवर्ति कवि श्री जयदेव**। भक्त चूड़ामणि कवि यवन सालवेग , अरक्षरक्षक सिद्ध महापुरुष अरक्षित दास , भगति निमग्न निमज्जित विद्यमान **श्रीगुरुभागवत** के रचनाकार (छ:भागों में श्रीगुरुभागवत)पूज्यगुरु **श्री चन्दभानु शतपथी** के चरणस्पर्श प्रणाम करके , इस रचना के कलेवर की सीमातिक्रमण न कर पाने की वाध्यता के कारण जिन महापुरुषों के नामोल्लख कर नहीं पायाहूँ उन दिव्य पुरुषों को सभक्ति प्रणाम करता हूँ। गुरुभागवत के षष्ठ भाग का लोकार्पण कटक **शहीद भवन** में मेरे कर्तृक होना था । मैं कुछ वाधक षड्‌यंत्री स्थिति के कारण कर नहीं पाया। पाँच तक मेरे पास है , षष्ठभाग की प्राप्ति भी हो नहीं पायी है। नेत्रज्योति

लौटा लेने को जीद धरे काल अड़े बैठ गया है। ग्रंथ-मंथन फिलहाल मुझसे सही हो नहीं पाता है । अब तो मेरे लिए एक कठिन व्यापार है। सिद्ध भक्त **श्रीगुरु चन्दभानु शतपथी** *अभिनव शिरडी* के निर्माण हेतु आसक्त अभिलाषी है। जगत्स्रष्टा पुरुष उस कार्य को अलक्ष में सम्पादित करते जा रहे हैं। एक बार उस पावन क्षेत्र को चलकर नतजानु प्रणाम कर आने की इच्छा है। वह भगवतस्वरूप बाबा की इच्छा। श्रद्धा है निश्चित सबूरी होगी। ये भगतवृन्द निश्चित भगति भाव भोले हैं।

कुछ प्राञ्जल कर देने की इच्छा से इस अध्याय में कुछेक भगत गाथा स्मरण करके उनके चरणस्पर्श प्रणाम करने की इच्छा है। जो उनकी कृपा करुणा है। कथा, नाम स्मरण ,श्रवण में भक्ति निहित हो होती है। परम तन्मय भक्त सखा **उद्धव** ने कृपामय लीलाविहारी से प्रार्थना करके कहा -'महाभारत में आपका उत्तर काल विवृत प्रज्ञापित हो कर है , अधर्म विनाश, दुष्कृत नाश करके सत्य धर्म संस्थापन का काल। किन्तु ,बाल्यकाल , जिसकी रचना की परवर्त्ती रचना है । रचनाकार हैं आपके स्वरूप श्रीकृष्ण द्वैपायन व्यासदेव , मेरी प्रार्थना है , कि आप उसमें निरत विराजित रहें '। वह है **श्रीमद्भागवत म्हापुराण** । प्रभु ने कहा **तथास्तु**।

भागवत के पठन वाचन श्रवण, जिसके अनुकोण में **भक्ति** और **प्रीति** विराजित होकर है। कई भाव विचार से वह विद्याबोधवन्तों का क्षेत्र है। किन्तु,अपण्डित, निरक्षर सूर्ख भी रक्त वस्त्र आच्छादित करके अपने पूजापीठ पर प्रत्यह दीप धूप जलाकर फूलचन्दन विमण्डित करके उसकी आराधना किया करता है। वह वही **भगति** है। भक्ति निवेदन है। ये सारे दिखावे ऐश्वर्य प्रदर्शन के लिए लोग हैं ,जो समाज को मैं एक भक्त हूॅ जताने का अभिनय करते फिरते हैं । और उसी प्रकार प्रतारित करते हैं। वह दाता पुरुष उन्हें जो देना चाहिए , जो समीचीन है देते अवश्य है। वे अपने अपने कृतकर्म का फलभोग निश्चित करत हैं। जो पश्चात्ताप से कुछ घटता भी है , यदि कर्ता दाता कृपालू की मरजी हो !

(वैष्णवी सैद्धान्तिक से भक्ति है नवधा । वे प्रज्ञापित हैं इस प्रकार -**दास्य , सख्य, आत्मनिवेदन, वन्दन, अर्चन, स्मरण, पदसेवा, कीर्त्तन , श्रवण** - उद्‌गाता)

०००

पुरोवाक्

०

भक्त चरित कथा के पुरोवाक् स्वरूप यह कह देना मेरेलिए उचित होगा कि मैं अतीत के मेरे किशोर काल में भक्त चरित की कई वृत्तान्तों की रचना की थी । वे रचनाएँ अखबारों के सारस्वत पृष्ठों में प्रकाशित हुई थीं। अब कहीं अव्यवस्थित हो होंगी जिन्हें तलाशना मेरी परिणत आयु और स्वास्थ्य के कारण असम्भव, असाध्य है। वे हैं , किन्तु नत्थी फाइल ग्रंथ–अरण्य में कहीं भटके हुए हैं। अब मैं अपनी क्षीण नेत्रज्योति के कारण सही देख नहीं पाता हूँ । जो भी अब स्मरण कर के करूँ वे मेर पुर्नरचनाएँ होंगी। नाम वाचक विशेष्य पदों के प्रयोग का प्रमादपूरित होने की संभावना पर्याप्त हैं परन्तु भाव चिन्तन अक्षुण्ण रहेंगे , यह मेरी आस्था –विश्वास है।

प्रथमत: महायोगी **रैक्व** स्मरण हो आते हैं । यह व्याख्यान उपनिषद का है । याद है नहीं किस उपनिषद का । अब जो व्यक्त करूँगा वह संक्षेप व्याख्यान ही होगा।।

रैक्व उपाख्यान

०

अवन्ती के महाराज प्रासाद के छतपर महारानी के साथ सान्ध्य पदचारण कर रहे थे। महाराज में एक विलक्षण शक्ति थी कि वे पशु–पक्षियों की भाषा समझ सकते थे। किसी कारण विरक्त होकर क्राधित दृष्टिपात करें तो उड़न्त पक्षी के डैने जल जाते थे। उस समय आकाश में नीड़ लौटते पक्षी–युगल ; जब पक्षी ने पक्षिणी से कहा कि चलो राह से हटकर चलें तो पक्षिणी ने कहा ‘ अरे चलो , कुछ नहीं होगा । महाराज के क्रोधाग्नि से हमारे डैने जल भी जाएँ तो प्रासाद के बहर धूनी जलाए विद्यमान महायोगी रैक्व के ऊपर से चलें तो वे डैने अपने आप पल्लवित हो जाएँगे। और वे स्वच्छन्द उड़े चले गये। पक्षी पक्षिणी के उस आलाप से महाराज विस्मयाभिभूत अवाक् हो गये। सोचने लगे , बाहार कोई तप:सिद्ध महायोगी हैं । उनके ऊपर से उड़जाने पर आपही डैने खिल जाएँगे , उस विश्वास से पक्षियाँ जो उड़ चले , उन महायोगी को प्रासाद को आमंत्रित कर ले आना समीचीन होगा । प्रासाद में उनके सुख स्वाच्छन्द्य की व्यवस्था करना उचित होगा।

सोच कर अगले प्रभात राजा ने योगी से भेंट करके अनुरोध करने हेतु अपने महामंत्री को भेजा। बाहर खूलेमेले रौद्र–शीत, वर्षा झेलते आनन्द मन से बैठे योगीराज को महामंत्री ने देखा । राज्य के महाराज की जानकार में उनका इस पब्रकार रहना समचिनि नहीं । राज्य और राजा उससे निन्दा अयशप्रापत होगा ही। महामंत्री ने कहा योगी राज प्रासाद में आपका स्वागत है । आप वहां सुख–स्वाच्छन्द्य सुविधा रहकर तपः साधना कर सकते हैं । सब कुछ सुव्यवस्थित हो जागा ।

महायोगी रैक्व ने उत्तरस्वरूप कहा – ‘ बाबा , मेरी निगरानी करनेवाला कर रहा है। तुम चिन्ता न करो । मैं यहाँ अत्यन्त आनन्द प्रमुदित हूँ । भगति भाव भोले निमग्न निमज्जित होकर हूँ। पंचभूतों पर मेरी सेवा की देख रेख करने का दायित्व न्यस्त होकर है।‘ महामंत्री ने चलकर महाराजा से कहा तो वे स्वयं योगीवर से मिलने आए और प्रणिपात करके उनके आगे हाथ जोड़े खड़े रहे।। कहा ‘ योगीराज, आप प्रासाद को चलें, आपके लिए सबकुछ की व्यवस्था हो जाएगी। तो रैक्वने कहा – मेरी कोई चिन्ता नहीं है। जगत्‌बन्धुने स्वयं सब व्यवस्थित कर दिया हैं । पंचभूत मेरी सेवा के लिये नियोजित होकर हैं। पर बाबा , तुम इस ओर आओ , मैं धूप सेंके आनन्द मन से था ओर तुम अन्तराल कर के खड़े हो गये हो। —जैसा कर्तापुरुष कर पाएगा , वह और किसीसे भी हो नहीं पाएगा। कर्ता तुम्हारा मङ्गल विधान करें । उन्हों ने तुम्हें जिस काम में नियोजित कर रखा है , वही तुम्हारा कर्तव्य कर्म है , और महाराजा परितुष्ट होकर योगीराज को नतजानु प्रणाम करके आए...

०००

(आज करोड़ो वर्ष के उपरान्त उन्ही पंचभूतों को हम मानव निश्चन्त आहत,
अक्रान्त प्रदूषित करके ध्वस्त अकुण्ठित करते फिरते हैं। जिससे मानव,
मानवेतर वानस्पतिक जगत आतुर कातर होकर त्राहीत्राही करते असहाय,
विकल है नहीं क्या ? कृपा अकूपार, गुहार सुनें...)

०

सालबेग ।। रसखान

०

भगति भाव के भोले , यवन जात के प्रमत्त प्रमुदित आत्मभोला कवि **सालबेग** और **रसखान** केस्वत:स्फूर्त अलौकिक चाहत और जिद्दी मांग के निवेदन उच्चारण के कारण महिमार्णव हे भगत दास कृपानिधि आपके करुणा–महोदधि उच्छलित उद्‌वेलित है। विचित्र असाधारण असामान्य थी उनकी मेंाग। कहाँ कई योजन दूरसे सालबेग श्रीगुण्डिचा रथयात्रा के अवसर पर गुहार लगायी– '**मणिमा, करुणाकर हे , तुम्हारा दरशन किया नहीं है यह दास**। और कृपाअकूपार है आपने **शरधाबालि** (श्रीक्षेत्र श्रीगाुडिचा मौसी मॉ मन्दिर के समीप एक बालुकापूरित क्षेत्र)में **नन्दीघोष** (रथ)रोककर भक्त की पूतीक्षा करते रहे । भगत कवि सालबेग आए दरशन किया , तब तक । आज युगों के उपरान्त भी शरधाबालि सालबेग की श्रद्धा भगति से मग्न है। तल्लीन हो हे अरूप अणाकार आपकी कृपा करुणा का दिव्य सङ्कीर्तन करके यशोगायन करता है । झांझ, मृदङ्ग घण्ट घण्टा, शङ्ख तूरही के अनाहत नाद से।

(आकुमारी हमाचल परम पावन भारतभूमि की विशाल वृहत्तम सारस्वत मंच है हन्दी राष्ट्रभाषा की मर्यादा वभूषित होने के कारण । भारत भर के विद्वान अन्वेषी पाठक–पाठिकाओं को **रथयात्रा की प्राचीनता** के बारे में अनेकानेक सूचना को अधिकतर स्पष्ट करदेना समीचीन होगा मानकर जहाँ तक मुझे ज्ञात और स्मरण हैं उपस्थापित कर रहा हूँ। अब तो रथयात्रा केवल श्रीक्षेत्र की या उत्कल या भारतकी उत्सव होकर हैं नहीं अब तो वह विश्वभर की आर्न्तजातिक महोत्सव रूपी यात्रा है । प्रभु अणुअणु में विद्यमान, महाशून्यता में परिपूर्ण होकर विराजित हैं। अत: समग्र विश्व को रथयात्रा की प्राचीनता तथा इतिहास की जानकारी होनी चाहिए।

अरूप अव्यक्त असीम अन्तन्त अक्षर, अजन्मा अच्युत, जगतस्रष्टा कर्त्ता पुरुष की

पालक करुणा रुणालय पुरुषोत्तम की श्रीगुण्डिचा , रथयत्रा या घोषयात्रा का शुभारम्भ; तत्त्व तथ्यविद शोधकत्ता गवेषकों के मतानुसार है द्वादश शताब्दी ।

सोहलवीँ सदी में रचित ' **मादळापाँजी** ' में श्रीक्षेत्र में रथयात्रा की वर्णना है। मादळापांजी में श्रीमन्दिर , श्रीजगन्नाथ . गजपति महाराजों के शासन अंकों के विवरण राजगुरुओं के विवरण आराधना विधि के मुक्तिमण्डप सभापण्डितो के सैद्धानिक प्रचलन आदि लिपिबद्ध होकर भविष्य के लिए भी इतिहास सदृश होकर सुरक्षित रखा जाता है। उसी से ज्ञात होता है कि गजपति महाराज **वीर नरसिंहदेव** ने **बाङ्की मुहान** पूतवाकर छः रथों के बदले तीन का प्रचलन करवाया। पहले क्षीणकाय तटिनी जिसे पूतवाया गया उसके दोनों ओर तीनतीन रथों की व्यवस्था की जाती थी। श्रीगुण्डिचा घर से काठ से बना मण्डप था। उसे पत्थर से बनवाया गया । कतिपय अन्य गवेषकों के मतानुसार लाङ्गुळा नरसिंह देव के परवर्त्ती राजा प्रथम भानुदेव (ई.१२६४-१२७८) के समय छः के बदले तीनरथों से रथयात्रा हुई थी। तेरहवां सदी के पहले भी श्रीक्षेत्र में रथयात्रा होती थी , प्रमाण है। स्कन्द पुराण उत्कलखण्ड पुरुषोत्तम महात्म्य में भी रथयात्रा की वर्णना है। ययाती के समय रथायात्र का शुभारम्भ हुआ था , एक और गवेषक शोधकर्त्ता का मत है। तृतीय अनङ्ग भीमदेव

(१२११-१२३८)के समय **बड़देउळ** (श्रीमन्दिर) का निर्माण पूरा हुआ था। उसी स्मृति को उजागर किए रखने के उद्देश्य से श्रीगुण्डिचा मंदिर को महाप्रभु की रथयात्रा उत्तराभिमुखीन हुआ है , कहा जाता हैं। शरधाबाली की मालिनी कृशाङ्गी नदी को पूतवाए जाने की बजह से छर रथों के बदले तीन ही से यात्रा होनेलगी। क्यों कि और नदी के आर पार चलना पड़ा नहीं। १२२३ के परवर्त्ती काल में रथयात्रा का शुभारम्भ हुआ था , यही इतिहासकारों का मत है। प्राप्त सूचना के अनुसार ने अनुसार **सूर्यदेव** की रथयात्रा महोत्सव माघ शुक्ला सप्तमी की शुभतिथि के अवसर पर्ऽनुष्ठित होती है। चैत्र शुक्ला अष्टमी के दिन देवाधिवेव महादेव की रथयात्रा मनायी जाती है। सिंहल श्रीलङ्का में वैशाख शुक्ला एकादशी तथागत बुद्धदेव के दन्त की स्मारक शेभायात्र एक हाथी पर मनायी जाती है । जगन्नाथ की रथयाथा को भी कतिपय गवेषकों के अनुसार बौद्ध अनुष्ठान कहा गया है। बुद्धदेव के जन्मोत्सव पालन की स्मृति रक्षा हेतु रथयात्र अनुष्ठित होती है , यह भी कहा गया है। दारुब्रह्म जगतनाथ की रथयात्रा के संबन्ध में पितामह ब्रह्मा नें इन्दद्युम्न को बताने के प्रसङ्ग में **नीलाद्री महोदय** में उल्लेख है। रथयात्रा किस प्रकार किस विधि से सम्पन्न होगा उस के प्रसङ्ग में ब्रह्मा ने बताया था। , कहा गया है।

भगत भाव में भोले भगतदास है, अपने आपको सोलह सहस्र भागों में अभिन्न हो रखकर किस किस के पास पहुंच कर किन अभावों में भाव भरदोगे! शून्य को परिपूर्णता विमण्डित करके सम्मोहित करोगे ? वही निरत निरन्तर सोचा कर ते हो **नादब्रह्म**! जितनी ब्रज गोप की **गोपाङ्गनाएँ** ,उनके लिए **भक्ति प्रीति** में कोई अन्तर , भेद नहीं था। सबके सङ्ग आप ही आप। और वह गोपिका केवल मात्र सोचे कि लीलाधर मात्र मेरे हैं , किसी और का नहा ! भगत सङ्गीतकार तों तुम्हारी मोहन बांसरी में विराजित निबद्धित **सोलह सहस्र** राग–रागिणियों में उन **प्रीति भगति भोली** ब्रज गोपाङ्गनाओं के साथ एकात्म, अभिन्न करदिया हैं । उस भक्ति का कोई अन्त नहीं ,अनन्त! आदिमहाकवि **बाल्मीकि** के परावतार **गोस्वामी तुलसी दास** ने वही तो कहा है – **हरि अनन्त , हरिकथा अनन्ता !**.....

विनोदविहारी , लीलामय,रससागर, वनमाली, ब्रजराज, श्रीकृष्ण–गुणकीर्तन मूर्च्छित अगणित गीतिकविता के रचनाकार हैं भगत भाव भोला रस खान। शायद **सङ्गीत कार्यालय** हाथरस से संग्रहीत होकर ग्रंथाबली का प्रकाशन हुआ है। उसी प्रकार **मीरायन** शोधपत्रिका राजस्थान चितौड़गड़ से प्रकाशित होकर मोहन की बाँसुरी रानी मीरा की रचनाएँ प्रकाशित होने के साथसाथ उनकी शास्त्रीयता की अन्वेषा गायन धारा और राग–रागिणी आदि निरन्तर होरहा है , उनकी आराधना पीठ है आदि। रस खान वृत्तितः थे मोची, चमार। किन्तु आत्मतः थे श्रीकृष्ण भक्ति के पागल भोला तन्मय सम्मोहित कवि **रसखान**। वे एक दिन बनमाली विपिनविहारी के मंदिर में पहुंचे । भगति भाव भोले कवि का भावान्तर हुआ विग्रह हो देखकर। उन्होंने पूजक महाशय को पालागि कह कर भाव भोले कविने पूछा " प्रभु का जूता है नहीं " ? पूजाहारी ने कहा – 'नहीं ' ! तो रस खान ने फिर पूछा – " तो वे नंगेपाँव बनबन भटकते कैसे हैं? काँटा कङ्कड़ चूभे और घायल हों तो" ? पूजाहारी ने उन्हें मन ही मन निश्चित **पागल** मानकर कुछ कहा नहीं। रस खान चले आए। दो चार दिन के उपरान्त खान साहब एक जोड़ा जरी काम दार सुन्दर जूता लेकर देवल के पावच्छ पर रखकर पूजक से कहा – कहदेंगे ये जूते रसखान ने लाकर दिया है । कहकर गया है । बन को नंगेपाँव चलना नहीं. पहनकर जाना। तो पूजाहारी ने कहा – प्रभु पत्थर विग्रहके रूपमें हैं । पहनेंगें कैसे ? तो खान साहब ने कहा **बिलकुल पहनना होगा**। रसखान कहकर गया है,

तब पूजक ने और कुछ नहीं कहा। भोर ब्राह्म मुहूते में पूजक महोदय जब मङ्गल आरती करने आए तो देखा प्रभु जूता पहनेहुए हैं। पागल की भाँति वे रसखान के समीप दौड़ते आ पहुँचे । और रसखान के आगे मथानत प्रणाम करने लगे तो तन्मय विभोर भगति भाव भोले कविने उन्हें उठाकर बाहों में भरकर कर कहा – यह क्या करते हैं पण्डित जी...मेरी मरजी हुई और माननेवाला मान गया। करने करानेवाला तो वही है। –हमें शुक्रगुजार उसका होना चाहिए....

जब मन हो चङ्गा

रैदास

०

प्रभुजी तुम चन्दन हम पानी
जैसे अँगअँग बास समानी।।
प्रभु जी तुम दीपक हम बाती
प्रभु जी तुम धागा हम मोती।।
प्रभु जी तुम मालिक हम दासा
ऐसी भगति करे रैदासा।।

०

मणिकर्णिका चलने के राह पर **रैदास** का मकान था । जीविका था मोची चमार का। बाहर बरामदे पर जूता तैयार करना , मरम्मत करना उसी से गुजर बसर होजाया करता। किन्तु, जीवन – वह थी सारस्वत स्वतःस्फूर्त पद रचना। भगति भावभोले तन्मय कवि थे रैदास। जूतों के काम के साथसाथ पद–रचना व गायन से वे परितृप्त, आत्म निमज्जित हो जाते थे। एक दिन उन्हें बुखा था भारी ! रोज सुबह गङ्गास्नान को जाकर स्नान कर के एक अधेला गंङ्गा मैया को पाहुर चड़ाया करते थे। वह आज बुखार के कारण मुमकीन नहीं था। आज भी पुरातन, परिणत कुछेक हैं जो गङ्गा स्नान करके अपने साध्यानुसार गङ्गामैया को पाहुर भेंट करके आते हैं । उसदिन रैदास तेज ज्वर हेतु असमर्थ थे , क्या करें चिन्ता करत समय **पण्डत चौवे** जी को स्नानार्थ जाते देख उसी बराबदे पर से पालागी चौवे जी कह

पुकारा तो चौवे पास आए। रैदास ने सर नवॉ कर विनती की मेरा एक काम कर देने की किरपा करेंगे ! चौवे जी ने पूछा – 'कहो क्या काम है रैदास ' ! तो रैदास ने कहा मुझे आज तेज बुखार है पण्डित जी । यह धेला लेजाएँ । माता को अरपित करके कहदेंगे ज्वर हेतु रैदास आ नहीं पाकर मेरे हाथों पाहुर भेंट भेजा है।

पण्डित चौवने वही किया। धेले को पावनी गङ्गामाता को समर्पित करके। तब वे चकित विस्मयाभिभूत होगये जब जल से सुवर्ण नाना रत्नालङ्कार आभूषित एक हाथ काञ्चन मणिरत्न विमण्डित एक दिव्य कङ्कण लिये प्रकटित होने के साथसाथ शून्यवाणी हुई **यह कङ्कण लेकर रैदास को देदेना।** परन्तु , पण्हित जी ने कङ्कण लाकर लोभवश: रैदास से कुछ भी नहीं कहा । निर्लिप्त रैदास ने भी कोई जिज्ञासा नहीं की। पण्डित जी ने वह दिव्य कनक कङ्कण अपने पास रखकर सोचा कि कंङ्कण लेकर दरबार में महाराज को प्रदान करेंगे । महाराज तो उसे समुचित मूल्य न चुकाए स्वीकार करेंगे नहीं ! उसके लिए पर्याप्त मूल्य प्रदान करके उसपर अनमोल बकसीस भी अवश्य प्रदान करेंगे ! उस विचार से एक दिन वे दरबार में उपस्थित हुए। महाराज को जब उन्होंने कंङ्कण की भेंट की तो महाराज मन ही मन सोचने लगे कि महारानी इस अलौकिक कङ्कण देख कर अत्यन्त प्रसन्न , प्रमुदित हो जाएँगी । दरबार में पार्षद सभासदों ने उस अनन्य असाधारण कङ्कण का मूल्य भी आकलित कर नहीं पाया, बोले यह तो अनमोल है । तब महाराज ने पण्डित जी को आशातीत मूल्य प्रदान करने के उपरान्त पुरस्कार स्वरूप भी पर्याप्त धन देकर परितुष्ट करदिया। पण्डित जी आनन्द मनसे महाराज की कल्याण–कामना करके माराजने उस अपूर्व कला–कारिगरी के कनक रत्न कङ्कण को महारानी को दिया तो रानी मुग्ध्चकित हो तो गयी , परन्तु कहा – 'इस एक से क्या होगा ' ! दो हाथों के लिए दो चाहिळ न ? तब महाराजा को वास्तविक स्वाभाविकता का बोध हुआ और उन्होंने उन्हें आश्वस्थ करते से कहा – 'उसके लिए चिन्तित होना नहीं है ! प्रवीण स्वर्णकार को बुलाकर हुबहू एक और तैयार करवा लेंगे। हाँ बस उसके लिए थोड़ा समय जरूर लगेगा '।

प्रवीण धूरीण कुशल स्वर्णकार आए। उन्होंने उस रत्न कङ्गण को विस्मयाभिभूत होकर कहा – 'महामहिम , इस जैसा एक कङ्कण बनाना हमलोंगों से पूर्णतया असम्भव है । लगता है यह कोई देवशिल्पी का काम है। मानवेतर

कारगिरी। क्यों कि इस में जो जो रत्न जटित होकर है , हम अपने जीवनकाल में अभिज्ञ होकर भी कभी देखा नहीं है। आप उन पण्डित महोदय से पूछें , जिनसे यह आप को मिला है । हो सकता है दूसरे के बारे में वे बता पाएँगे। महारानी ने बिलकुल ठीक ही कहा है – दो हाथों के लिए दो अवश्य चाहिए ' !

बुलाए जाने पर चौवे जी ने अपना दोष स्वीकार करके जो जैसा घटित हुआ था उसे आमूलान्त बखानते गये । और नतमस्तक होकर कहा– 'महामहिम ,इस ब्राह्मण को क्षमा करें। मैं अपना अक्षमणीय दोष स्वीकार करके पश्चात्ताप करता हूँ '।

राजाज्ञा लेकर एक दूत रैदास के पास पहुंच कर राजादेश सुनाया तो उदासीन भगत भावभोले रैदास ने कहा – 'मेरा किसी राजा महाराजा दरबार से क्या काम ! महाराज से कहना यदि उनका मेरे पास कोई काम है तो आएँ ' ! जब महाराज पार्षदों को लेकर रैदास के पास पहुंचे , तब भोला भगत कवि अपने उसी बरामदे पर एक जूता तैयार करने में लगे थे और आत्मभोला भगत कोई पद गुनगुनाते भगति महिमा कीर्तन में तन्मय थे।

महाराज को देखकर रैदास ने अभिवादन करके कहा – 'यह मेरा अहोभाग्य है कि आप पधारे। कहें मुझसे आपका क्या काम करूरी है कि आपने पधारने का कष्ट किया ' ?

महाराज ने सब कुछ बताया। उस समय चौवेजी सर नवाँए चुपचाप खड़े थे। रैदास ने कहा जिनका कुछ नहीं होता वे असहाय बेसहारे दहशत भोगे रहते हैं। लोभ न करें तो और क्या करें ? मेरा कुछ नहीं होता कहने का मतलब है पास पर्याप्त होने पर भी परितोष नहीं होता। और और की ललक होती है। और क्या करें वेचारे ? उसके बाद महाराज की ओर ताक कर कहा – ' माँ से मांगलेंगे , उसके पास कोई कमी नहीं है '। महाराज ने सोचा था कि रैदास मणिकर्णिका चलेंगे और उन्हें ले चलने को पालकी लेकर वे आए थे।

रैदास के काम के लिए सामने जो कठौती थी , (कठौती ओड़िआ देशज में – उसे **काठुआती** कहते हैं , जैसा पत्थर थाली कटोरी आदि को **पथुरी**) और उस कठौती में चमड़ा भिगोये हुए है , पानी भरा रखा गया है , उसमें कमर में खोंसा एक धेला उसी पानी में डाल कर कहा – 'माँ , महारानी रानी माॅ के लिए

महाराज को वैसा ही एक कङ्कण दरकार है , जैसा तुमने चौवे जी की हाथों भेजा था। क्या हुआ क्या नहीं यह तुम्हें नमालूम नहीं है । जानती हो। अभावी है वे लोग , माफ करदेना। उसका दूसरा कङ्कण देना। और उस कठौती के जल से रत्नालङ्कार आभूषित हाथ कंकण धरे ऊपर उठ आया। शून्य वाणी हुई, **रैदास, यह कनक कङ्कण ले , महारानी की सौभाग्य कामना करके देदना '।** पार्षदगण अवाक् चकित मौन खड़े रहगये थे। रैदास कङ्कण लेकर महाराज के हाथों महारनी की सौभाग्य कामना करके भेज दिया।

पता नही आज कई अनगिनत काल युगों के गुजरे यह प्रवाद हो रह गया है – **जब मन हो चङ्गा । कठौती में गङ्गा**।। वैसे ही ओड़िआ में **मन निरमल गाड़िआ** गङ्गा।। किस प्रस्में यह प्रवाद प्रचलित हुआ है , इस अधम लेखक को मालूम नहीं है। इसके पृष्ठ पटकर अवश्य ही किसी भक्त भगति भावभोले महापुरुषकी कथा अनुप्रेरक है। मूल है निर्मल आस्था,समर्पित विनीत भक्ति ,ऐश्वर्य प्रदर्शन का अभिनय , नाटक , ढोंग नही !

०००

हिन्दी रूपान्तरण

१०२०२०२३

माँ बले डाकिते जानना

०

भक्ति के विना कोई भी कर्म, आराधना, साधना, तपस्या, उद्यम, निष्ठापर योजना फलवती हो नहीं पाएगी। आरम्भिक अध्यायों में मैंने ब्रजगोपाङ्गनाओं की प्रीति भक्ति को एकात्म, अभिन्न कहा है । भगवतपाद भकति भावभोले **शिरड़ि साई बाबा** की उक्ति ''*श्रद्धा – सबूरी* – श्रद्धा और धैर्य; वे भी तो एकाग्र तन्मय अविचल अभिलाष के आसक्त अनुराग रूप हैं! जिसके उपरान्त जगतकर्त्ता पालक प्रभु के उस इच्छा की पूर्ति कर देने को एक पल भी लगेगा नहीं

मॉ बले डाकिते जानना, यह उक्ति **परमहंस ठाकुर श्रीश्री रामकृष्ण** की है। बचपन में अल्हड़ नटखट, पढ़ाई के अमनयोगी । मन रमाये हुए ग्रामीण गीतिनाट्य में। महापुरुष के जीवन वृत्तान्त के प्रसङ्ग में उनके अनुयायी शिष्यों ने बहुधा प्रज्ञापन किये हैं और **श्रीश्री रामकृष्ण चरितामृत** में अनेकानेक घटनाओं का उपस्थापन किया है। अति सहज सरलता में वेद वेदान्त की निगढ़ जिज्ञासा का समाधान किया है परमहंस ठाकुर ने। सब के मूलाधार है सार्वार्तहारिणी माता की करुणा जिससे उनमें जागरित **भक्ति** और **आस्था विश्वास** जो बलवत्तर होकर है। जीवन में एक तरह वाध्यता में किशोरी शारदा से विवाह करके भी उन्होंने तमाम जीवन उनकी मातृवत् भक्ति स्वरूपिणी उनासना की है। भक्ति, विश्वास तथा निष्ठापरता में जब वे माता के चरणाश्रित होकर आए तब वे माता के लिए नैवेद्य प्रस्तुत करने के लिये सेवायत शूपकार के रूप में नियुक्ति पाकर आए। यही शायद वरदा वत्सला सर्वार्तहारिणी माता की इच्छा थी। अपनी भक्ति के भावभोले भगत पुत्र के प्रति अनन्त करुणा। उसके उपरान्त तो ठाकुर रामकृष्ण माता के लाड़ले बन गये!

मंदिर की रोषशाला में जो नैवेद्य प्रस्तुत होता है वह भीतर ही भीतर अपर दृष्टि के अन्तराल में समर्पण के लिए सेवक पूजक , आकर पूजार्च्चना करके उसी रोषशाला को लेआनेपर उसकी विहित व्यवस्था हुआ करती है। मंदिर में सेवककी व्यवस्था है। (*जिस प्रकार श्रीक्षेत्र श्रीमंदिर आनन्द बाजार, भुवनेश्वर में अनन्त*

बासुदेव के मंदिरों में है। उसके लिए ***सुआर सेवक*** *पण्डा स्वतंत्र नियोजित होकर हैं । वही व्यवस्था कोलकाता में काली के मंन्दिर में नहीं है नहीं मात्र* भक्ति भाव भोले रामकृष्ण को लगा माता को शायद उनका व्यंजन बेस्वाद लगता हो ,जिससे वह ग्रहण करती नहीं और पूजक उसे वैसे ही थाल लौटा लाते हैं। तो वे यहां शूपकार सेवा करके तनखाह लेने का अपराध क्यों करें ? उन्हों ने पण्डा पढ़ियारियों से पूछा – 'माता नैवैद्य ग्रहण करती नहीं है इसलिए आप जिस तरह लेकर गये थे उसी तरह लैटा लाए हैं क्या ? थाल से सामान्य परिमाण में भी कम हुआ नहीं जो ! तो वे शूपकार सेवा करके तनखाह लेने का अपराध क्यों करें ' ! पण्डा पढ़िआरियों से पूछा – ' माँ ने नैवेद्य ग्रहण किया नहीं तब ही आपलोग थाल लौटाए ले आते हैं क्या' ? पूजक सेवायत ने उन्हें एकटक निरख कर समझा कि यह एक अर्द्ध पागल है। विग्रह किस भांति सेवन कर पाएँ! किन्तु ठाकुर ने फिर पूछा –' तोमैं यहां सूपकार की नौकरी क्यों करूँ ? माता से पूछूँगा!' और उसदिन सन्ध्या आरती और बालभोग के उपरान्त मंन्दिर के फाटक बन्द होने के बाद ठाकुर नैवेद्य प्रस्तुत करके करुणामयी माता के समक्ष रात ढले पहुंच कर पूछा – ' मैं नैवेद्य प्रस्तुत करता हूँ और शायद तुम्हे भला लगता नहीं है इसलिए जैसे के तैसे लौटा देती हो! मैं यह चाकरी क्यों करूँ ? बता दे मुझे और मैं चाकरी तजकर चला जाऊँगा। नतुवा करके लायाहूँ , सेवन करले ! मेरे लिए प्रसाद कुछ रखदेना '। मानों ठाकुर ने सुना –' जो लाया है वह अपने हाथों से खिला दे ' ! उस शून्यवाणी सुनकर ठाकुर माता को खिलाने लगे। और आनन्द विभोर सम्मोहन से स्वयं प्रसाद पाकर वहीं माँ के आगे सोगये।

ब्राह्म मुहूर्त्त में मङ्गल आरती के लिए द्वार अर्गल मुक्त करके पूजाहारी सेवायत भीतर पीठ को आए तो देखा ठाकुर सोये हुए हैं । उनके हाथ में नैवेद्य कणिका अछूट है , विगृह ने सेवन करके आचमन किया नहीं है।।

भक्ति, आस्था, विश्वास सर्वोपरि माता का कल्याण करुणामय आशीर्वाद की शक्ति के बल पर यही हुआ कि परमहंस ठाकुर जटिल रहस्यमयी वैदिक जिज्ञासाओं का समाधान अनायास अति सहज सरल रीति से करने में कुछ भी वाधक नहीं था । वह **परमहंस ठाकुर** के लिए कठिन नही था । **आदिशङ्कराचार्य** की तरह **परकाया प्रवेश**, भिन्न रूपमें विद्यमानता आदि अलौकिक घटनाएँ जो परमपूजनीय ठाकुर के जीवनकाल में घटी थीं ,उन्हें उनके समर्पित शिष्यों ने

श्रीश्री रामकृष्ण चरितामृत में विवृत् लिपिबद्ध किये हैं। शिक्षा पर गुरुत्वारोपित करनेवाले विस्मय योगी प्रवीण बोधदर्शीविद्वान **स्वामी विवेकानन्द** परमहंस ठाकुर के परमप्रिय शिष्य के रूपमें विदित हैं। उन्हीके सुचिन्तित अनुप्रेरणा से **श्री रामकृष्ण मिशन** जगतख्यात है और भक्ति ल आराधना विविध अनुशासित कार्यक्रम , अनन्त भारतीय दर्शन की टीका, व्याख्या समीक्षा समेत अगणित अनुष्ठानों की भव्य प्रतिष्ठा हुई है जो आज भा कार्यरत हैं। हमारी प्रान्तीय राजधानी **भुवनेश्वर विवेकानन्द मार्ग** में उसकी विशाल शाखा है। प्रसङ्ग पल्लवित न करके **भक्ति** आधारभूत इस अध्याय के शिरोनामा जिससे मैं अनुप्रेरित हूँ ,उसीका एक उदाहरण प्रस्तुत करना चाहता हूँ । फिरभी , विदग्ध भारतीय दर्शन के निष्ठापर अन्वेणियों से **रामकृष्ण मिशन** कर्त्तृक प्रकाशित हचारों अनुपम अमूल्य ग्रंथ आसक्त अनुराग से संग्रहीत करें, अनुरोध है। प्रणम्य **वङ्किमचन्द्र चट्टोपध्याय** का प्रसिद्ध बङ्गला उपन्यास *आनन्दमठ* भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का वार्त्तावह है। उसीके एक अङ्ग है **बन्देमातरम्** । उसी में भारतमाता को महाकालीरूपिणी चित्रायित करके उससमय अखण्ड भारत की जनसंख्या अविभक्त भारत, सिंहल,वर्मा समेत तीस करोड़ आकलित है। उसीके प्रतिपादन हेतु एक उच्छ्वसित पदान्तर्गत वर्णना है – **त्रिंश कोटी कण्ठ कलकल निनाद कराले / द्वित्रिंश कोटी कर मण्डित खर करवाले । गलवक्ष लंवित मण्डित मुण्डमाले। नमामि तार्णिणिम्, नमामि वारिणीम्, मातम्** । उसके रचयिता प्रातःवन्द्य वङ्किमचन्दजट्टोपाध्याय : उनकी परमहंस ठाकुर रामकृष्ण सहित अन्तरङ्ग मित्रता थी । वीचवीच में वे दर्शन के लिए मंदिर को आया करते और आपाततष एकान्त में उदासीन रहे ठाकुर से मिल कर कुछ समय वीताए जाते थे।

उसदिन साक्षात् करके पूछा – ‘ अच्छा रामकृष्ण , यह तो बता , तुम माँ से जब कुछ करदेने को कहते हो और वह न करे तो तुम रुठ जाते हो । तब माँ तुझे मनाने समझाने आपहुंचती है। मॉ के साथ तेरा क्या संबन्ध है ‘ ?

परमहंस ठाकुर ने उन्हें जबाव में कुछ नहीं कहा ;मुसकुराए , और कुछ समय के बाद पूछा – ‘ अच्छा वङ्किम , यह तेरे साथ कौन है ‘ ? तो वङ्किम ने कहा ‘यह नाती है मेरा !‘ ठाकुर ने फिर कहा ‘मायने यह हुआ कि यह तेरे बेटे या बेटी का पुत्र है ! तेरा नाती । उसके अलावा कुछ और हो सकता है क्या‘ ?

'माँ के साथ मेरा संबन्ध , माँ के व्यतीत कुछ और हो सकता है क्या ?'

'माँ को माँ बले डाकिते जानना , चाओ अनेक किछु !... ...

हमारे लिए यह एक अलौकिक विस्मय कि परमहंस ठाकुर श्रीश्री रामकृष्ण देव ; हमारे

बलाङ्गीर के शक्ति मातृरूपा आराधना .ज्योतिष, कर्मकाण्ड,भविष्य वक्ता बहुभावों में श्रीश्री परमहंस ठाकुर की जीवनधारा से मिलता जुलता प्राथमिक शिक्षा के प्रति अमनयोगी निर्लोभ परम हितैषी **पण्डित अर्जुन होता** के सम्बन्ध में कुछ उपस्थापित करने की इच्छा करता हूँ।

पुण्यश्लोक पण्डित अर्जुन होता

०

अतीत में हमारे मोहल्ले के बासिन्दे थे प्रणम्य होताजी। उस आवास भूमि को भाईभाई के बँटवारे में बेच कर निहायत पास ही भूमि खरीद कर आवास बनवाए। मान्यसे वे थे तो मेरे दादाजी कोसली बोली में दादा , जिसका एक अर्थ है दादा अर्थात बड़े भाई । और उनके घर परिवार में मेरी पहचान उनके सन्तानों में अकपटता में चाचा बन कर वह सम्मान आजतक अटूट है।

उनके उपार्जन तथा परिवार प्रतिपोषण का एकमात्र मार्ग था यजमानी , कर्मकाण्डीय पूजापाठ, चण्डीपाठ। कभी कभार बोला करते थे 'पेट परिवार चलाने को माँ ने तो यह बुरती थमायी है जिस राहपर से चलाएगी चलना ही होगा '। उनकी बात चीत का आधार हमारी मातृभाषा विशुद्ध **कोसलि** । कभी कभार यजमान से कहेंगें (उनकी कोसलि में अन्तरङ्गता हेतु बताना चाहूंगा। आशा है सुधी विद्वान पाठकों को समझने में कोई कठिनायी नहीं होगी- यजमानसे कहेंगे- *मते काणा कहुछु, मोर हाते काणा हेबा। माँके कह* ! । मेरे प्रति उनमें स्नेह आदर हितकामना अनन्त आपार थी। विस्तार करके मैंने पण्डित होताजी के मनोग्राफ सदृश **आलुअर डाक** शिरोनामा से एक ग्रंथ की रचना की है। (प्रकाशक - ॐकार पब्लिकेशन , शकितनगर कटक तथा दिनाङ्क ७.९.१९०३ (७.९ अंग्रेजी तिथि के अनुसार उनकी पावन जन्म तिथि)के दिन **दिव्य पुरुष** शीर्षक से एक स्मारिका का सम्पादन भी किया है । (प्रकाशक - ***आत्मप्रकाशनी दिनाङ्क २६./१०/१०१२)*** शिक्षा केप्रति निस्पृह अमनयोगिता के कारण उनका भाषा और शब्द-विन्यास पर समीचीन अधिकार नहीं था। कभी कभार तो **फल-फुळ**

तक उच्चारण-अशुद्ध रूप में भी लिखलिया करते थे। बलाङ्गीर के संस्कृत टोल में राजपृष्ठपोषकता से ब्राह्मण विद्यार्थियों को नि:शुल्क छात्रावास में टिक कर अन्तेवासी के रूपमें मूल्य दिये विना लघु आहार , भोजन, परिधान पाठ्य पुस्तक तथा पठन के हेतु आवश्यक सामग्रियाँ पाकर भी उसे आधेअधूरे तजकर और और अलग कामों में रमकर चले आये। ताज्जुब , **वस्तर विजय, सुभद्रार्जुन** नाटक लिखे। मंचव्थ होकर मुद्‌ित हुए भी वे नाटक। कविता करी है , चित्रालङ्कृत करवा के दार्शनिक पद-रचना भी की है। राजप्रासाद के श्री रघुनाथ मंदिर के वे पूजक थे। मैं और उनके पुत्र मेरे पर्शुकाका प्रायत: उनके बदले छूट्टियों के दिन पूजा,नैवेद्य समर्पण हेतु जाया करते थे। वैं मैने एक टीन के भारी बक्से में उनके प्रणीत एक सजिल्द कॉपी मे लिपिबद्ध **विश्वामित्र** नाटक देखा है। वह नाटक प्रकाशित हुआ नहीं है , कही विलीन हो विस्मृत हो गया है । एक और **माँ** शीर्षक नाटक भी। **चकाआखि** शीर्षक पद्य रचना श्रीश्री जगदानन्द जगन्नाथ के चरण कमलों में निवेदित दार्शनिक भक्ति की रचना है। चित्रालङ्कृत करवा कर **प्रलाप** के शीर्षक सभी उन्होने कुछ दार्शनिक पदों की रचना की है। दूसरों के साथ मेरे अङ्कित कुछेक रेखाचित्र भी उवमें समावेशित होकर है। मेरे पास संग्रहीत होकर उनकी सभी प्रकाशित पुस्तकें हैं। जो जो रचनाएँ छपी नहीं वे काल-महोदधि डूबे पोत के समान अतल पतित रत्न सदृश हैं। हजारों बरषों के वाद भी तो डूबी रही गच्छित सम्पदा के आविष्कार-विवरण भी तो यह काल जताया करता है ? भगति भाव भोले अर्द्धपागल प्राय महापुरुष पण्डित अर्जुन होता यजमान से वरण लेकर माँ को माँ को अगाह करके कहा करते थे - मै यहां बैठे चण्डीपाठ चाय पान दोक्ता जरद खाकर करने को वाध्य हूं ' । नहीं तो वह आकर देखेगा , सोचेगा , पैसे दिये बाम्हन को और वह खागया। कहेंगे - ' करदेना माँ। ' और समस्या का समाधान हो जाएगा।मैं बलाङ्गीर के प्रतिष्ठित ब्योपारी **श्री अभेराम अग्रवाल** के कोलकाता में डोरा बनियान की फेक्टरी, मालिकाना, और गोदाम को लेकर कोलकाता उच्च न्यायालय में दो बरषों से अधिक हुए मामलात के समाधान के बारे में पण्डित होता के चण्डीपाठ शीर्षक से एक आलेख लिखा था। उसी को लेकर... ...

दिव्य पुरुष स्मारिका में मेरे परमप्रिय भतीजे ज्योतिषाचार्य सुलेखक विद्वान ल कर्मठ सत्यनिष्ठ कल्याणीय विभुलीन (सम्प्रति)**अच्युतानन्द उद्‌गाता** ने **परमहंस ठाकुर** और **पण्डित होता** के जन्म जातक का तुलनात्मक विचार

किया है। आपातत: कोई भेद नहीं है। समान्तराल है। जन्म समय के लग्नभेद हेतु जो स्वाभाविक,फरक होंगे बस उतना ही।

महापुरुष पण्डित होता जो कहाकरते थे यथार्थ तर्क के आधार पर कहा करते थे। जैसे –विशेषत: कन्याओं की मातृपूजा हेतु उपवास का वारण करते थे। मैं पूजा करूंगी और तुम्हारे नैवेद्य ग्रहण करने के पश्चात ही प्रसाद पाऊँगी। वैसा करने पर तुम्हारी अपनी माँ खुश हो जाएगी क्या ? चाहेगी क्या कि तू उपवास कर और मुझे नैवेद्य समर्पण करके वह प्रसाद सेवन कर ?

दादा कहा करते – 'माँ को माँ कहके पुकारना जानजाए तो सब पा जाओगे। उससे कुछ मांगना नहीं। भकुआ बन जाएगा। वह देना चाहती होगी पाँच देने को और तू मांगेगा तीन। जो भी मांगोंगे वह माँ विन सोचे विचारे देगी नहीं। कहेगा – माँ गो , देना बीस रुपये ! थोड़ा शराब पीता , तो थप्पड़ मारेगी न! निर्लोभ परहित रत पण्डित होता कोई उनसे कुछ गुहार करे तो कहते – मोर हाते काणा हेबा ? जो मुझे कहतेहो ? माँ से कहो । जो करेगी वही करेगी। तेरा वरण लेकर दो पैसे ठगलूँ क्यो कर । जो देना है माँ तो दे ही रही है! '

कहने को उनके बारे में बहुत कुछ है।

मैं परम अन्तरङ्ग अप्रमित प्रसिद्धि के अधिकारी अहंशून्य मित्र विभुलीन, हमारे किशोर काल का एकमात्र जीवित बन्धु हूँ। वे हैं प्रज्ञापुरुष **मनोज दास** । ये प्रखर बोधबन्त भावकल्पना के नभश्चुम्वी व्याप्ति में निरत उड़ते प्रज्ञा पुरुष २००२ में समग्र भारतीय साहित्य के क्षेत्र में श्रेष्ठ कृति के रूप में गौरवमय सरस्वती सम्मानालङ्कृत हुए थे। आज वही अप्रतिम उपन्यास **अमृत फल** के अष्टादश संस्करण अप्रेल २०२१ में विद्यापुरी , कटक,कर्तृक प्रकाशित हुआ है। उस समय कुछेक खल मन्तव्य का उत्तर देनेके लिए मैंने एक आलेख की रचना की थी। जनवरी १९९६ में प्रकशित प्रथ संस्कर के निरत परिमार्जन विपुल विकाश संयोजना सम्पादना मनोज बाबू के करते रहे प्रत्येक संस्करण देख कर मुझे यही अनुभव हुआ है । मेरी नेत्रज्योति लौटा लेने की जिद धरे काल अड़े बैठा है। यवकाँच के सहारे जो देखता हूँ देखता हूँ अक्षर जूम करके कर्त्तापुरुष श्यामसखा जो कहे जाते हैं वहीउतार लेताहूँ। उसी बजह से मेरेलिएग्रंथ–मंथन सम्भव नहीं है। मैंने जिस आलेख की रचना की थी वह भर्तृहरि, महारानी सिन्धुमती, जयकान्त, और वह वेश्या को लेकर। (मनोज बाबु ने उस वेश्या का नामकरण किया है

मालविका। यह मूल संस्करण में नहीं है। उसे संयोजित करके कहा है**वेश्यासौ मदनज्वाला रूपेन्धेन-समीरिता कामीर्भियत्र हुयन्ते यौवनानि धनानिच**)। उस आलेख के रचनाकाल में भक्त चूड़ामणि महापुरुष की मुझपर कृपा का स्मरण करता हूँ। पण्डित होता सर्वार्तहारिणी माता **समलेश्वरी** में माता को देखते थे । उनका संवोधन था **भगवती** । परन्तु ,दृष्टि में पाटना की अधिष्ठात्री पाटनेश्वरी भिन्न हैं नहीं । वे कहा करते – 'सभे गुटे बो ,माँ बलि जानले सभे **उओ** करबे ।

मैं जिस ईष्यालु खल मन्तव्य का उत्तर देना चाहता था , मेरे परमात्मीय मित्र मनोज बाबू के समर्थन में; उसमें जिस श्लोक का उद्धार करना चाँहता था उसमें से आंशिक मुझे याद था। किन्तु,मेरे पास चिकिटी अधीश्वर प्रणम्य राधामेहन राजेन्द्र देव प्रणीत **भर्तृहरि सुभाषित** (१९२७ में उत्कल साहित्य प्रेस में पुण्यश्लोक विश्वनाथ कर के द्वारा मुद्रित)उसमें वह श्लोक नही मिलाा

प्रात:वन्द्य पण्डित होता के अनेक सिन्धी मारवाड़ी यजमान थे । कहते ' हे माँ भगवती ये(जे)न बुरती धरेइछे ,पेटरलागि या(जा)हा करुछँ तार मरजी। ये(जे)न बाटे चलाबा चालबाके हेबा।'

उस दिन मैंने पण्डित महोदय को बलााङ्गीर बसस्टाण्ड इलाके के नारायण दास आडूमल दूकान में होते देख कर उनके पास पहुंचा तो उन्होंने पूछा –' केन आड़े बो ' ,तो मैंने कहा – 'तुमसे एक बात पूछने पहुँचा हूँ। एक आलेख लिखना है । उसके लिए एक श्लोक सही याद है नहीं , पाता भी नहीं हूँ। उन्होंने कहा **'पचारमा** '(पूछेंगे)। उसके बाद कुछ समय मौन रहकर कहा – ' झट दरकार अछे नाइँ' ? मैंने हाँ कहा । तब उन्होंने दूकान के तख्ते पर से हिसाब पैड़ और कलम उठाकर मुझे पकड़ाते हुए कहा –**चल** और हम बाहर आगये। वे बाहर **भगवती** समलेश्वरी मंदिर की ओर पूर्वाभिमुख खड़े मुझसे कहा – ' लेख लेख बएला (बोली)– **यन्मे चिन्तयामी मनसा मयी सा विरक्ता ।। साप्यन्य चिन्तति आदि आदि** मैं उन्होंने जो कहा उसे उतारता गया। वे लिखते तो भूल होता भूल होना , निश्चित था। जिस बजहसे उन्होंने मुझे पैड कलम पकड़ा दिये थे । मैंने उन्हें कौनसा श्लोक आवश्यक हैं बताया नहीं था या उन्होंने मुझसे पूछा भी नहीं था। जो कहा उनकी भाषा में – **भगवती बएला** । (भगवती ने कहा)

भक्ति के भाव भोले परमाश्रित महापुरुष पण्डित होता कहा करते थे – *बाबूरे , माँ के माँ बलि जानले से तोर सबु भूलभटका सुधरेइ देबा , माफ करिदेबा ।आर किए अछे माँ के छाड़िदेले जे तोर मन चिन्हबा ? से न एकला लाड़ेगेले तोर कथा के करबारके घिचि हेबा। मॉ टा माँ आए !* प्रणम्य पण्डित होता जो कहा करते थे निर्विकार मातृभाषा **कोसलि** में । मैंने उस कथन का अनुकरण करतेहुए यह कहा है।

मेरे परमप्रियतम आशीर्वादनीय पुत्र प्रतिम बोधदर्शी विद्वान उत्कल विश्वविद्यालय संस्कृत विभागाध्यक्ष **प्रो सुभाषचन्द्र दाश** ने किसी एक ग्रंथ से पाकर सूचना दी है–

नीति शतक /२ –**या चिन्तयामी सततं मयीसा विरक्ता**
सापि अन्यं इच्छति जन अन्य सत्
अस्मत् कृते च परितृप्यति काचिदन्या
धिक्ताम च ताम् च मदनंच
इमांच मांच

(यह सभी ग्रंथ में नहीं है)

पण्डित महानुभाव के सहित अपना संवोधन दादा–भाई का। उन्होंने जोकहा था–

यन्मे चिन्तयामी मनसा मयीसा विरक्ता
साप्यन्नं चन्तिति इच्छति अन्यसत् ।।
अस्मदकृते च परितृप्यति काचदिन्या
धिक्तांच मदनंच इमांच मांच ।। (शायद)

विबुध पाठक समुदाय , प्रमाद गोचर हो तो परिमार्जन करलेंगे। मैंने केवल परम भक्त पण्डित होता की **भक्ति प्लावित माता की मातृरूप में निराजना** और उनके **माता–पुत्र** के अभेदी अकपट संबन्ध की अवतारणा हेतु इस घटना का सुमिरन किया है ।

०००

कवि कुटीर,बलाङ्गीर

भाषान्तरण–२४।२।२०२३

कन्या और वधूरूपा वरदा
भक्तिरूपिणी शबरी

०

देवी आराधना का वर्गीकरण करके सिद्ध साधक चिन्तक तपस्वियों ने **मातृरूपा,कन्यारूपा** और **वधूरूपा** कहा है। प्रत्येक उपासना; वैदिक,तांत्रिक,अघोर, वामाचार आदि आदि जो कोई भी रीति, पद्धति, कामना वासना क्यों न हो मूलत: अन्तरात्मा में **भक्ति** की करुणा के बिना
सिद्ध सफल किसी भी प्रकार हो नहीं पाएगा।

पूर्व अध्याय में परमहंस ठाकुर श्रीश्री रामकृष्ण देव तथा भकति भाव भोला प्रणम्य पण्डित अर्जुन होता की मातृरूपी आराधना के संबन्ध में अपने अधम साध्य क्षमतानुसार यत्किञ्चत कहाहै। परवर्ती महर्षि कात्यायन की प्रगाढ़ भक्ति के निदर्शन स्वरूप कन्यारूपी आराधना के उपस्थापन करने का प्रयास करूँगा।

सिद्ध तेजस्वी महाऋषि की परम एकनिष्ठ **भक्ति** प्रीता , प्रसन्ना, परितुष्टा माता ने दर्शन देकर कहा ‘महर्षि,जो आपकी अभिलाषा है प्रकाश करें उसे मैं अवश्य पूर्ण करूंगी ‘ । और महर्षि ने नतशिर प्रणिपात करके कहा – ‘ भगवती यदि मुझ पर प्रसन्न होकर म;री अभिलाषा पूरी करेंगी , यह आपने स्वीकार अंगीकार किया है , तो माता मेरीकन्या के रूप में अवतरिता होकर मेरे इस आश्रम में अवस्थान करें । ‘ और उनकी प्रार्थना से माता अवतरित हुईं।**कात्यानी** रूपमें। **कात्यायन कन्या** कात्यायनी। इन सब की जड़ में मात्र निर्मल भक्ति ही प्रधान है। वह किसी योग साधना का परिणाम नहीं है। इसके परवर्त्तीपर्या में मैं वधूरूपा आरधना का एक दृष्टान्त उपस्थापित करने का प्रयाव करूँगा।

आदि **शङ्कराचार्य** के स्वधाम प्रत्यावर्त्तन के पश्चात् उनके विपुल संख्यक अनुयायी पुरुषोतमत **श्रीक्षेत्र** में आचार्य शङ्कर कर्तृक प्रतिष्ठित प्रमुख **गोवर्द्धन पीठ** के व्यतीत समग्र पावन भारतवर्ष में चतुर्द्धाम सहित अपर छ धामों की प्रतिष्ठा होगयी । उनके अनुयायी गिरि,.भारती,पुरी.दण्डीस्वामी.

अरण्य,आश्रम,पर्वत.सरस्वती, ,सागर , तीर्थ के रूप में विभाजित होगये। विद्वान भाई **श्री योगीन्द्र पण्डा** याजपुर **विरजा पीठ क्षेत्र** के अन्यतम प्रमुख उपदेष्टा सदस्य हैं। उनके साथ मिलकर हमने पुरी के महामहिम शङ्कराचार्य की भूमिका, दारु चयन आदि अनेक पुस्तिकाओं की रचना की थी। ओड़िआ और हिन्दी में । गोचरार्थे गोवर्द्धन पीठ में महामहिम **शङ्कराचार्य श्रीश्री निश्चलानन्द सरस्वती** को समर्पित किया था। मेरे परमतत्वदर्शी मित्र विभुलीन **आचार्य डॉक्टर विद्यानिवास मिश्र** के वे सहाध्यायी मित्र हैं। पुण्यश्लोक **आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी** के छात्र। उन पुस्तकों की प्रतिलिपि हैं । कोई मित्र इच्छुक हों तो
योगायोग करें ,अनुरोध है। में मूल पुस्तिका नहीं जेरोक्स प्रतिलिपि निःशुल्क प्रदान करूंगा। मैं अपनी इस पुस्तक की रचना केवल **भक्ति कैन्द्रक** करने की इच्छे की है अत:बहु अन्य प्रसङ्गों के समावेश से भाराक्रान्त नकरते हुए पल्लवित करूंगा नहीं।

मुझे ज्येष्ठभ्राता माननेवाला आयुर्वेद, ज्योतिष, तंत्राराधना आदि के धूरीण सिद्धपुरुष योगीन्द्र का कोई भी फोन लगता नहीं है । भुवनेश्वर में बहन के आवास के विचार से योगीन्द्र बराबर आताजाता था मेरी कल्याणीया **बहन आह्लादिनी** को भी अपनी सहोदरा के समान स्नेहादर करते कभी भी खाली हाथ पहुंचता नहीं था। अब आता नहीं है।... ...

हाँ , कह रहा था, आदि शङ्कराचार्यकी देहरक्षा करके स्वधाम प्रत्यावर्तित होने के उपरान्त उनके अनुयायी विपुल समुदाय दस भागों में विभाजित हो गये – यथा **गिरि, पुरी, भारती, दण्डीव्वामी , तीर्थ, सरस्वती,अरण्य ,आश्रम, पर्वत** और **सागर**

भारती माता शारदा सरस्वती के अवतार के रूप में विदित हैं। प्रख्यात तार्किक पण्डित **मण्डन मिश्र** की वे पत्नी के रूपमें अवतरित हुईथीं। आचार्य के साथ पति के शास्त्रार्थ करते समय वे निर्णायिका थीं। पण्डित मिश्र के अपनी पराजय स्वीकार करने के उपरान्त भारती ने कहा – मैं उनकी अर्द्धांगिनी हूँ जबतक मैंने पराजय स्वीकारा नहीं है ,मेरे पति पराजित विवेचित किस भांति होंगे। आप मुझे भी पराजित करें और वे **कामशास्त्र** से , क्यों कि कामशास्त्र भी एक शास्त्र है , प्रश्न करने लगीं। माता की निगूढ़ जिज्ञासा का समाधान न करपाने से आचार्य ने माता से एक माह समय देने की प्रार्थना की। और विलासी महाराज

अमरू के शव में काया प्रवेश करके **अमरूशतक** की रचना की। आकर माता को पोथी देते हुए कहा- माता , हम माता-पुत्र हैं। इसलिये मैं तुम्हें समझा नहीं पाऊँगा। तुम तुम्हारी प्रत्येक जिज्ञासा का समाधान इस पोथी में से प्रापत हो पाएगी। प्रार्थना है आप मेरी परीक्षा न लेकर मुझे मातास्वरूप विद्यादान करें। संक्षेपमें यह अकिंचन अधम लेखक इतना ही कह पाएगा।

मैं **वधूरूपा** आराधना के प्रसङ्ग में अनाविल चरम **भक्ति** आश्रित **ब्रह्मानन्द गिरि** के उपाख्यान दृष्टान्तस्वरूप प्रस्तुत करने की इच्छा करताहूँ । **गिरि** सम्प्रदाय के सिद्ध साधक कवि थे **ब्रह्मानन्द गिरि**। प्रगाढ़ भक्ति के अविचल एकाग्र तन्मय निवेदन से गिरीन्द्र तनया जगज्जननी **उमा** को प्रसन्न करने पर जब माता ने दर्शन दिया और पूछा ' मैं प्रसन्न हूँ आप की जो भी कामना
है प्रकाश करें मैं अवश्य पूरा करूंगी '। तब ब्रह्मानन्द गिरि ने कहा - **ब्रह्मानन्द गिरि गीरीन्द्रतनया वक्राम्वुज बांछितम्** । तो स्मित हसित माता ने अभय मुद्रा में करोत्तलित करके कहा - **तथास्तु** ।

पतितपावनी माता गङ्गा की एक शाखा नदी के पार्श्व में ब्रह्मानन्द आश्रम था। जनपद में भिक्षाटन से जो भी मिला उस ही से आश्रम पोषण अनुशासन की रीति थी। उस दिन जनपद से लौटते लौटते देर होगयी थी अतः केवट घाट छोड़ कर बीच नदी तक पहुंच चुका था । ब्रह्नानन्द के लिये कोई चारा और नहीं था। किन्तु, तब आचार्य ब्रह्मानन्द ने देखा घाट से अनति दूर एक नाव है , और कोई एक नाव पर है । और वे आगे बढ़े आए। नाव पर अपूर्व लावण्यवती जो थीं वे स्मितहासिनी ललित कंठ से आवृत्तिकरने लगी **ब्रह्मानन्दगिरि गिरीन्द्रतनया वक्राम्बुज बाञ्छतम्** । तत्पश्चात् पुलकाभिभूत ब्रह्मानन्द तट-बालुका पर संज्ञाहीन होगये। जब होश आया तब उन्होंने अपने को अपने ही शयनकक्ष में देखा । समय था अरुणोदय का प्राक्काल ब्राह्म मुहूर्त...

सब की मूलाधार है प्रगाढ़ तन्मय *भक्ति*। वह कोई साधना तपस्या नहीं है। है माता की अपार करुणा। जगत्कर्ता पालक अरूप अनाकार, निराकार. अक्षर, अव्यय पुरुष ही किसी शुद्धात्मा पर कृपा करके किसी महत् सत्य की प्रतिष्ठा हेतु कर्मतत्पर करते हैं और परम पावन भारत भूमि में परम भक्त **ध्रुव** के समान शतसहस्राधिक प्रशान्त नभमण्डल में देदीप्यमान हो विद्यमान हैं। अरक्षरक्षक संत महापुरुष **अरक्षित दास** भक्ति की अमाप सिद्धि प्राप्त होकर भी और और के

अभाव भाव से महीमण्डल गीता में प्रभु मुझे भक्ति प्रदान करें गुहारते रहते हैं। क्यों कि , उन अभिभूत सम्मोहित आत्मा को अरूप निराकार भक्ति गोचर है नहीं। वह नहीं ... सब है **भक्ति , भक्ति ही केवलम्**...

वैष्णव सिद्धाचार्यों ने भक्ति की विवेचना **नवधा** की है। वह है – दास्य, सख्य, आत्मनिवेदन, वन्दन, अर्चन. स्मरण , पदसेवा, कीर्तन और श्रवण । सब की आधार भूमि में वही भगति भाव भोला तन्मय आस्था विश्वास परम काम्य है।

इसके उपरान्त भक्ति के प्रतीक तपस्वनी शबरी के प्रसङ्ग में मेरी मानवीय अबोध क्षमता की सीमा में कुछ अभिव्यक्त करने की अभिलाषा है मेरी।

शबरी शबर राजपुत्री थीं। केवलमात्र कर्तृत्व के विचार से एक शक्तिशाली गोष्ठी–प्रमुख बनबासी दलपति के एक भ्रष्ट विपथगामी क्रूर उद्धत पुत्र के साथ परिणय सूत्र से कन्यादान करने का विचार **शबरी के पिता** ने कियाथा । शबरी ने प्रतिवाद किया । अस्वीकार किया। मात्र उनके पिता के नकारने और एक प्रकार उन्हें वाध्य करने के कारण शबरी गृहृयाग पूर्वक पलायन करके अनतिदूर स्थित सिद्ध तपस्वी वाक्सिद्ध त्रिकालदर्शी साधक **भक्ति** के परमाश्रित तेजस्वी महर्षि मतङ्ग की शरणरश्रिता होकर आश्रय की भिक्षा की। सब सुन कर शबरी के प्रति होते अत्याचार अन्याय का हृद्बोध किया , महर्षि ने। परन्तु कहा – ' मैं तुमसे विवाह करके पत्नीस्वरूप स्वीकार न करने तक इस आश्रम में आश्रय दे नहीं पाऊँगा । हम विवाह करेंगे किन्तु **सदाकाल ब्रह्मचर्य** ब्रत पालन करके रहेगे। तुम यदि स्वीकार करती हो तो सबकुछ व्यवस्थित हो जाएगा। अन्तरात्मा में भक्तिपूता तपस्विनी शबरी ने अङ्गीकार किया और महामुनि ने अग्न्याधान करके पाणिग्रहण करलिया। शबरी के पिताकुल और अपरसमुदाय के किसीने भी तेजस्वी वाकसिद्ध त्रिकालज्ञ महामुनि के विरोध करने का साहस तक कर नहीं पाए एवं ब्रह्मचारी मुनि तपस्व तपस्विनी पति–पत्नी ने आश्रम के समस्त अनुशासन विधि रीति पालनपुर्वक कालातिपात करने लगे।

कुछ काल तक आराधना, यज्ञानुष्ठान, अन्तेवासियों की शिक्षा, साधना आदि सम्पन्न करते रहे । एक दिन प्रात:काल सर्वज्ञ महामुनि ने शबरी से कहा – 'हर बात की अवधि पूव; निर्द्धारित होकर होती है , अब मेरी देहरक्षा का समय उपस्थित होगया है। तब शबरी से उत्तर दिया ृ मैं आपकी अर्द्धाङ्गिनी हूं , अत: मैं

सहगमन करूँगी ' । तब मुनिने कहा – 'नहीं , वह हो नहीं पाएगा। क्यों कि तुम्हारा कर्त्तव्य कर्म सम्पूर्ण हुआ नहीँ है । तुम आश्रम में उपस्थित नरहोगी तो भविष्य में निरूपित अवसर पर जब सानुज लक्ष्मण प्रभु श्रीराम की स्वागत अभ्यर्थना हो नहीं पाएगी। उसी बजह से तुम्हें आश्रम में उस सुवर्ण प्रभात की तपस्यावत् प्रतीक्षा करनी होगी।

विनीता शबरी से जिज्ञासा की –' मुझे कैसे पता चलेगा कि आज प्रभु पदार्पण करेंगे ' ? महामुनि ने कहा –' वह होगा ग्रीष्म काल। किन्तु प्राक्भाषसदृश समस्त अरण्य प्रदेश वसन्तायित हो जाएगा। उसदिन अपनी अपहृता पत्नी की अन्वेषा में शोक कातर प्रभु इस आश्रम में उपस्थित होंगे। यहां तुम नहोगी यदि अतिथि पुरुषोत्तम प्रभु सानुज लक्ष्मण की स्वागत–सत्कार–समुचित अभ्यर्थना हो नहीं पाएगी।

वह है धरित्री की तपस्या। स्नेहास्पदा कल्वाणीया बहन सत् कवयत्री **प्रतिभा शतपथी** की सार्थक कविता **शबरी** का दिन्दी काव्यान्तरण मैंने किया है और परमात्मीय मित्र **आचार्य डॉ.विस्यानिवास मिश्र** ने उसकी उपोद्घात की रचना की है। सङ्कलन का द्वितीय संस्करण भुवनेश्वर *विश्वमुक्ति* (**शशङ्क चूड़ामणि**)कर्तृक प्रकाशित हुआ है। परम सुहृद विभुलीन आचार्यजी ने शबरी की उस तपस्या को मोक्ष प्राप्ति हेतु धरित्री की प्रगाढ़ आत्मलीन तपसमाधि कहा है। शबरी के हिन्दी काव्यन्तरण (प्रथम संस्करण) अपनी रचना के ओन्तम पर्याय में **जमीर** शब्द का प्रयोग किया था किन्तु द्वितीय संस्करण में अर्धज्ञ प्रमाद परिमार्जक ने **जमीन** कर दिया है। जमीर का अर्थ है आत्मा , (अन्तःकरण, मर्म) वह उस क्षेत्र में अर्थमय था। विद्वान पाठक मित्र शबरी का द्वितीय संस्करण यदि देखें तो उसे कृपया सुधार लेंगे, अनुरोध है।

वह था ग्रीष्म काल। अकष्मात शबरी ने रोमांचिता हो अनुभव किया कमल पूरित सरोवर अली आकुलित इन्दीवर रक्त कमल और समग्र अरण्य प्रदेश **वसन्तायित** हो उठा है। श्यामल सुकुमार तरुलता चूत मंजरी और रक्त पलाश से भाराक्रान्त है। अर्थात् आज वह शुभ लग्न है जिस दिन प्रभु आश्रम में पदार्पण करेंगे। आतिथेयता हेतु ;विस्मय कि अशेष अन्वेषण के बावजूद प्रभु को परोष देने के लिए कुछ भी सुस्वादु फल पाये नहीं , कुछ के व्यतीत, जब कि वसन्त काल में अरण्य विविध फलों से परिपूर्ण रहता है। वाध्य हो शबरी जितना मिला उतना

बेर और कुछ कमल पत्र, कुछ कमल इन्दीवर पुष्प ले आकर आश्रम में प्रभु के पथ अनुसरित हो एकाग्र प्रतीक्षालीन होगयी। यथासमय सानुज कमल नयन श्रीराम ने आश्रमद्वार के सम्मुख पदार्पण किया। शबरी आश्रमद्वार उन्मुक्त कर के प्रभु तथा लक्षण के पदप्रख्यालित करके साष्टाङ्ग प्रणिपात करके स्वगत कर लेआयीं और कुशासन बिछा कर आसन ग्रहण करने की प्रार्थना की और दोनों भाइयों को कमल पत्रों में बेर फल परोस दिया। किन्तु जब एक फल उसमें से प्रभुने उठाया तो उन्हें वारण करते हुए स्वयं लेकर चख कर खट्टा मीठा छाँट कर मीठा ही प्रभु को देनेलगी और भावग्राही प्रभु मुसकुरा कर उसे सानन्द साग्रह स्वीकार करते समय लक्ष्मण मन ही मन क्षुब्ध होकर भी प्रतिवाद कर नहीं पाते थे। शबरी, उनके बेर चखकर देनेके कारण वह उच्छिष्य होगया ; सोच भी नहीं पाती थी । वरन वह मीठा मीठा ही प्रभु को खिला रही हैं सोच कर प्रसन्न परितुष्ट थीं । अनन्द प्रमुदित थीं । और भावग्राही, **वस्तु** नहीं **भाव** के तन्मय निवेदन स्वरूप नैवेद्य स्वीकार करते हुए अनुकम्पा के वरद नेत्र से **भकति भाव भोली शबरी** को **मोक्ष** प्रदान करने की कृपा की तथा **महामुनि मतङ्ग** की सख्य सन्निधि प्रदान करने के हेतु स्वयं भक्त वत्सल आनन्द मोहित हुए जा रहे थे।

श्रीराम लक्ष्मण के आश्रम में स्वल्प काल की विद्यमानता की अवधि में शबरी ने प्रभु से कहा – मैं कुछ आश्रम संलग्न प्रदेशों की स्थिति के सबन्ध में जानती हूँ । मेरे पति सर्वद्रष्टा महामुनि की कृपा से यह भी जानती हूँ कि माता की खोज निश्चित रूप से होगी । आप इसके उपरान्त **किष्किन्ध्या** यात्रा करें । **बली** के द्वारा विताड़ित सुग्रीव से मित्रता होगी और वानरसेना दशदिशाओं में प्रेरित होकर माता की खोज करलेन में सफल होंगे।

सब कीआधारभूमि वही **भक्ति**। आदि महाकाव्य रामायण का भविष्य आख्यान है। धरित्री की प्रगाढ़ तपस्या सदृश **शबरी** की मोक्षप्राप्ति, स्वधाम प्रत्यावर्त्तन, महामुनि की सन्निधि में एकात्म अभिन्नता। प्रभु श्रीराम की महाराज सुग्रीव सहित मित्रता, अतुलित बलधाम मारुति नन्दन **भक्तशिरोमणि** के **दास्य भाव भक्ति** ही का निदर्शन है , है एक समर्पित भक्ति गाथा ... ... आदि आदि...

०००

२८.३.२०२३

रामेश्वर

०

आत्म समर्पित तन्मय भक्त लङ्केश

०

जगत्कर्ता पालक लीलाविहारी के निर्देश से **भक्त चूड़ामणि** अञ्जना तनय को आमंत्रित कर लाने के लिए महाबली **भीम सुदर्शन** तथा **गरुड़** के चलने का रोचक आख्यान की अवतारणा करूँगा नहीं । अनुरोध है मेरे प्रिय वाचिका-वाचक वर्ग व्यासकृत मूल महाभारत की **उतकलीय अनूसर्जना शूद्रमुनि शारळा दास** की अभिनव अप्रतिम कृति महाभारत से अपनी जिज्ञासा-समाधान करेंगे। भावानन्द विभोर अवश्य होंगे , यह मेरी आस्था व विश्वास है।

मारुति नन्दन को सर्वनियन्ता प्रभु ने रथध्वज पर विद्यमान हो कर रहने को कहा। उसके पश्चात ही वह रथ **कपिध्वज** कहालाया। फलस्वरून समग्र रथ के समक्ष उनके स्वयं पार्थ-सारथि बने रहने के कारण और कोई भी शस्त्रास्त्र उहें भेद कर पार्थ को आहत करनहीं पाएगा तथा मारुति नन्दन के आशीर्वाद प्राप्त हुए रहने से रथ की विघ्न-वाधा दूरीभूत होकर सुरक्षित संरक्षित रहेगा।

किन्तु, महाबली द्वितीय पाण्डव ने सोच लिया कि ज्येष्ठभ्राता ने हो सकता है इच्छा की इच्छा की हो कि युद्ध न करके रथ पर विद्यमान रहेंगें। जिसकी बजह से सर्व विधायक प्रभुने उसे स्वीकार कर लिया हो ।

रणाङ्गण धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र में समस्त कौरव-पाण्डव सेना समवेत हुए। दोनों ओर से शङ्खनाद हुआ नहीं था । महाबली भीम की उत्कण्ठानुभव करके केशरीनन्दन ने उनसे पूछा- 'भाई , तुम्हारे दोनों पक्ष की रथी, महारथी,सारथी आदि की समुदाय संख्या में कितनी है ' ? भीम ने उत्साहित होकरकहा - - 'अठारह अक्ष्योहिणी ' । तब हनुमान ने मुसकुराकर कहा -' जानते हो , लंकाधिपति अन्तिम युद्ध में जिस प्रकार प्रस्तुत हो कर आये थे , केवल वाद्यकार थे अठारह अक्ष्योहिणी।। उस समय भी विस्मय चकित विस्फारित नेत्र से महाबली भीम

ज्येष्ठभ्राता को अवाक् देखते रहे त्रे। अलक्ष ही हनुमान ने प्रकाशित करदिया कि प्रभु ने तो इस युद्ध समाप्ति अठारह दिनों में करेंगे, तय किया है। उस पर वे स्वयं अस्त्रधारण करेंगे नहीं । और पता है तुम्हें लङ्का में समर था चौदह माह का। उसी रामावतार में रणक्षेत्र में कृपानिधि ने विभीषण से कहा – 'लंकेश , लगता है आज तो समर स्थगित रहेगा '। तब विभीषण ने कहा – ' क्यों प्रभु '! प्रभु ने कहा – 'देखते नहीं, दक्षिण आकाश किस प्रकार गहन मेघाच्छन्न होने लगा है । प्रवल बिजली चमकने लगी है बारंबार और घोर बज्रनादसदृश बादलों की प्रचण्ड गरजना से आकाश पवन प्रकम्पित हो रहा है बारंबार। युद्ध की नीति नियम के अनुसार प्रतिकुल मौसम के कारण ,सोचता हूँ यह युद्ध स्थगित रहेगा '।

मथानत हो विभीषण से विनीत कण्ठ से कहा – ' प्रभु, आज मैं भी सम्राट् की विपुल अपूर्व समर सज्जा देखकर विस्मित हूँ । दक्षिण से आनेवाली विराटकाय राक्षस सेना लगता है मानों घनघोर वर्षणोन्मुख बादलों से परिपूर्ण होने लगा है आकाश । बीच बीच में छँटकर आती अरुण रश्मि रथध्वज, अश्व हस्तीध्वज नायकों के दण्डध्वज आदि की स्वर्ण मण्डनी पर प्रतिफलित होकर बिजली की चमक की भांति प्रतीत हो रही है। और प्रखर वीरवाद्य नाद करके अग्रसरित होते अठारहअक्ष्योहिणी वादकों के वाद्यनाद बज्रघोष मेघ गर्जना के समान लग रही है '। **आदि महाकवि वाल्मीकि** ने जो कहा है , जहाँतक मैं स्मरण कर रहा हूँ ,वह है- **शशीकराम्भोधरमत्त कुंञ्जरः । स्तड़ितपताकोऽशनिशब्द मर्दळः**।।..आदि आदि जिसे **महाकवि कालीदास** ने अपनी रचना **ऋतुसंहार वर्षावर्णनम्** में किया है ।

मैं **भक्ति** की महिमा–कीर्तन–अभिलाष से इस आलेख की रचना अपनी मानवीय क्षमता की सीमा में निरूपित क्षीणकाय परिसर मे करना चाहता हूँ मेरे कर्ता पालक **श्यामसखा** और उनकी मुखपत्रिका; माता भाषा–भारती शारदा सरस्वती कृपा करें , प्रार्थना है ।

तत्पश्चात् एकादश रुद्रावतार अञ्जना गर्भसम्भूत भक्त शिरोमणि हनुमान ने भीमसेन समझाते कहा – 'भाई , महामना लङ्कपति की प्रगाढ भक्ति और शक्ति जो है उससे आज समुदाय कौरव–पाण्डव सेना के सम्मुखीन अकेले ही होना एक सामान्य–सी बात है। और हम त्रेतया कृपाअकूपार प्रभु के श्रीरामावतार में उनके

विरुद्ध वर्षाधिक काल हमने युद्ध किया है। महामना ,लङ्केश के प्रसङ्ग में प्रसिद्ध पुराणादि महाकाव्यविद् दार्शनिक औपन्यासिक प्रणम्य**आचार्य चतूरसेन शास्त्री** ने आपाततः एकसहस्र पृष्ठ उपन्यास **वयं रक्षामः** की रचना की है। मैंने ओड़िआ में भाषान्तरित किया है (प्रकाशक –ॐकार पब्लिकेशन– शक्ति नगर कटक)आज भी श्रीलङ्का में कुछेक प्राचीन मन्दिर हैं जिनमें आराध्य हैं रावण। उनके अतिरेक कतिपय स्मारक भी हैं। मैं इस अध्याय में भकति भाव भोला रावण के एक आख्यान प्रसङ्ग उपस्थापन करने की इच्छा की है। जैसी श्यामसखा चाहें।

नृत्य सङ्गीत वाद्य वादन प्रवीण अनवद्य सारस्वत सर्जदाकार रामेश्वर आत्मनिमग्न तन्मय भक्त सर्व शस्त्र शास्त्र के धूरीण प्रवीण विशारद लङ्गेश रावण अद्वितीय हैं। रामेश्वर अर्थात् **रामस्य ईश्वर यः सः रामेश्वर** तथा **राम ईश्वर यस्य सः रामेश्वर** । देवाधिदेव महादेव और पुरुषोत्तम श्रीराम दोनों परस्पर के आराध्य हैं और भक्त भी। महामना लङ्केश उन्ही रामेश्वर के परम भक्त थे। भकति भाव भोला मनस्वी सिद्ध तपस्व। जनभाषा **श्रीरामचरित मानस गोस्वामी तुलसीदास** की **कोसलि** भाषावर्ग की जनभाषा **अवधि** की रचना है । रचना की अन्तरात्मा है **भक्ति** । रामकथा आधारित भक्ति के तन्मय प्रवाह–प्लावित **भक्ति** का महाकाव्य । महामना लङ्केश के प्रति समर्पित भकित के बहुतर आख्यान उपाख्यान उस महाकाव्य में गोस्वामी न प्रज्ञापित किया है। अनन्त भक्ति के भाव–प्रकाश करने लिए अनेक अभाव –अनुभव करके अदिकवि वाल्मीकि के परावतार स्वरूप विदित गोस्वामी ने स्वयं को आश्वसित करते हुए कहा है – ***प्रभु अनन्त प्रभु कथा अनन्ता*** ।

मैं उनमें से मात्र एक ही उपाख्यान भक्ति के चरम निदर्शनस्वरूप उपस्थापित करूंगा। यह उन्ही वत्सल अभयदाता प्रभु **रामेश्वर** की इच्छा है।

एक दिन भक्ति सम्मोहित **महामना लङ्केश** कैलाश शिखर पर उपस्थित होकर **देवाधिदेव महादेव** और माता करुणामयी **नगाधिराज तनया** को साष्टाङ्ग प्रणिपात करके कहा – ' प्रभु, आपका इस एकान्त श्मशान में अहर्निश ऋतुओं की प्रताड़ना सहन करते हुए मुक्ताकाश तले निरन्तर निवास मुझे बिलकुल भाता नहीं है। आप निखिल विश्व के अधीश्वर हैं ,यह दीनभाव क्यों कर ' ? अन्तर्यामी ने रावण की भावना हृद्बोध करते हुए पूछा – ' तुम्हारी क्या इच्छा है ' ? तन्मय

भक्ति समर्प्ति रावण ने कहा – ' प्रभु , मैं आप लोगोंर्के लिए प्रत्येक दिशा से परिपूर्ण एक सुवर्ण पुरी का निर्माण करना चाहता हूँ । उसके लिए आप से अनुमति लेने की कामना से आया हूँ , मुझ पर कृपा करें ' । द्रहसित प्रभुने कहा 'ठीकहै जो तुम्हारी इच्छा ' । भक्त की अभिलाषा का वाधक होना भी तों चाहते नहीं है वे ' ? प्रभु से अनुमति प्राप्त हो प्रसन्न प्रमुदित मन से महामना रावण ने मन ही मन चिन्ता करने लगे – ' उस सुवर्ण पुरी के निर्माण के लिए जितनी सुवर्ण की आवश्यकता है वह उसे कहां से पाप्त हो सकते हैं ' ! तब अनुमान करके सोचा कि **भ्राता कुबेर** के कोषागार में पर्याप्त सुवर्ण है । उनसे ऋण के सूत्र से याजना की जाए विचार करके कुबेर पुरी पहुंच कर भ्राता से भेंट करके अनुरोध किया। तो कुबेर ने कहा – 'भाई, तुम जितना सुवर्ण चाहते हो , उससे भी कहीं अधिक परिमाण से कोषागार मैं है परन्तु मैं तो केवल मात्र रक्षक हूँ । अधिकार हूँ नहीं। रत्नाकर दुहिता माता महालक्ष्मी जब तक अनुमोदित न करें मैं उसमें से रत्तिभर भी किसीको दे नहीं सकता ' । उस उत्तर से क्षुब्द होकर प्रवल पराक्रमी रावण आक्रमण करके कुबेर पुरी पर विजय प्राप्त होकर प्राप्त करलेना एक अति सामान्य बात है। किन्तु रावण ने वह किया नहीं क्यों कि सुवर्ण एक महत् पावन कार्य के उद्दीष्ट था।

विचित्र अलौकिक सङ्गीतकार गायक और कोई उपाय न पाकर मंत्रसिद्ध गायन से हिमाद्री के शिलाखण्डों को सुयर्ण में रूपान्तरित करके **श्वशुर माया स्थपति शिल्पी मयासुर** के कर के कला–कौशल, दक्ष कारीगरी से समग्र पुरी के भव्य निर्माण होजाने के उपरान्त उसे आराध्य को समर्पिरत करदेने के लिए उपस्थित हुए । देवाधिदेव प्रसन्न हुए – कहा – 'रावश तुम ब्राह्मण हो । अद्वितीय कर्मकाण्ड के मर्मज्ञ धूरीण विद्वान । मैं तुम्हें पुरोहित के रूप में वरण करता हूँ । तुम यथायिधि पुरी की प्रतिष्ठा कर्म का सम्पादन करो ,तो निष्ठापर पुरोहित रावण और भी उल्लसित होकर प्रतिष्ठा कर्म निर्वाह करने के बाद प्रभू ने कहा – 'हे पुरोहित मैं आपको पौरहित्य की दक्षिणास्वरूप यह पुरी अर्पण करता हूँ और जलदान करके शून्य ब्रह्म को प्रणाम किवा !

कर्मकाण्ड के धूरीण नैष्ठिक विद्वान को यै भी ज्ञात था कि पुरोहित यदि दक्षिणा स्वीकार न करें तो यजमान का अनुष्ठान निष्फल होजाता है .और उन्होंने वाध्य होकर अपनी दक्षता की अनुरूप स्वेच्छा प्रदत्त **दक्षिणा** स्वीकार किया था।

अब अपने भक्त चूड़ामटि महामना रावण से प्रभुने कहा –' लङ्कपति , मैं तुम्हारी प्रगा भक्ति मोहित होकर सदा रहता हूँ और तुम्हारी और कोई अभिलाषा है तो मांग लो । हम शान्ति सुख भोगे निवास करते हैं । मैं निखिल विश्व की सर्जना और विनाश कर सकता हूँ । मात्र वह अहेतुक नहीं है ' ।

महामना लङ्केश ने करबद्ध प्रणाम करके कहा ' प्रभु , मुझे और कुछ नहीं चाहिए। आपकी करूणा के व्यतीत। महिमार्णव आप स्वयं आकर मेरे पूजापीठ पर आराधना स्वीकार करेंगे । वचन दें' । और प्रभु ने अभयदान करके कहा **तथास्तु**।

प्रासङ्गिक एक और आख्यान है । एक दिन देवाधिदेव महादेव के रूप में उनकी जगह **प्रभु श्रीराम** निराजना स्वीकार करने पदार्पण किया था। किन्तु **सर्वज्ञ रावण** को वह गोचर होगया और महामना ने मथानत प्रणिपात करके कहा – 'लीलामय मैं मोक्ष चाहता हूँ। यह प्रभु आप को अगोचर नहीं है ' ।......आदिआदि

परम भक्त सच्चरित्र **सर्वशक्तिमान लङ्केश** ने दक्षिणास्वरूप प्रभु प्रदत्त **सम्पूर्ण लङ्कापुरी** उत्तोलित करके ले आए थे और पुन: प्रतिष्ठा की थी । वह है स्वर्णमयी लङ्का।

लङ्का में अपना सभी कर्तव्य कर्म सम्पादन करने के पश्चात चौदह वर्ष जब अन्त होने आया तो जगत्पति अपनी इस अवतार की जन्मभूमि को लौट आने को आतुर होकर भ्राता लक्ष्मण से कहा –**अपि स्वर्णमयी लङ्का न मे रोचते लक्ष्मण।**

जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।।

यह उक्ति जननी और जन्मभूमि के प्रति ममता जागरित करने की एक शाश्वत प्रेरणा है। **महाकवि प्रणम्य गङ्गाधर** ने अपने मौलिक ढङ्ग से उसीके साथसाथ **मातृभाषा** को गौरवान्वित करते हुए कहा है–

मातृभूमि मातृभाषा रे ममता या हृदे जनमि नाहिँ
ताकु यदि ज्ञानी गणरे गणिबा अज्ञान रहिबे काहिँ ?

जयहो , भकति भाव भोंले आपकी जय हो ...पुरुषोत्तम श्यामवखा उनकी प्रियतमा ा वसुन्धरा , भाषा भारती माता सरस्वती की जय हो ...

०००

०००

२.४.२०२३

।।१।।

सखा भाव का भोला भगत

आत्म समर्पित तन्मय भक्त

उद्धव

भक्तवत्सल लीलामय, पत्येक कथा के नियामक जगत्पालक कर्त्ता, स्रष्टा श्यामसखा, क्या आप जानते नहीं है ? गोचर होता नहीं है कृपानिधि को कही अनकही दोनों बातें! हे अन्तर्यामी,इस निखिल विश्व भर में भोग भी होता है क्या कोई पल मुहूर्त्त महिमार्णव की मरजी के बिना ? सखा मैं तुम्हारे अभिप्रेत प्रेरित कर्म ही तो कर रहा हूँ ! जब तक किसी कर्म सम्पादन हेतु प्रेरित करते रहोगे क्रीतदास की तरह करता रहूँगा । गुहार है बल देना, शक्ति देना । वह है निर्मल भकति की शकति । मन किया है आपने, अरूप निराकार, कृपा-अकूपार कि **भक्ति** का प्रज्ञापन मैं करूँ। जिसकी नेत्रज्योंति क्षीण हो , सुन नहीं पाताहूँ सही सही । लगता है जितना स्मरण है , उससे कहीं अधिक भुल गयाहूँ। कोई भी ग्रंथमंथन सम्भव नहीं है। जो बोध कृपावारिधि आपने दिया है **भक्ति** का उसी के दम्भ और आपकी करुणा के भरोसे ही करलूँगा , यह मेरी आस्था व विश्वास है। !

नवधा भक्ति के रूप में विदित **भक्ति** एक दूसरे से भिन्न हैं क्या ? दास्य के परम निवेदित भक्त हैं अतुलित बलधाम मारुति नन्दन ! उनकी अन्तरात्मा में अधिष्ठित भकति के अलावा गभीर आस्थावन्त आत्मविश्वास कि जय श्रीराम के स्मरण उच्चारण मात्र से कर्म सम्पादन के लिए ऐसा कोई कर्म है नहीं जो सम्भव न हो ! कर्त्ता प्रभु ने ही तो जो हुआ वह कर दिया, असम्भव को सम्भव कर दिखाया! गोस्वामी ने उनके सागर-लंघन के समय विशाल सागर को केशरी नन्दन के मुख से सागर को गोस्पदी कहलवाया है। 'गोस्पनदी कृत वारिधि '।

पञ्चसखाओं के एकात्म समूह में उत्कलीय श्रीमद्भागवत एक महत्वपूर्ण अनुसर्जना है । जितना याद कर पाऊँगा उतना उपस्थापित करके अनुरागी पाठक-पाठिकाओं से अनुरोध करूंगा कि ग्रंथमंथन करलेंगे।

करुणानिधान महिमार्णव , आपने सखा उद्धव से कहा न ? **जळे द्वारका यिब (उच्चारण ज जैसा) नाश। उद्धव मो सङ्गते आस** । किन्तु उद्धव ने अस्वीकार करतेहुए कहा – प्रलय काल में तुम्हें तो चाहिये मात्र एक बटपत्र। उसपर एक अबोध शिशु के समान आनन्द मन से निर्वसन होकर शयन करके जिस नाखून के कोने से विष्णुपदी जाह्नवी उद्‌गमिता हुई थी उसीके अमृत आस्वादन मगन होकर रहना है। और सखा मैं तुम सङ्ग चलकर कहां आश्रय ले सकूंगा ' ? सखा,तब आपने कहा न – ' तो मेरी यह रत्न पादुका लो , इसे मस्तक पर धारण करके पर्यटन

करते फिरो ' **रत्न पादुका शिरे धरि.......। एमन्त केते जन्म अन्ते मिशिब मोहर सङ्गते** । और उद्धवने उत्तर देतेहुए कहा –मैं उसे स्वीकार करूँगा , कारण तुम वायदा करके अदा नहीं करते। आतुर कातर विलाप करतीं ब्रज गोपाङ्गनओं से कहाथा न कि मैं मथुरा में धनुषयात्रा देखकर ही लौट आऊँगा। परन्तु अबतक निश्चिन्त हो ! और अचानक याद करने की भांति दयानिधि आपने उद्धव से कहा – एक बार चलकर उन ब्रज गोपाङ्गनाओं से भेंट तो कर आते ?

भकति भावभोला उद्धव आए। ब्रज गोपाङ्गनाओं से भेंट करके कहा – 'मैं तुम लोगों से मिल कर सुख–दुःख पुछने आया हूँ। वायदा करके तुम्हारे नाथ गोपीनाथ ने तो पूरा किया ही नहीं। आये नहीँ। तब गोपाङ्गनाओं इठलाते हुए कहा – 'हमारे ब्रजनागर तो कहीं गये ही नहीं है । उच्छल यमुना के सुनील तरङ्गों में हैं , सुवर्ण बालुका तटभूमि हैं , हमारी अन्तरात्मा में विराजित हो कर हैं ; और क्हां चलगये कहते हो क्यों कर ? वह है **भकति भाव भोली** निषकपट अनाविल तन्मय प्रीतिरूप **भक्ति** ।

उस प्रीति भक्ति की कोई तुलना नहीं है। वह एक और अभिन्न है।

भक्ति शिरोनामा से जिस पुस्तिका की रचना करने को अभिलषित हुआ हूँ वह भकति भावभोला **गोपीनाथ श्यामसखा** अवश्य समापित करेंगे ; पावनी भक्तिपूरीत अस्था से विश्वास है मेरा ......

०००

दिनाङ्क ७.४.२०२३

सखा भाव के भोलाभगत
आत्म समर्पित तन्मय भक्त
।। सुदामा ।।

०

सखाभाव के भोला भगत सुदामा, सुबल, आदि गोप में बालश्रीकृष्ण के परम भक्त थे। वे सारे भकित भोले बालखेला लीला के सहचर थे। प्रवल प्रतापी;किन्तु अभिशप्त कंस का एकमात्र षड्‌यंत्र और बालकृष्ण की हत्या हेतु मायावी दुर्दान्त असूरों के नियोजन , उनका संहार, सम्पूर्ण गोप ब्रज उपवन दहन पूर्वक योजना से बालकृष्ण के अग्निपान , बका शकटादि का संहार अनायास अक्लेश करजाने के कारण वे बालकगण उन्हे अमाप शक्तिमान् ईश्वर मानकर ,ये ही हमारे कर्त्ता रक्षक माने आस्था से, भकति भाव मे भोले मोहित सम्मोहित थे। बालकृष्ण को मारने के लिए विभिन्न छद्मरूप में आए पर्वताकार राक्षस.असूर, दैत्यों को अनायास चूर्णीभूत कर पाने के असाधारण अलौकिक शक्ति के अधिकारी एक बालक नहीं , बालक के रूपमें परमपुरुष जगतपालक , कर्ता माने करुणास्वरूप उनके बालसखाओं के हृदय में उन्मेषित **भक्ति** भाव की तन्मयताा मोहित विभोर थे **सुदामा**, प्रभु के एकात्म अन्तरङ्ग सखा। उनकी चरम निष्ठा, तद्‌गत एकाग्रता ,आत्माभिमान , स्वाभिमान , सत्यवादिता ,अहंशून्य ईर्ष्या रहित हो आराधना , उपासना के प्रति समर्पण का भाव भोला संस्कार में मानो प्रभु भी भकति भाव भोला बने हुए थे। परम प्रिय सखा थे **सुदामा** अन्तर्यामी **भावग्राही** के।

उस समय बालकसुलभ आमोद से दधी माखन की चोरी, गोपाङ्गनाओं की दूध दधी कलसी गुलेलदाग कर छेद करदेना या तोड़ देना , वस्त्र हरण , कालीय दलन .गोवर्द्धन धारण आदि आदि अनेक अख्यानों की उपस्थापना है **श्रीमद्भागवत** में। उसी विचार से भागवत को भक्ति प्रीति के महाकाव्य कहा जा सक्ता है। कुछ आख्यान वैसे भी हैं जो **भक्त जगन्नाथ दास** की उत्कलीय अनुसर्जना के द्वारा संयोजित मौलिकता है।

भक्त सिद्ध साधक चिन्तकों ने कहा है –**भावगत** न हो तो **भागवत** बोधगम्य नहीं होगा। क्यो कि प्रभु **बोधगम्य** हैं **ज्ञानगम्य** नहीं। **परमपुरुष**

कैन्द्रिक सहस्राधिक आख्यान उपाख्यान **श्रीमद्भागवत** में हैं , किन्तु, सूक्ष्म विचार से उनकी अवतरित अवधि में कृपानिधि ने मात्र **तीन** ही कर्म सम्पादन किया है। १.**संहार** २ **संरक्षण** और ३ **प्रीति** । प्रीति और भक्ति एक और अभिन्न एकात्म हैं। संहार के लिये तो मात्र एक ही उंगली का आधार चाहिये उन्हें । **सुदर्शन** आवाहित हुए और तत्काल**संहार**। **संरक्षण** तो मात्र सबसे छोटी**कनिष्ठाङ्गुलि** से हो जाएगा। सात दिन **इन्द्र कोप** की घोर प्रवल वर्षा बज्रपात से भीत कातर ब्रज गोप को संरक्षित रखने के लिये **गोवर्द्धन धारण** तो सबसे छोटी ऊँगली के लिए भी आसान सहज सामान्य बात हैं । किन्तु,**प्रीति** के लिए दोनों भुजों की **समस्त दश ऊँगिलियाॅ** चाहिए। यह अनिवार्य है। क्यों कि उनकी प्रीति के लिए **आयुइ है वंशी और वादन के लिए दशों ऊंगलियाँ परम आवश्यक हैं** । अत: उन तन्मय चिन्तक तपस्वियों ने कहा – प्रभु के लिए सब से कठिन काम है प्रीति । प्रीति और भक्ति अभेदी अभिन्न हैं। और **आश्लेषित** कर लेने को तो **दोनों भुजाओं** की आवश्यकता होगी ही अवश्य। उनकी उपेक्षा करना सम्भव नहीं है। भक्ति भाव भोली ब्रजगोपाङ्गनाओं की तन्मय भाव गायन अगणित कवि–कण्ठों में मूच्छित निनादित हो कर है। उत्कलीय कवि **श्रीजयदेव . सूरस्वामी, स्वामी हरिदास आदि** आदि ।

उन बालकों के खेमे में **सूदामा** ही एकमात्र ब्राह्मण थे। बाकी अहीर यादव और कैवर्त।

विचारैं तो वे अपने कौलिक धंधे में जीविका निर्वाह कर सकेंगें। दूध दही छाज मक्खन आदि मथुरा बाजार मे विक्रय विनिमय सूत्र से। उसके साथ साथ **कंस** की अत्याचारी चाहत के पीड़ित होकर शुल्कस्वरूप मथुरा राजभवन की आवश्यकता की पूर्ती । इन सबके प्रतिवाद में गोप प्रज में आन्दोलन विद्रोह कतई शान्त हो नहीं पाता था। इसके अतिरेक केवट समाज के नांव चलाने की इजाजत हेतु घाट महसूल आदिआदि विविध ताड़ना , उसपर कंस के दुर्मद राजपुरुषों की प्र
प्रताड़ना अलग बात है ।

इस परिप्रेक्ष में समाज में असन्तुष्ट प्रजा और नागरिकों में विद्रोह के प्रति ललक और आन्दोलन का सूत्रपात होना , जीवन तक को नौछावर कर देने का

प्रण एक सामान्य साधारण–सी बात है। अन्ततः प्रताड़ित अत्याचारित जिन्दगी से कहीं बेहतर है मरण।

मात्र सुदामा के **ब्राह्मण पुत्र** होने के कारण ब्राह्मण के द्वारा पालनीय **षट्कर्म** अर्थात् **अध्ययन–अध्यापन, यजन–याजन, दान–प्रतिग्रहण** तो वाञ्छनीय विधेय है ? नतुवा समाज में श्रेष्ठतम कुलजात पुरुष के रूप मे लिए धर्म, मान–सम्मान बनाए रखना उसकी सुरक्षा कदाचित सम्भव नहीं होगा । कर्म काण्ड, ज्योतिष, आयुर्वेद नित्यकर्म , पूजा पद्धति आदि में अन्ततः किसी एक धारा में दक्षता न हो तो समाज में सम्मानित आदृत होना भी सम्भव नहीं है । सुदामा प्रवीण मर्मज्ञ तो थे किन्तु थे निर्लोभ हितकामी परहितरत पुरोहित थे । जिससे दूसरों की अपेक्षा से स्वच्छल नहीं थे। आपाततः धनहीन थे। परिवार प्रतिपोषण हेतु भी उसीसे वे स्वच्छल नहीं थे । वे रीतिज्ञ होने के साथसाथ धर्म नीतिज्ञ भी थे। दुर्योग कि समाज समुदाय वाह्य परिपाटी को देखता है , अन्तरात्मा की गहरायी की और झांक कर देखता नहीं है।

००० वाल्यकाल में किन्तु बालक सुदामा की वह स्वच्छलता नहीं थी । पितृहीन। निर्द्धन संबलहीन माता के अलावा और कोई नहीं था। वे एक अति साधारण सामान्य झोपड़ी में निवास करते थे। द्वापर के उस काल के समाज में समवेदना, सहानुभूति , सहायता सहयोग अपनी अपनी क्षमता ती सीमा में प्रदान करन के लिये कुण्ठा ग्रामीण क्षेत्रों में आपाततः नहीं थी। आज इस समकाल में भी पर्याप्त न होने के बावजूद एक के बैंगन के विनिमय में दूसरे की ककड़ी अदान–प्रदान की आत्मीयता में कमी आयी नहीं है।

बाल्यखेला के लिए बारबार बालश्रीकृष्ण उस झोपड़ी में पहुंच कर एकात्म मित्र सुदामा को बुलाकर संग लिये चलते थे। ब्राह्मण बालक, बेटे की शिक्षा की व्यवस्था किस भँति हो पाए , आहार की आवश्यकता किस तरह पूरी कर पाएँगी ,माता बस वही चाहती थी । यह नितान्त आवश्यक है , कि वे अभुक्त न रहें , अतिथि उपासी न रहे , अभुक्त लौट न जाए , उससे और कुछ भी अधिक की लालसा उन में नहीं थी । आराधना हेतु घर के पूजापीठ पर एक पीठपर आसन देकर शालग्राम ही विराजित होकर थे। तथा भकति भाव भोली माता मन्त्रहीन मौन

तुरीयता में एकटक निहारती रहने के अर्न्तआवेदन को कृपामय अर्न्तयामी स्वीकार करने की कृपा करते अवश्य थे।

(संत स्पष्टवाक् महात्मा कवीर की एक गुहार बरबस स्मरण हो आती है, – **साईं इतना दीजिये यामेकुटुम समाये। मैं भूखो न रहूँ साधू भूखो न जाए** ।)

माता की वह कातर कामना परमपुरुष जगतपालक के लिए तो अगोचर नहीँ थी ? उस दिन वे झोपड़ी में पहुंच कर कहा – **माँ , तुम जितना चाहती हों, वह तो हैं तुम्हारे पास ! ! अब माता पिता ने मुझे भाई बलदाऊ सहित महषि सान्दीपनी के गुरुकुल आश्रम में भेजने की योजना बनायी है । सुदामा** भी हमारे साथ आश्रम में अन्तेवासी के रूप में अध्ययन करेगा , यह पूर्व निर्द्धारित है। और वे तीनो **नन्दराजा** की व्यवस्था के अनुसार **महषी सान्दीपनी के गुरुकुल आश्रम** में **अन्तेवासी** के रूप में अध्ययन करने लगे । **भक्ति भाव से समर्पित साधक तपस्वी सर्वज्ञ योगी महर्षि को प्रभु कौन हैं अगोचर नहीं था**। किन्तु परम विनीत **बालकृष्ण** विद्यारर्थी के रूप में श्रीगुरु और **परम वत्सला गुरुमाता के अति अनुगत और वशंवद थे**। तब सुदामा की माता उनके गुरुकुल के लिए प्रस्थान करने के उपरान्त देख कर चकित विस्मित हुई कि महाशून्य कुटीर उनकी उनकी अभिलाषा के अनूरूप परापूर्ण होकर है और यह मातृसेवा के रूप में प्रदत्त अनुदान अक्षय था।

गुरुकुल आश्रम में समस्त अन्तेवासी विद्यर्थियों में कोई भेद नहीं था । सभी अभेदी , अभिन्न, एकात्म अन्तरङ्ग थे। प्रतिदिन बंटकर दोदो मिल कर एकत्र आज गोसेवा , कल गोशाला परिष्करण , अरण्य से समिध संचयन आदि आदि कामो में नियोजित हुआ करते थे । बालकृष्ण और सुदामा नियमित साथसाथ हुआ करते थे। और दोनों मिलकर नियोजित कर्म सम्पादन करते थे। उस दिन समिध संचयन के लिए मे लिए बालकृण्ण और सुदामा के चलते समय कल्याणी **गुरुमाता** ने **सुदामा** की अण्टी में कुछ भूने चावल कण देकर कंहा – देखो , तुम्हें वन में भूख लगे तो दोनों बांट कर खालेना। और सुदामा ने अंटी में बंधे उन भूने अन्न कणों को अपने पास रख लिया था। वन मे अकस्मात बादल उमड़ आए अंधेरा छाने लगा । मेघ की गरजना के साथसाथ बरसने लगा तो दोनों एक पेड़ पर चढ़ कर आसपास की अलग शाखाओं में आसरा लेते समय सुदामा उन भूने अन्न

कणों में से लेकर अंधेरे में अकेले कुटरकुटर चबाने लगे। उनके चबाते जाने के शबद सुनकर कृष्ण ने पूछा – 'अरे , क्या चबाए खाए जा रहे हो ' ! किन्तु सुदामा ने कहा–कुछ नहीं तो!!"

०००

अध्ययन, समावर्तन, के उपरान्त, उनके आश्रम से प्रत्यावर्तन करते समय प्रभु ने श्रीगुरुदेव से **दक्षिणा** की जिज्ञासा की। तब गुरुदेव ने सागर में डुबे अपने पुत्रों को उद्धार करके लादेने को कहा था। उसी प्रसङ्ग के क्रम में**शंखासुर संहार** अपने लिए **पंचजन्य** लेआने आदि आदि के आख्यान उपाख्यान है !

गृहप्रवेश , सुदामा की माता की देहरक्षा, एक अस्वच्छल पिता की सुशीला कन्या का पाणिग्हण करके गृहस्थाश्रम में कालातिपात , पुत्रलाभ, आदि विविध आख्यान हैं। पारिवारिक स्थिति नितान्त अस्वच्छल थी । परन्तु उनकी पत्नी प्रायत: इस आशा से कहाकरतीं थी उनके स्वाभिमानी पति अन्तत: एक बार अपने वाल्यसखा **द्वारकाधीश** से भेंट कर आएँ । वे वहां कुछ याचना न करें भी तो सुख–दु:ख के वार्तालाप से द्वारकाधीश को अवश्च ज्ञात होजाएगा और वे कुछ न कुछ समूचित व्यवस्था अवश्य करेंगे : पति से कहा करतीं थी – यदि द्वारकरधीश आपके अन्तरङ्ग सहाध्यायी बालसखा हैं , तो आप एक बार उनसे भेंट कर आएँगे नहीं क्या ? और जवाब में सुदामा कहाकरतेथे – 'क्या मैं अपनी इस कङ्गरल अवस्था के कारण उनसे कुछ मांगने जाऊँगा ! ' पत्नी कहा करती थीं – 'उनसे कुछ मांगने जाएँ वह में नहीं कहती ' । तो सुदामा ने कहा – क्या खाली हाथ उनसे मिलने जाऊँगा ' ? ' नहीं ' कह कर साध्वीपत्नी ने एक पोटली भूने अन्न कण देकर उन्हें चलने को कहा। यह आख्यान एक अति गोचर आख्यान है। सम्प्रति इस पुस्तक के सीमित कलेवर की दृष्टि से संक्षेप ही में कहता हूँ।

द्वारपाल के निवेदन से गद्‌गद प्रभु के दौड़ते आना, सुदामा को आश्लेषित करलेना , आसन देकर पयर धोये अष्टपाटवंशियों चकित विस्मित पुलकित करते तन्मय भाव से सुदामा के प्रदत्त्त भूने अन्नकणों का आस्वादन करते चाव से उसके अमृततुल्य स्वादानुभव करते रहे । उस समय सुदामा ने कोई याचना नहीं की। प्रभु ने उन्हे घन आश्लेषित करके एक उत्तरीय ओढ़ा कर विदा कर दिया। परन्तु कुछेक सारस्वत सर्जना में है कि प्रभु सुदामा के कुछ दूर चलने के बाद , गाड़ीवान

के रूप में आकर उन्हें बिठाकर उनके आवास तक पहुंचा कर लौटे थे। और सुदामा अपनी कच्ची झोपड़ी की जगह भव्य विशाल प्रसाद देखकर और उन्हे स्वागत करने बाहर आए अपने पुत्र को राजकुमार की भाँति अलङ्कार वस्त्रादि आभूषित हो और पत्नी को अष्टालंङ्कर विभूषिता राजरानी सदृश देखकर चकित विस्मित स्तव्ध होगये। किन्तु सुदामाने उस प्रासाद को न चलकर निकट ही एक झोपड़ी बनाकर रहने लगे। बोले – सखा , मुझे धनहीन रखे रहने की कृपा करो ताकि मैं सखा भाव में तुम्हारा नित्य स्मरण करता रहूँगा। कीर्तन वन्दन निरत करता रहूँगा।

(मनस्वी चिन्तकों ने **भक्ति** को नवधा प्रज्ञापित किया है । वह है दास्य, सख्य, आत्म निवेदन , वन्दन, अर्चन, स्मरण , पदसेवा, कर्तिन , श्रवण।)

स्मरण करें **महाभारत** में सब समापित होने के पश्चात प्रभु ने आकर कहा – 'सब तो सम्पन्न हो ही गया । मैं इस के बाद **द्वारका** के लिए प्रस्थान करूँगा। लौटूंगा नहीं। मुझसे जो जो भी मांगलेने की इच्छा करते हैं , मांगलें । पहलेउन्होंने **नारायणस्वरूप** श्रीकृष्ण द्वैपायन व्यासदेव से कहा । **तीन** बार दुहराते कहने के बाद महर्षि ने कहा सत्यं परमं धी मही । ओर **महाभारत** के पश्चात् **श्रीमद्भगवत** की रचना हुई थी। उसी प्रकार तीन बार **कुन्ती** को कहने के बाद उन्होंने कहा , 'गोविन्द , तुम कौन हो मैं जानती हूँ। मैं तुम्हारी फूफी हूँ , मातृसमा जो देना हैं वह मैं न दूंगी ! तुम नहीं ' । और उन्होंने कहा – विपद सन्तु गोविन्द । मुझे सदा विपद ही देना ताकि मैं तुम्हे सदा याद करती रहूंगी। मुझे इस तीन का तात्पर्य गोचर नहीं है। त्रिसन्ध्या, त्रिदेव, त्रिबार आदि। **लक्ष्मण** ने भी कुटीर के आगे तान रेखाएँ बना कर माता को वारण करके गये गये थे । उसे न लांघने को कहा था। आदि आदि । मेरे प्रिय विद्वान गण आप ज्ञात हो तो मुझे समझा देने की कृपा करेंगे। सबका मूलाधार सिद्ध भगति भाव भोली निष्ठा है , वह मेरी उपलब्धि है , आस्था है विश्वास है ।

०००

प्रभु उन्हे कोई प्रवंचित करके खा जाए तो वह उनका सहन नहीं होता। जिस भूने अन्नकण सुदामा खागये थे उतना ही वापस पाने तक उन्हों ने अपने प्रिय अभिन्नात्म सखा को कङ्गाल कर रखा था ना ?

और विपरीत परिप्रेक्ष में वे किसी से कुछ पाकर निर्लिप्त , निश्चिन्त होकर **रहते नहीं है। निश्चित बहुगुणित कर के लौटाने तक वे संभले अपने को रखनहीं पाते है। उसके** उपरान्त उसके दृष्टान्त स्वरूप **भागवत द्वारका लीला** प्रसङ्ग उपस्थापित करके इस अध्याय का उपसंहार करूंगा , चाहता हूँ। जैसी चिन्तामणि श्यामसखा की मरजी!

अयोनी सम्भूता लेलीहान यज्ञ शिखा से हे परमपुरुष महिमार्णव आप ने ही सम्भवित किया था न अपनी अप्राकृत प्रीति-निदर्शन **याज्ञसेनी , कृष्णा द्रौपदी** का ? आप के आवाहन से वे **द्वारका** की महनीया **अतिथि** बनी आयी थीं । प्रभु और वे एक.तथा अभिन्न हैं। उनमें कोई भेद नहीं। आख्यान है प्रभु द्वारका के **प्रमोद उद्यान** में अभिन्न प्रियतमा कों पास बिठला कर आम काट काट का परोस नहीं खिलाते जाते समय जानबुझ कर अपनी उंगली काट डाली । ऊन्हें घेर कर ईर्षिता **अष्टपाटवंशी** थीं। वे तत्काल राजवैद्य को सूचना देने और कुछ प्राथमिक प्रतिकार करने के लिए प्रासाद को चली आयीं । परन्तु कुछ भी न पाकार जब वे लौट आए तब प्रभु ने कहा 'तुमलोग और चिन्ता करो नहीं। रक्तक्षरण बन्द हो चुका है। पर मुझे दु;ख है कि **सखी** ने अपनी बहुमूल्य **पीतांवरी** पट्ट वस्त्र चीर कर मेरे क्षत पर बांध दिया है। सब ठीक हो गया है। पीड़ा है नहीं। अब और कोई प्रतिकार की आवश्यकता है नहीं।

आंचल से उस चिन्दी भर के लिए प्रभु निर्लिप्त निश्चिन्त थे नहीं। उसके बदले **कुरुराजसभा** में **कोटिवस्त्र** देकर प्रियतमा की लज्जा निवारण किया था न?

हे भक्त वत्सल कृपाअकूपार , इस समकालने जो घटित होती जा रही है वह प्रखर है विध्वंसक , विनाशक! रक्षा करो , उद्धार करो ..कृपानिधान । त्राही त्राही ...

०००

हिन्दी रूपान्तरण

१८.५.२०२३

माँ की गोद से अधिक

०

स्मारिका

अक्षय तृतीया २०१० के पावन अवसर पर प्रिय सुहृद् **डॉ.श्री राजेन्द्र कुमार महान्ति** की मूल गवेषणा विश्लेषण की मूल ओड़िआ ग्रंथ रचना **तंत्रशिरोमणि श्री जगन्नाथ** का मत्कृत हिन्दी रूपान्तरण का (प्रकाशक – **महावीर प्रकाशन पुराना बस स्टेण्ड भुवनेश्वर**) का श्रीमन्दिर में परमपुरुष जगत्पालक कर्ता परम भैरव श्री जगन्नाथ को समर्पित करके परम भैरवी माता विमला को पुनरार्पित करूंगा। इस मेरी एकान्त संचित कामना के कारण मैं आतुर था।

उसी दिन जगबन्धु के समर्पित **भगत भक्तदास पीतवास राउत राय** प्रतिवर्ष की भाँति **अनन्य जगन्नाथ संस्थान** कर्तृक अपने महावीर प्रकाशन के माध्यम से जिस संकलन का प्रकाशन करके रथारूढ़ प्रभुको नैवेद्यार्पित करते है, उसके लिए संकल्प शुभारम्भ का तन्मय अनुष्ठान भी करते हैं । उस वर्ष के संकलन समर्पण की योजनान्तर्गत नामकरण तथा विविध विधि स्थिरीकृत होती है। राजेन्द्र बाबू की उस लोकार्पण समावेश में तंत्रशिरोमणि को उन्मोचित कराने की चाह और विचार से योजना बनायी थी। जब मुझसे कहा तो मैंने मनाकरते हुए कहा – मैं विश्वसी हू देवार्पण का लोकार्पण नहीं। तथा सुहृद् पीतवास बाबू से कहा – हम लोग लौटते समय लगभग सात बजे इस प्रेक्षागार में उपस्थित हो जाएँगे। और उन्होंन रजामंदी जतायी।

प्रथम तो यह है कि **अक्षय तृतीया** हमारी परिणय की तिथी है । १९६१ से २०१० तक कर्ता की डोरी हमें बांधे जकड़े ले नहीं आयी थी । हम पति–पत्नी अतुर व्याकुल थे। हमारे साथ बालुत कुमर छोटा **नाती कनू** (ऋषभ) था। राजेन्द्र बाबू अपनी गाड़ी स्वयं चलाकर ले चलने को तैयार और हम चल पड़े। एक दिन पहले खबर पाकर बलाङ्गीर से रोजेन्द्र बाबू के प्रियतम छात्र **राजेन्द्र कुमार शर्मा** जिसने मुझसे मूल ग्रंथ का हिन्दी रूपान्तरण करवाया था मेरा

पुत्रप्रतिम प्रिय , वह भी अपने पुत्र कन्या को लेकर अलग से पहुंचा था। ड्राइवर था। पुरी, भुवनेश्वर और कटक में ग्रंथ का रूपान्तरण हो नहीं पाया था अतः मत्कृत रूपान्तरण को दोनों राजेन्द्र विभुकृपा मानते थे। मैं स्वीकार करता हूँ कि बलाङ्गीर **भगवती की मन्दिर** में माता की करुणा के बलबूते पर मेरे परोक्ष स्वीकार करने पर रूपान्तरण तो करनेवाला कर्तपुरुष जगत पालक, करुणावरुणालय श्यामसखा ने मुझे निमित्त मात्र बनाकर जो किया हैं , किया है , परन्तु मुझे गर्व है कि वही मेरे नामसे प्रज्ञापित हुआ है । मुझे गर्वित गौरवान्वित करते हुए। हे उदार दयामय दाता , तुम्हारे चरणों के काटिशः प्रणाम।

उस मातृकृपा का स्मरण न करूं तो समीचीन नहीं होगा। वह एक तरह से मेरी उद्दण्डत मानी जाएगी। उस दिन की वह करुणामयी घटना इस प्रकार है –

वह भी **मातृकृपा**। विद्वान बोधदर्शी भतीजा कल्याणीय **शशीभूषण पुरोहित** भी राजेन्द्र बाबू का अन्यतम प्रिय छात्र है। आदरणीय शशीभूषण के द्वारा **बलाङ्गीर तुलसी नगर** में प्रतिष्ठित सर्वार्त्तहारिणी माता भगवती मन्दिर में राजेन्द्र बाबू ने मेरी अध्यक्षता में तंत्र शिरोमणि श्री जगन्नाथ की तात्विकता के प्रसङ्ग बखानने के लिए एक समावेश के अवसर पर उसके भाषान्तरण के लिये अनुरोध हठात् स्वीकार करलेना मेरे लिए सहज नहीं था। क्यों कि उनका पूर्वकृत अनेक प्रयास सफलकाम हुआ नही था , जैसा कि उन्होंने बताया था। समावेश के मध्यावधि मुझे लगा मानों करुणामयी माता बोल रही है , मना क्यों कर दिया ? हाँ बोलो ,मैं भी तुम्हारे साथसाथ रहूंगी। जगत पालक परमपुरुष तेरे श्यामसखा की करुणा भी तो भरीपूरी होगी ? और मैंने स्वीकार अङ्गीकार किया है।

२०१० अक्षय तृतीया। श्रीक्षेत्र में आठलक्ष्याधिक दर्शनाथी समावेश बहुविध प्रखर पावन्दियाँ ! निगरानी करने वाले राजपुरुष सतर्क , सचेतन थे । सब केलिए क्षेत्र की सीमा निश्चित निर्द्धारित होकर थी। यहां तक कि आई.जी , डीऑजी ओहदे तक के अधिकारी का किसी अन्य समान क्षमता के अधिकारी के क्षेत्र में दाखिल होने का अधिकार नहीं था।

राजेन्द्र बाबू मूलतः बलाङ्गीर राजेन्द्र महाविद्यालय में पदार्थ विज्ञान के अध्यापक थे। प्रशासनिक परीक्षा में उत्तीर्ण होकर संबलपुर तहसीलदार बने ।

उपरान्त श्रीमन्दिर के देवोत्तर अधिकारी, भाप्रसे के रूपमें केन्दुझर जिलाधीश के रूपमें न चलकर तत्कालीन मुख्यमंत्री विद्वान भगवत्प्रेमी विभुलीन जानकी वल्लभ पट्टनायक महोदय से भेंट कर कहा – 'भले आप मुझे चपराशी करदें किन्तु श्रीमन्दिर में प्रभु की सेवा से वंचित न करें '। कहा तो मेरे प्रिय सुहृद् जानकी वल्लभ ने राजेन्द्रबाबू के आवेगानुभव करते हुए श्रीमंदिर देवोत्तर अधिकारी पद को भाप्रसे करके राजेन्द्र कुमार महान्ति को उनके सेवानिवृत्त होने तक कार्यरत रहकर प्रभुसेवा में निमग्न रहेंगे ; उस रूप में आदेश पारित हो गया था।

राजेन्द्र बाबू परोपकारी , सबके प्रिय, निराडंवर अहंशून्य व्यक्तित्व के अधिकारी हैं। जिस समय मैं अपनी अभिलाषा व्यक्त करता जारहा था वे केबल उसे स्वीकार करते जा रहेथे।

हमारे श्रीक्षेत्र की ओर आगे पीछे दो गाड़ियों में चलते समय सुरक्षाकर्मियों से लेकर पदस्थ पुलिस अधिकारी गण और प्लाटून प्लाटून कर्मकर्ता समूह व्यवस्थित होकर थे। अनेक के राजेन्द्र बाबू को जानने के कारण हम सबाध**माता बाटमङ्गला** के पीठ के पास गााड़यों को रोक कर पासवाले नल में हाथ पैर घोकर अपनेसाथ मुद्रित ग्रंथ की दो प्रतियाँ लेकर मैने माता से अनुमति लेकर श्रीक्षेत्र प्रवेश करेंगे कह कर भीतर चलकर माथा टेक कर प्रणिपात करके उन दोनों प्रतियों को माता के श्रीचरणार्पित करते ही हमें चकित प्रमुदित करके माता की मण्डनी कर दवना झरझर झर आया। उसके साथ माता की मस्तक मण्डित श्वेत मंदार भी। पूजाहारी को दक्षिणा देकर हमलोग बाहर आए। मैं माता की स्वीकृति प्राप्त सिन्दूर चर्चित दोनों पुस्तकें , दवना , और उस श्वेत मन्दार को यत्न से एकसाथ रखे एक कागज की थैली में सहेज कर अपने पास रखकर बाहर आए। बाहर मन्दिर से सटकर बरगद तले **नाक साहू** की प्रसिद्ध दूकान से निर्जल चाय , बड़ा खाते समय हमें पता चला कि सामने अस्पताल चौक के आगे गााड़यों को बढ़ने नहीं देंगे। जेल के पीछे जो खाली जगह है वहाँ गाडिया रख कर चलना होगा। तब राजेन्द्र बाबू ने अपने एक डी.एस्,पी मित्र को फोन किया जिन्होंन सब कुछ की सुविधा करदेंगे, वायदा कियाथा । पर वे भी प्रखर पावन्दियों के उलझन में इस कदर फँसे हुए थे कि उनकी अपनी मरजी से हिलने डोलने तक का मौका नहीं था।फोन पर उनसे जो बातें हुईं तदनुसार सब पता करके राजेन्द्र बाबू ने हमें चलिये कहा

और हमने आकर देखा डाक्टरखाना से सटकर एक विशाल मैदान में पुरी पौर परिषद की और से गाड़ी पार्किङ्ग की व्यवस्था हुई है । उसके समीप भीतरऔर बाहर अनुमति प्राप्त चाय जलपान के स्टल भी हैं किन्तु राजेन्द्र बाबू ने जो सोचा था वह भिन्न था। वह था – डाक्टर खाना सामने की गली से दाखिल होकर बाहर बाहर तटरक्षक मारुतिनन्दन के गुमुटीमन्दिर के बाद दाईं मोड़ कर गली में प्रवेश करके आने के बाद राजेन्द्र बाबू को भली भाँति पहचानने जाननेवाले सुरक्षा अधिकारियों ने गली में गाड़ियां कहीं कोने में रख कर चौक तक पैदल चले जाने को कहा। कोई दूर नहीं चौक पास ही था । कोने में एक पान की दूकान खुली थी । मैंने अपने लिये दस गिलौरियाँ बनवा ली । नाती नातिनों के अलावा बाकी सब निर्जल चाय पीकर पैदल आकर जूता काउण्टर में जूते रखवा कर नंवर की टीन पत्ती लेकर लेकर मंन्दिर में प्रवेश करने को बढ़ते समय बायीं ओर देवोत्तर और लोकसम्पर्क काउण्टर के कर्त्ता पुरुषों ने उनके प्रिय राजेन्द्र बाबू को पहचान कर हम सबको भीतर बुलालिया। उन्होने अपने पास पूर्व गच्छित कच्चा नारीयल जल और मृदु पानीय , जिसने जो चाहा उसे उसी प्रकार आप्यायित करने के बाद मैंने राजेन्द्र बाबू से ' अब हमें मंदिर प्रवेश करना चाहिये;वही उचित होगा ' । कहा तो उस समय काागज की थैली को देखा नहीं ,जिसमें पुस्तक की प्रतियाँ रखी थी। सिन्दूर दवना और माता की अनुमतिस्वरूप श्वेत मन्दार था। पता नहीं कैसे स्मरण करके अबोध नाति कनू (ऋषभ)पर बिगड़ते हुए कहा – 'मैंने तुझे पकड़ा दिया था और तुमने उसे कहीं फेंक दिया है ' । और यह जितना नहींनहीं रटता जा रहा था मैं उतना ही उस पर और और बिगड़ कर उसपर गालियों का बौछार करता जा रहा था। तब राजेन्द्र बाबू ने कहा –' आप क्यों चिन्ता करते है, मेरे पास और भी पुस्तक की प्रतियाँ हैं '। तो मैंने पूछा – 'उस के साथ माता बाटमङ्गला का आशीर्वादी दवणा सिन्दूर भी है क्या ' ? और मेरी आँखे सजल होकर आंसू की बूंदे झर आयी जिसे मैंने पोंछने का प्रयास तक नहीं किया ।

तब मैंने उस शून्यवाणी स्पष्ट – माता मुझे वत्सल कोमल क्रोधित स्वर में बोल रही थी। – ' उस बच्चे पर क्यों बिगड़ रहे हो ? तुने मुझे पकड़ा कर देखती सँभालती रहना माँ कहता गया और तब से मैं उस थैली को देख रही हूँ। आ लेजा! तब ही मुझे स्मरण हो आया कि हमारे पान की दूकान से पान लेते और

चाय पीते समय मैंने उस थैली को माता काकुड़ीखाई की दीवार पर रख कर माँ को ' देखती रहना कहकर लौटते समय भुलकर लाया नहीं था।

मुझे अचानक खडा होजाते देखकर श्रीमती मुझे चकित नेत्रों से देखा तो मैंने कहा ' मै किताब लाने जा रहा हूँ। तो उन्हों ने पूछा 'कहाँ ' ? और मैंने कहा –' माँ के साथ। सम्भाल कर रखी है उसने। ' नंगे पैर , आग की भांति जलती सड़क , मैं दौड़ता माँ के पास पहुंचा। थैली वेसे ही थी। उठाकर वहीं माथा टेक माँ को प्रणाम करके कहा – तेरी दया , जाता हूँ माँ! कहकर फिर माथा टेक आया।

राजेन्द्र बाबू ने अपने अति **विश्वस्थ पूजापण्डा** सेवायत से कहा था। । वह उन्हीके समय से नियोजित होकर है। वेसे समीचीन विचार से राजेन्द्र बाबू का तब कोई दफ्तर नहीं था कहें तो अत्युक्ति नहीं होगी । वे श्रीमन्दिर के उत्तर प्रवेश द्वार पर बस धोनी अन्तर्वास बनियन अंगोछी लेकर बैठे रहते थे। दफ्तर से कोई फाइल आए तो उसे ऊपर उठाकर **मणिमा सामन्त** को दिखाकर दस्तखत बेहिचक कर देंगे। और कोई ठगता होगा तो फल भोगेगा कहनेवाला एक परम आस्थावन्त आदमी थे वे। हमारे वहां अवस्थान की अवधि में उनके प्रति पर्डा , पढ़िआरी, सेवक, सुआर महासुआर सबकी श्रद्धा सम्मान,वशंवदता अपार निश्छल था, यह मेरा हर्षिअनुभव हैं।

बिलकुल उनके अनुरूप दिव्य भगत थे , जिन्हें में अन्तरङ्गता से जनता हूँ। सत्यवदी निर्लोभ, परोपकारी । वे भी अविकल प्रतिलिपि थे राजेन्द बाबू के। श्रीमन्दिर के ध्वज को निरतदेखेंगे विचार से श्रीकृष्ण सिनेमा के पास एक मकान खरीद लिया था यद्यपि वे मूल निवासी है ब्रंमपुर गंजाम के। बलाङ्गीर में आर.टी.ओ थे निष्ठापर। आज स्मरण के उन पुण्यात्मा को सश्रद्ध प्रणाम करता हूँ। वे है श्री जयन्त नारायण पण्डा।

अक्षयतृतीया के दर्शनाथी भक्त कतार बाँधे कदम कदम बढ़ाते जा रहे थे धीरेधीरे । छाटिआ (एक वेत्रधारी सेवायत जो दर्शनार्थियों पर मृदु वेत्राघात करते हुए आगे बढ़ाए लेता है) के **'बढ़ेचलो बढेचलो'** के बीच **गर्भगृह** के एक कोने में **मैं , श्रीमती** और **राजेन्द्र बाबू** हाथ जोड़े करुणानिधान को निर्निमेष नेत्र से निहारे जा रहे थे। **पूजापण्डा** उसी ***रत्नवेदी*** पर विराजित परम भैरव को पुस्तकें समर्पित करके माता परम भैरवी को **पुनरार्पित** करके जगदीश्वर के वक्षशोर्भी दवना

तुलसी पुष्प की माला पुस्तकों के साथ हमे देकर कृतार्थ करदिया। हमलोग बाहर आगये। पुत्रप्रतिम राजेन्द्र , उसके पुत्र कन्या तथा कनू पूर्व ही दरशन कर आए थे।

उसदिन आनन्द बाजार को महाप्रसाद आने में देर थी । हमारे लिए पूजापण्डा ने तृतीया आड़प खिचड़ी की व्यवस्था कर दी थी। घृतान्न में परिपूर्ण कटहल के टुकड़े मीठानहीं नमकीन । दिव्य अमृत स्वाद का महाप्रसाद। राजेन्द्र बाबू ने सबके लिए शूखा प्रसाद ,निर्माल्य , आदि की व्यवस्था कर दी थी। पीतवास बाबू आदि कुछेक और भक्तों के लिए भी। हमारे भुवनेश्वर पहुंचने में सामान्य विलम्व हुआ । पुत्रप्रतिम राजेन्द्र भुवनेश्वर में न रुक कर अपने पुत्र कन्या को लेकर बलांगीर चले आए।

हम पति पत्नी , कनू और राजेन्द्र बाबू को सभा समारोंह समापित होकर प्रसाद सेवन चल रहा था। हमें **भकति भाव भोला** पीतवास बाबू ने स्वागत कर के ले लिया। हमलोग आदरणीया बहन आह्लादिनी के किराये के मकान (एन./२- २२ नयापल्ला में रुक कर पुरी चलने आने की व्यवस्था की थी । आह्लादिनी भी पीतवास बाबू के भगिनी समान कल्याणीया आदरणीया है। उसके लिए राजेन्द्र बाबू जो ले आये थे तथा अनन्य जगन्नाथ संस्थान का प्रसाद आदि लेकर घर पहुंचने में रात नौ से भी अधिक हुआ । उसके दूसरे दिन सुबह पीतवास बाबू ढ़ेरसारे फल लेकर आ पहुंचे। जो अलौकिक कृपा हुई कृपाअकूपार की उसे स्वतंत्र आलेख में ' मन करेंगे यदि ' शीर्षक से अब सही याद कर नहीं पाता हूँ वह चरना किसमें छपी थी। इन दो अनन्त असीम कृपा की पुनरावृत्ति श्यामसखा की कृपा से की है। ....

०००

संक्षिप्त पुनरकथन

२१.५.२०२३।

भकति प्रीति की शरधावली (१)
भकत सिद्ध अमर मेली

०

उस दिन विभुलीन अप्रतिम विद्वान भाई **राजकिशोर** और मै, **आळिपिङ्गळ** आश्रम निवास के बाहर पैन्तरा मारते **गदू चाचा** को देखकर दिव्य देवपुरुष वाक्सिद्ध **भगवत्पाद** श्रील प्रणम्य पितामह की अकाट्य घोषणा को रूपप्राप्त होते देख चकित विस्मित होका चाचाजी भीतर चलकर पूज्यवर पितामह के चरणस्पर्श साष्टाङ्ग प्रणिपात करके दर्शन करने के उपरान्त चाचाजी अपनी टूह्वीलर में चले आए। हम पर तो परम पूजनीय पितामह दिव्य अमरात्मा श्रील श्रीश्री **गणेश्वर मिश्र** की स्थूल अविद्यमानता में भी आशीर्वाद का अमृत वर्षण निरत निरन्तर अटूट है । तब राजकिशेर बलाङ्गीर राजेन्द्र महाविद्यालय में अध्यापक था और दोदिन पहले बलाङ्गीर आ पहुंचा था । गदू चाचा उसे देख नहीं पाए सोच कर दु:खी हुए तो प्रात:स्मरणीय बापा से उन्हें रुक जाने कों कहा और कहा कि आज सही नौवजे आपहुचेगा जो साान्यत: सम्भव नहीं था । ाकिन्त पूज्य बापा की अकाट्य घोषणा रुके रहे और हमे सही नौबजे पहुंचते द्ेख करचकित विस्मत हो के बापा के समीप भाग चले थे। वह एक भिन्न प्रसङ्ग हैं ।

प्रणम्य बापा (पुरी बोली में पितामह) उसदिन सामान्य व्यस्त विचलित-से लग रहे थे। आयुर्वेद के वे एक प्रविण विचक्षण चिकित्सक थे। उस अंचल के परम सम्माननीय वैद्य थे। उनके पास नियोजित एक ब्राह्मण युवक हरि नामका था जो उनके हर आदेश पालन करतेहुए देखभाल करता था। अन्न प्रसाद की व्यवस्था करता था। उसे बापा ने एक औषध वटिका खोज निकालने को कहा था। किन्तु, एक दिन पूरा वीत जाने के बाद भी वह उसे पाता नहीं था। आळिपङ्गिळ का एक भक्त कोई औषधि लेने के लिए आकर दो-तीन दिनों से खाली हाथ लौट जाता था। राजकिशेर उस आवास को आवास न कह कर **आश्रम** मानकर बाहर चहल कदमी करता फिर रहा था । और मैं पूज्य बापा के पास चटाई बिछा कर मुझे हरि ने जो चिवड़ेगूड़ का जलपान दिया था , वह लघुआहार कर रहा था।

तब बापा ने एक स्लेट पर बाहर धूप छायाको निरख कर बेला निरूपित करके एक कुण्डली बना कर एक एक कोण पर ग्रहों को स्थापित करके हरि को बुला कर कहा – हरि , हरि रे वह बटिका एक अलग घड़ी (छोटी कलसी) **में ढक्कन लगे है , जा, ले आ !** देख जिन्हें वह औषधि देने है , वे भी आ पहुचे है। वे इसके पहले भी दो–तीन बार लौट चुके थे । हरिने लाकर बटिका दिया और बापाने वह देकर याचक को अनुपान तथा और किन किन पथ्यादि की व्यवस्था करनी है बताया। याचक ने कुछ जो अर्थ प्रदान करके गया उने लेकर अनगिने एक अलग घडी में रखदिया। वह अर्थ आवश्यकता के अनुसार किसी निर्द्धन की सहायता के लिए संचित होता था। यही **बापा** का निद्देश था। सबका मूलाधार है **भक्ति** । भकति भाव भोली तन्मय आसक्ति। मैं प्रिय बाचकों से कहना चाहूंगा आश्रम में सब तो खैरात, आश्रम में अन्न प्रदान, अन्यान्य आवश्यकता, पूजन सामग्री, आगत अतिथियों का सतकार आदिआदि करने कराने वाले उस अव्यक्त अरूप करुणामय कर्तापुरुष की कृपा की कल्पना करपाना क्या सम्भव है ? हम सामान्य जनों को उसे अलौकिक मानने के अतिरेक और कोई गत्यन्तर नहीं है .... क्षेत्र के वित्तशाली स्वच्छल समुदाय जो चिकित्सित होने या और किसी रूपमें बापा से आशीर्वादित होने आते थे , वे किसी न किसी रूपमें द्रव्य के रूपमें हरि को सौंप कर जाते थे और वह अन्नपूर्णा अक्षयपात्र के समान परिपूर्ण बना रहता था।

उसके बाद मैंने किञ्चित श्लेष से पूछा– बापा आप दो दिनों से हैरान परेसान होते रहे ; यदी पहले से यह मिथुन कर्कट किया होता तो ...... ? और बीच ही में मेरी बात काटते हुए बापा ने कहा – 'प्रभु ने मुझे वैद्य बनाया है। जनसेवा मेरे लिए प्रभु सेवा है। कर्तव्य है। मानव सेवा माधव की सेवा है। उसपर उन्होंने मुझ पर एक और विद्यादान की करुणा की है , **होराशास्त्र** की। सुनों , कुछ भी स्वयं श्रम न करके अपने परिश्रम से सफलता मिली नहीं , यही विश्वास न होने तक किसी भी भगवत् कृपा का प्रयोग करना नहीं। सबके मूल आधार के रूपमें भक्ति हो । प्रभु जगत कर्ता के प्रति आस्था और विश्वास हो । वे ही सबकुछ करलेंगे । हर स्थिति समस्या का समाधान। जितना चाहिए उससे अधिक की कामना याचना करो नहीं। वह न अइिक देंगे न कम करेंगे। वही **पूर्ण समर्पण का महाभाव** है ' ।

और वे दृष्टान्तस्वरूप बोलेते गये । – **शकुनी** का **कपट चसर** का परिणाम , धर्मराज कहलानेवाले युधिष्ठिर का **पत्नी को सम्पत्ति** , द्रव्य के विचार से दाव लगाकर हार जाने के बाद परिणाम जो हुआ – कुरुसभा में अभिमानी दुर्योधन के आदेश से मत्त दु:शासन के द्रौपदी के **वस्त्रहरण** करके विवसना करने के प्रयास करते समय वे नारीसुलभ वस्त्र सम्पाले रखने की चेष्टा की होगी। उस प्रक्रिया से जब उन्होंने अनुभव किया कि वे दु:शासन की प्रवल शारीरिक शक्ति का प्रतिरोध कर नहीं सकती तब और कोई प्रयास न करके ऊर्ध्वबाहु हो प्रार्थन की **हे आर्तत्राण रक्षा करो** । और तब **कोटीवस्त्र** देकर उनके लज्जा निवारण करने को **आर्तत्राण** को पलभर भी लगा नहीं। वह है पूर्णसमर्पण। भक्त तन्मय चिन्तक ऋतदर्शी नारायणस्वरूप श्रीकृष्ण द्वैपायन उसे प्रभु का वस्त्रावतार कहा है।

स्वयं आपद्‌काल में श्रम करके हारजाने की आशंका से ही प्रभु शरणाश्रित होगे न ? वह है **देवदत्त विद्या का प्रयोग**। उस दिन परम हितैषी स्नेही बापा ने मुझे समझातेहुए कहा था– जब उन्होंने श्रम करके भी उस दबाई की बड़ी (बटिका) प्राप्त नही हुए और उसकी अनिवार्य आवश्यकता हेतु उन्हों ने प्रभुदत्त महादान ज्योतिष का प्रयोग किया था। उन महापुरुष की अन्तरात्मा में भक्ति और आस्था अप्रमित थी।

०००

उसदिन परम कारुणिक प्रात:वन्द्य बापा ने परोक्ष ही मुझे स्मृति–सचेतन कराया था। में मेरे अबोध बोध की सीमा में अनुभव करता हूँ . महाऋषि श्रीकृष्ण द्वैपायन नारायणस्वरूप **व्यावसेव** रचित **जय काव्य** महाकाव्य महाभारत की तुलना में **शूद्रमुनि शारळादास** की **उत्कलीय आदि अनुसर्जित** रचना महाभारत में भावप्रेममय प्रभु और परम अप्राराकृत प्रीति की प्रियतमा कृष्णा की अीभन्न **सखा–सखी** में प्रीति विनोद अधिकतर प्राञ्जल और निविड़ है। रसाल रससिक्त है । अधर्म विनाश , दुष्कृतनाशन, धर्म संस्थापन तुम करोगी, पावन भारत भूमि के नवीन इतिहास की रचना तुमसे होगी बोल कर प्रभु नेअमित **शक्तिमती महामाया योगमाया** को प्रभु ने होमाग्नि की लेलीहान शिखा से आश्लेषित करके लेआये थे। अग्नि सम्भवा अयोनि सम्भूता कृष्णा। प्रभु में यही

आशंका थी कि यदि वे अपमान रुष्टा हों तो पलभरमें सबकुछ भष्मीभूत कर सकती हैं और प्रभु भी उन्हें वारण करने को सक्षम होंगेनहीं। जगत्कर्ता पालक लीलामय विनोदी प्रभु **अठारह दिनों** के विनाशन करने के हेतु उसके पश्चात् भविष्य के लिए दृष्टान्त रख जाने के अवसर तक प्राप्त होंगे नहीं। आदि उत्कलीय महाभारतल में कृष्णा को लेकर विंशाधिक आख्यान उपाख्यान हैं। भक्ति, प्रीति भाव विनोद .अभेदी अभिन्नता के प्रज्ञापन के रूप में। बाचकों से निवेदन है , मुझ अबोध अकिंचन का कहा मान कर ग्रंथ–मन्थन भी करें।

मैं काव्य वारिधि के **हीरक ज्योतिस्तम्भ** अग्रज कवि रमाकान्त रथ की अनुप्रेरणा से **कृष्णा** शिरोमाना से एक काव्य संकलन की रचना की है। उसे कटक स्टुडेन्टस स्टोर ने तत्वविद्वान भाई नृसिंह प्रसाद मिश्र की भूमिका सहित प्रकाशित किया है। इस सीमित कलेवर के संकलन में उसपर चर्चालोचना सम्भव है नहीं। अत: आग्रही विद्वान पाठक–पाठिकाओं से अनुरोध है कि संकलन संग्रहीत कर के कृष्णा के भाव–तत्व का रसास्वादन करें। उसमें आशीर्वचन के रूप में **दिव्य कवि रमाकान्त रथ** की अप्रमित प्रशंसा तथा **कृष्ण्णा** की रचना की पृष्ठभूमि से मिल कर आप प्रमुदित होंगे , यह मेरी आस्था और विश्वस है।

परन्तु सखा के प्रियतमा सखी का आमोंद विधान प्रमुदित करने के बावजूद महासती ने हस्तीना को इस रूप अभिशापित कर गयी हैं कि वह मात्र एक खण्डहर ही है। सम्प्रति । यहां तक कि भारत के प्रथम प्रधान मंत्री पण्डित जवाहरलाल नेहरू की अदम्य विकाश योजना से भी वह सम्भव नहीं हुआ ।

. सब शान्त हो जाने के उपरान्त कृष्णा ने सखा को मान भरे स्वर में रुठते से कहा इस प्रकार आतुर भी करते हैं सखा।आकुल विकल हो मैंने पुकारा, पर तुम आए नहीं !

प्रभु ने कहा–'सखी मैं नहीं, मैं तो उस समय द्वारका में था। मैं भक्त के इच्छाधीन होकर पहुंचूंगा न ? तुमने पहले पुकारा– हे **वेणुपाणी** रक्षर करो ' ! मैंने हर पुकार सुनी है। वंशी तो ब्रज गोप के समय से कहा रख छोड़ा था। उसकी तलाश करके पाया ही था तो तुमने पुकारा– हे **चक्रधर** रक्षा करो, तब मैं सुदर्शन का आवाहन कर बुलाया ही था कि तुमने जब मुझे पुकारा–हे **आर्तत्राण** रक्षा करा तब द्वारका से आकर पहुंचने में मेर तनिक भी देर हुई क्या ? तुम न मुझे यह

पुकार , वह पुकार से अव्यवस्थित करती जा रही थी ‘ ? उससे अधर्म विनाश धर्म संस्थापन के लिए महासमर का सूत्रपात हुआ ज्ञात हो कर सर्वज्ञा सर्वशकितमती अपर्णा कृष्णा मुसकुराने लगी । तथापि हस्तीना को सदाकाल के लिए अभिशापित कर गयी है।

बापा . मेरे और राज किशोर के उसदिन प्रसाद सेवा करते समय बापा ने राज से कहा –‘राज, देखना तो कल संध्या के समय मेरा शनि भोग हुआ । अनुमति लेकर शनी ने प्रवेश किया। इसी माघ सप्तमी मेंमेरी देहरक्षा करने इच्छ थी। ज्ञात हुआ कि तेरा विवाह होनेवाला है। उसके पश्चात इच्छा हुई उसके बाद ही स्वधाम यात्रा को लेकर सोचूंगा। राज भी बापा की करुणा से एक प्रवीण ज्योतिष था। उसके बाद बापा ने कहा ‘ श्रीनिवात के सर पर भी अपना कोई छादन नहीं है। वे दुसरे के घरपर टिके हुए है। उसकी भी भूमिप्राप्ति नहीं गृहप्रापित का योग है। अवश्य घर पाने के लिए उसे ऋण करना होगा मात्र वह शीघ्र ही उऋण हो जाएगा।‘

माता सर्वार्तहारिणी भगवती भारतमाता के क्रोड़-मण्डित करके गोचर अगोचर में लक्ष्याधिक भकति भाव भोले सिद्ध सर्वज्ञ महापुरुष अवतरित हुए है। उन्हें सब गत आगत दृश्य हो जाता है। वह अलौकिक और विस्मयकर है। हमारा मूल निवास है **दिव्यसिंहपुर शासन** । प्रणम्य सुरेन्द्र महान्ति के प्रख्याद उपन्यास **नीलशैल** प्रज्ञापित गजपति महाराज के रांगुरुओं के अध्यूषित शासन अग्रहार है। सन्निकटस्थ **माणिकागोड़ा**। इस ओर **काईपदर** । मकुन्दप्रसाद , वाणपुर के समीप मउसा ब्रह्मपुर, मेरे भाव-शब्द सागर सन्तरणपटु विचित्र चित्रकर विभुलीन नना(पिता) उत्कलमणि गोपबन्ध के सहकर्मी थे और उनके महाप्रयाण के पश्चात पाटणास्टेट के राजकवि के रूप में बलाङ्गीर आए थे। उसके पहले संस्कृत, कर्मकाण्ड ज्योतिष, चिकित्सादि की मूलभित्ति की प्रतिष्ठा की थी उनके वंशज पूर्वजों ने। उनके अग्रज समूह हैं पण्डित गदाधर उद्‌गाता पण्डित लड्डुकेश्वर उद्‌गाता आदि आदि । मैं दिव्य देवपुरुष श्रील भगवतपात बापा पूज्य अमरात्मा गणेश्वर मिश्र के पश्चात् अनुरूप जिन्हे स्मरण करना चाहता हूँ और आसक्त अनुरागी हूँ ,वे हैं बापा **उत्कल गजपति महाराज के रायगुरु श्रील कपिलेश्वर रायगुरु।**

१९५२ अगस्त २८ के दिन तीन सालों की पीड़ितावस्था के अवसानस्वरूप देहरक्षा करके नना सुबह स्वधाम प्रत्यावर्तित हुए। दिव्यसिंहपुर को तत्काल खबर पहुंचाने की उस समय कोई सुविधा नहीं थी। टेलिग्राम करें तो बोलगड़ पहुंच कर वहाँ से डाकिया चार माइल पैदल चलकर पहुंचाएगा अर्थात् दोदिनों के बाद खबर पहुंचेगी। नना के देहावसान के समय प्रणम्य बापा बाहर बरामदे पर आसन पर मृगछाला बिछाए ध्यानस्थ थे। और अकस्मात चेतनाहत होकर प्राय आध घण्टे में सचेत होकर कहा - अबही श्रीधर चलागया। देर न करके उन्हें घेरे शशीघर, विम्याधर पितृव्यों से उन्हों कहा अन्तयेष्टि की सजक्रिया(ताजा प्रक्रिया)आरम्भ करदो।

उनके कहे अनुरूप वही हुआ। सर्वद्रष्टा बापा गजपति के राजगुरु **श्रील कपिलेश्वर रायगुरु** का अपने पुत्रके लिए वही सत्यनिष्ठ विधान था। क्रूर नहीं। दिव्यसिंहपुर शासन, गजपति दिव्यसिंह के द्वारा प्रदत्त निष्कर अग्रहार है। सन्निकटस्थ माणिकागोड़ा, काईपदर मकुन्द प्रसाद, के अतिरेग वाणपुर समीपस्थ मउसा ब्रह्मपुर । प्रवादपुरुष प्रवीण उपन्यासकार पूज्य सुरेन्द्र महान्ति ने अपने अनुपम उपन्यास *नीलशैल* में उसका विपुल गौरवगरयन किया है। उसी शासन में चन्द्रचोर रायगुरु के रूप में प्रख्यात श्रीपति रायगुरु समेत अनेक सिद्ध पुरुष धरावतिर हुए। महापुरुष कपिल रायगुरु , जमेश्वर रायगुरु, लक्ष्मी परमगुरु , गोदावरी वर्द्धन रायगुरु आदिआदि उसी वंशके वंशज है, जाज्वल्यमान नक्षत्र है। मेरे वंशज , मैं गर्वित गौरवान्वित महसूस करता हूँ , अपने को धन्य मानता हूँ। आद्य बलाङ्गीर आए पण्डित गदाधर उद्‌गाता मूल निवासी थे समीपस्थ खङ्गुरिया के। प्रणम्य नना उत्कलमणि गोपबन्धु के घनिष्ठ सहकमी के रूपमें डेलांग में खदी रङ्गाने के साथसाथ अतिरिक्त विषं लेकर शान्तिनिकेतन कलाभवन में अवनीन्द्रनाथ ठाकूर की अध्यक्षता में चित्रकला का अध्ययन, छद्मवेश में नेताजी को रेङ्गून पहूँचाना आदि आदि के कारण अलौकिक दिव्य पुरुष बापा के उपरान्त उनके ज्येष्ठपुत्र के रूप में पदाभिषिक्त नहीं हुए। हो सकता है उसी क्रम में मैं भी जोड़कुण्डल परिधान करके उत्तराधिकर सूत्र में आज रायगुरु पदाभिषिक्त हुआ होता।

आलिपिङ्गल में पूज्य बापासे जिज्ञासा की थी। बापा ने बतावा वे अलौकिक महापुरुष कपिल रायकुरु को जानते हैं। दिव्यसिहपुर से एकदा प्राप्त पत्र

देखकर दोनों बापाओं की हस्तलिपि में साम्य समानता हेखकर बलाङ्गीर में राजकिशोर विस्मत चकित हुआ था । वह पत्र मेरे पास तो है , पर किसी ग्रंथ के अन्दर कैद होकर है।

सब का मूल आधार है अविचल निष्ठापर भक्ति। तत्पश्चात साधना, तपस्या और सिद्धि

०००

रूपान्तरण २५.५.२०२३

———————————-

१ शरश्राबालि – बड़शङ्ख से गुण्डिचा मण्डप तक का बालुकावढत्त ऱ्क्षेत्र। जनश्रुति के अनुसार श्रद्धादेवी नाम्नी एक राणी के नाम से नामित.। वह एक प्रतीकात्मक प्रयोंग है।

भगति भकत सिद्ध अमर नभचारी

०

अवसर था अनुज चित्रकार **श्रीकान्त** के विवाह का। वर और बरानुगामी वरयात्रियों को चलना है **खल्लीकोट**। सोनपुर दशपल्ला, नयागड़ ,इटामाटी, भीमपड़ा, बोलगड़ होकर खोरधा के रास्ते ब्रह्मपुर की ओर खल्लीकोट। सोचाथा भीमपड़ा पहुंच कर मैं अकेले चलकर **दिव्यसिंहपुर** से **शशीधर ककेई** (चाचा) को ले आऊँगा वे कर्ताके रूप में सब करेंगे। मेरी शादी के समय **१९६१ अक्षय तृतीया** के दिन **विंवाधर चाचा** कर्ता पुरुष थे।

वर्तमान के अतीत होनेमें देर नहीं लगती । लगता है मानों मरुत् चंचल , भावना से भी तीव्र क्षिप्रतर । दृश्यमान जन, प्रकृति काल के गर्भमें समाये विलीन होकर स्मृति में सहेजे समेटे रह जाते हैं । वह भी अलीक , मनुष्य की धरती पर स्थूल विद्यमानता तक।

वही हुआ, प्रणम्य शशीधर चाचा हमारे साथ चलकर कर्ता के रूपमें हर कर्म निभाये थे। वे स्वयं भी कर्मकाण्ड के धूरीण मर्मज्ञ पुरोहित थे।

पुरोहित के रूपमें हमारी ओर से परमहितैषी दादा सिद्ध महापुरुष **पण्डित अर्जुन होता** को चलना था। नना के दिव्यधाम प्रस्थान के उपरान्त हमारे अस्वच्छल परिवार के प्रमुख थे प्रणम्य **डाक्टर किशोर चन्द्र पुराहित**।और हम मानो दो अभिन्न एकात्म परिवार एक थे। यहाँ तक कि पूज्य किशोर दादा की द्वितीय पत्नी की ज्येष्ठ कन्या **श्रीलेखा** के श्वशुर परिवार समगोत्री होने के कारण मैंने कन्यादान किया था। हमारे वरयात्री दल में एक वेन और एक कार में थे आपातततष पन्द्रह।

वर्षा की भान तक बिलकुल नहीं थी। आकाश निर्मल स्वच्छ था। किन्तु, शुभ मान कर एन निकलते समय पण्डित होता ने मेरी **पत्नी सौदामिनी** से कहा – ' मैं चलूंगा नहीं। मुझे यहां रुक कर कुछ कर्म विधान करने हींगे। नोचेत आपदा टलेगी नहीं ' । क्या क्यों के प्रश्‍न करने की कोई आवश्यकता नहीं थी। उनकी आज्ञा शिरोधार्य करके हमारे चलते समय बस मेरे माथे पर अभय हाथ धरे अपनी चिराचरित कोसली में कहा – ' ज बो, सबु टलि जिबा ' । जाओ हो , सब अपने आप टल जाएगा)

आगे आगे हमारी कार , पीछे परमसुहृस् राजमहल का मालिक विभुलीन **गोपाल साहू** की बीस सीटर वेन बढ़ती जा रही थीं। हमारे गिरिगरावर्द्धन पार कर जाने के कुछ पश्चात रिमझिम बोछार टपकने लगा। धीरा धीरे जोर बरषने लगा। फिर तूफानी झड़ झंझा वात।

उधर हमारे घर के पूजा पीठपर परम भैरव **जगतनाथ** और हमारी **इष्टदेवी परम भैरवी** विमला स्वरुपिणी अभयदा माता दुर्गादुर्गतिनाशिनी के आगे पण्डित होता ध्यानावस्थित थे। और मेरी पत्नी से कहा था– उन्ही के समीप प्रणाम करती मौन बैठी रहे। सामने अखण्ड प्रदीप अविचल प्रज्वलित हो कर था। बलाङ्गीर में आकाश मेघाच्छन्न था। बीच बीच में रह रहकर बूंदाबाँदी हो रही थी।

महापुरुष पण्डित होता मान्य से पितामह (कोसली में **दादा**), किन्तु, स्नेह सौहार्द्द से उन्होंने इस तरह माहौल बनादिया था कि बे मेरे दादा (बड़े भाई) । तदनुसार श्रीमती के साथ उनका श्लेषात्मक स्नेहिल वर्त्ताव था। विस्मय तो यह है कि उससमय श्रीमती कुछ सोचती, चिन्तित होती तो दादा तब जहाँकहीं भी होंन क्यों **बलाङ्गीर समलेश्वरी** मंदिर की ओर से लौट कर दरशन करके हमारे घर आकर सौदामिनी से कहेंगे – ‘ मॉ भगवती बएला , काणा,के भाबुछे जे आएलि। ‘। और फूल सिन्दूर पेड़ा नारीयल देकर बातों बातों कुछ आख्यान सुनाकर समस्या समाधान करके चलेचलेंगे।

दादा पण्डित होता के ध्यानस्थ होकर आपातत: एक घण्टा के उपरान्त अकस्मात् हमारे पूजाघर भर में बिजली कौंधने की भांति नीव्रतेज रोशनी चमक उठी। महापुरुष होता ने मुक्त नेत्र से देखा और दीवार में टंगे चित्रों को दिखा कर उसमें से **श्रील भगवत्पात बापा** के फोटोचित्र को दिखा कर श्रीमती से पूछा – ‘ इए किए बो , गले ‘। श्रीमती ने कहा – ‘ हमारे और राजकिशोर के आळिपिङ्गळ के बापा ‘ । उसके बाद पण्डित होता ने कहा – ‘ आर किछि चिन्ता नाइँ बो सब सँभालने बाला पहँचि गलेन ‘। (दादा की कोसली उक्ति अबोध्य नहीं है।)

इधर हमारी कार का स्टार्ट अचानक बन्द होगया। वाध्य होकर पीछे वेन को भी रुकना पड़ा। और हमाने एन सामने एक विशाल शाखा कडमड़ रडमड़ करके टूट कर गिरपड़ा कि हमरी कार का स्टार्ट अचानक बन्द होनही गया होता तो सही कार के ऊपर गिर कर कार के समेत हमे चूरचूर करदेता। हम सब गाड़ी से

उतर कर बाहर आगये। लगभग आधघंटा बाहर टहलते हुए हालत निरखते रहे । उसके बाद धीरे धीरे बारिश घटती रही । थमती जाती –सी लगी। ताज्जुब ड्राइवर ने गाड़ी का क्या हुआ परखने लगा तो एकदम में स्टार्ट होगयी। निर्विवाद चालू होगयी। सामने वह विशाल भारी शाखा इस तहर राह रोके पडी थी कि हमें एक किनारे से होकर बढ़जाने की कोई असुविधा नहीं हुई।

हम बढ़ते चले। आकाश मेघाच्छन्न था। कभी कभार थोड़ी सी बूंदाबांदी के अलावा वर्षा थी ही नहीं। परन्तु, लगा उसके पहले शायद प्रखर ओलों की वर्षा होकर पेड़ों के नीचे ढेर सारे पक्षियों के घोंसले उजड़े पड़े थे पक्षी भी ढेर सारे मरे पड़े थे। सड़क पर अनगिनत साँप कुचले हुए मरे पड़े थे। वह जंगली राह था नयागड़ तक। वहां भोजन की व्यवस्था किशोर दादा ने करायी। उसके बाद वरसा पूरी तरह से थम गयी–सी लगी। खोरधा पार करने के पश्चात रिमझिम वर्षा बीच बीच में कुछ तेज बौछार खल्लीकोट तक थमा ही नहीं।

खल्लीकोट में श्रीकान्त के श्वशुर जी प्रणम्य **सत्यनारायण आचार्य** खल्ली कोट कला महाविद्यालय में कार्यरत थे। पढ़ाई के समय श्रीकान्त का उनके संकीर्ण आवास को आनाजाना था। परिचय की आत्मीयता थी। उस समय शिक्षयत्री की नौकरी में लगी श्रीकान्त की सुलक्षणी सौभाग्यवती पत्नी की तत्कालीन शिक्षा विभाग के प्रमुख कवि मित्र पद्मभूषण डॉ **श्री सीताकान्त महापात्र** जी को कहकर विवाहोपरान्त बलाङ्गीर तबादला करवाया गया । तब से वे गृहकत्री है , और अब तो बलाङ्गीर में अपना भव्य भवन पुत्र कन्याके स्वच्छल संस्थापन आदि आदि की समर्थ सार्थक अनुप्रेरिका है स्वीकार करना समीचीन होगा।

विवाह सम्पन्न हुआ । सर्वप्रथम स्वागत करके एक विद्यालय कक्ष में चाय डालमा मालपुआ से अप्यायित करके वर वरण के पश्चात वर्षा का आरम्भ होजाने के कारण उनके आवास के सामने स्थित एक धर्मशाला जैसे भवन में सब सम्पन्न होजाने के बाद वर्षा बिलकुल थम गयी परन्तु विदाय लेकर हमारे लौटते समय जिस अभावनीय असुविधा और दुर्दशाएँ भोगी है वह अविस्मरणीय है । किन्तु उसे प्रसंगत:स्मरणीय मान कर इस प्रसङ्ग के उपस्थापन करते हुए स्मरण करता हूं।

वधू विदाय का निर्द्धारत क्षण स्वच्छ और निर्मल था। हमने वहाँ वे पर्याप्त लघुआहार से परितृप्त परितोषित होकर प्रस्थान किया था। कार के पीछे की सीट वर वधू के साथ परिचारिका (कोसलि में **घुड़ाखाई** कहते हैं) थी। कार के पीछे पीछे बीस सीटर की फैली गाडी में पूज्य चाचा जी, प्रणम्य किशोर दादा और दूसरे आये। कार के सामने की सीट पर बस चालक और मैं। आनन्द मन से अनुकूल मौसम देखकर हमलोगों ने प्रस्थान किया। खल्लीकोट से लगभग चार पांच माइल बढ़ आए थे कि धीरे धीरे गहन काले बादल घुमड़ने लगा। महसूस होने लगा मानो दिन नहीं रात है और ड्राइवरों ने हेड़ लाइट जलाली। तबतक बर्षा हुई नहीं थी। लग रही थी मानों सर्वशकितमान् परमभक्त महामना लङ्केश के अन्तिम समर सज्जा का प्रतिरूप दृश्य था वह जिससे प्रभु मर्यादा पुरुषोत्तम भा विस्मत चकित हुए थे। और उन्होंने विभीषण से कहा – 'लङ्केश , समर की नीति है , आज युद्ध न होकर स्थगित होगा '। तब उत्तरस्वरूप विभीषण ने कहा – ' नहीं प्रभु , जैसा आपको दृश्य हो रहा है उससे मैं भी चकित विस्मत हूँ। आज सम्राट् की समर सज्जा विस्मयकर है । अतुलनीय है । किन्तु , यथार्थ में वह आदि **महाकवि बाल्मीकि** की विभीषण के मुखसे उत्तरित वर्णना इस प्रकार है–

'शशीकराम्भोधर मत्त कुञ्जरः । स्तड़ितपताकोऽशनि शब्द मर्द्दलः' ।।

विभीषण ने कहा – ' प्रभु ! दक्षिण से आनेवेली पर्वताकार राक्षस सेना लगता है मानों आकाश आच्छन्न करके है गहन काले वर्षणोन्मख मेघ , रथध्वज, अश्वध्वज, हस्तीध्वज, सेनानायक, सेनापतियों के सुवर्ण जरीदार पताकाओं पर बादलों के अनाच्छन्न अंशों से प्रतिफलित अरुणरश्मी आपकों विद्युत की चमक के समान प्रतीत हो रहा है । जो अठेरह अक्षौहिणी युद्ध वाद्यकार हैं उनके मर्द्दल नाद प्रचण्ड प्रखर मेघ गर्जना की गड़गड़ाहट–सी लग रही है '।

मैं उस समय धीर गति से बढ़ती जाती कार की सामने की सीट पर बैठे न बरसने के पल में दु:ख भुलादेनेवाली भावकल्पना में निमग्न निमज्जित हो कर था। कार के पीछे पीछे अनति फासले पर वेन भी बढ़ती आरही थी ।

परन्तु, लगभग एक माइल के आगे प्रवल ओलों की प्रचण्ड तेज वर्षा से असंख्य पक्षियों के घोंसले , शावकों और अण्डों के समेत स्तुपाकार तथा बिखरे जमकर थे। पार्श्व स्थित खेतों से बिलो में पानी प्रवेश करजाने के कारण भीतर से

निकल कर तिलमिलाते आए हजारों विषधर . विषहीन सँप सड़क पर रौंदे कुचले मरे पड़ेथे। बिलकुल इसके पहले हमारे आने के वक्त जैसा। वरं उससे भी तीव्र तीव्रतर। कैसी थी वह घनघोर वर्षा, बादलों की गर्जने गड़गड़ाहट .बिजली की लगातार कौंध ! जो चमक दिगन्तों से दिगन्त भेद कर विलीन होजाती थी निरत लगातार।

हमारे और कुछ ही दूर बढ़जाने के बाद वर्षा बिलकुल थम गयी। नरम धूप छाने लगा। परन्तु , तब आगे समग्र राह अवरोध करके एक विशाल दरखत था। जिसे लांघ कर आगे चलने का कोई रस्ता भी नही था। हम निरुपाय थे। बिचबिच में **'खरापानी'** रिमझिम बरस जाती। वर वधू और घुड़ाखाई को छोड़ कर बाकी हम सब उतर आए। उसके बाद हमारे बलाङ्गीर पहुंचने तक बादल छाये आकाश तले बीच बीच में धूप स्नात हो और वर्षा हुई ही नहीं।

तब पूज्य चाचाजी न कहा – ' हम तो और खोरधा होक चल नहीं सकते। हम मुड़ कर वसन्त मंजरी यक्ष्मा निवास की ओर से चलेचलेंगे तो आगे खोरधा नयागड़ मुख्य सड़क पर पहुंच जाएंगे और आगे कोई दिक्कत नहीं होगी। तुम लोग मुझे भीमपड़ा छक पर उतार देना और मैं दिव्यसिंहपुर चला जाऊँगा। ' हमारे लिए उनका कहा मानलेने के अलावा कोई गत्यन्तर नहीं था। हम एक तरह से वाध्य थे। हमारे बीच वे ही एकमात्र उस अंचल के भौगोलिक जानकार थे।

चाचाजी मीलों पैदले चलने के अभ्यासी थे। किन्तु हमने भीमपड़ा में उनके लिए , उनके नहींनही रटने के बावजूद , रिक्से की व्यवस्था कर दी। क्यों कि वे तो केवल अकेले नहीं थे .उनकेसाथ कर्ता के रूपमें विदाई के सामान थे। हमलोगों ने प्रणम्य चाचा जी के चरणस्पर्श प्रणाम करके उन्हें सामान के सहित रिक्से पर बिठला कर उनके हाथखर्च्चा के लिए कुछ रकम देने लगा तो उन स्वाभीमानी ने मना करके हुए स्वीकार किया। किन्तु, रिक्सावाले ने बिलकुल कुछ भी लेनेसे इनकार करते हुए कहा – कहा– ' साआन्त , कभी भी रिक्सा करते नहीं है , पैदल चले चलने की आदत है उनकी। और आज मुझे उनकी सेवा करने का मौका मिला है। उनसे पालागी कहकर मेरे आते समय वे मेरे माथे पर हाथ धरे कइलान (कल्याण) करेंगे , वह कोई कम है क्या ?

वह काल न्यारा था। **भगति भाव भोले** इनसान थे। निर्लोभ, अभाव में भी भाव की परिपूर्णता थी। सब सुखी थे . सब में शान्ति आनन्द विराजित था।

प्रगाढ़ भक्ति के भाव भोले ये दिव्यद्रष्टा महापुरुष अमरात्मा है , उन्हें कर्तापुरुष कुछ नकुछ कर्तव्य कर्म सौंप कर धरावतरित कराते हैं । यह मेरी आस्था व विश्वास है। यही मैंने पहले भी कहाहै। जो करता कराता है वह कर्ता है। और ये महापुरुषगण श्रील भगवत्पाद गणेश्वर मिश्र और पण्डित अर्जुन होता उस जगत कल्याण मङ्गलकामी कर्तापुरुष के अनुप्रेरित हैं .....

० ० ०

हिन्दी रूपान्तरण

२९,५,२९२३ सोमबार

भगति भाव भोली महासती
अभिशाप
पूरा तो करेंगे ही कृपा निधान ...!

०

हस्तीना में माता कृष्णा याज्ञसेनी द्रौपदी के लज्जा-निवारण के पश्चात महाबली भीमसेन ने दु:शासन के भुज-उत्पाटन, वक्ष विदारण करके रक्तपान करने की प्रतिज्ञा की थीं क्यों कि जो घटनाएँ घटी उससे समर ही अनिवार्य होगया। कोई सन्देह ही नहीं रहा ।

महासती अभिशप्र करगयीं कि हस्तीना ध्वंस विध्वंसित हो जाएगी और कोई भी उसका विकाश साधन कर नहीं पाएगा , कितना भी प्रभुता सम्पन्न और शक्तिशाली क्यों न हो ! तब सर्व नियामक दुष्कृतनाशन तथा धर्म संस्थपन करके साधु संतो के परित्राण करने को सङ्कल्पबद्ध प्रभु निर्वाक निर्निमेष प्रियतमा के क्रोध जर्जरित ज्वालामुखीबत् मुखमण्डल को ताके रहे थे। यह महाभारत में मात्र एक आख्यान नहीं है।

जो भी करेंगे , उसे कर्तापुरुष ही करेंगे। उनकी मरजी के बिना कोई पत्र तक वातान्दोलित तक हो नहीं पाएगा , यही भावुक सिद्ध चिन्तकों का वैचारिक सैद्धान्तिक प्रज्ञापन हैं । उस दिन मैं हमारे इरोज गार्ड़न आवास में था। वह मेरे परमात्मीय आर्न्तजतिक ख्याति सम्पन्न पद्म विभूषण कथाकार अभिन्न सत्सारस्वत पुरुष चिन्तक रचनाकार कमलेश्वर का आवास। नीचे की मंजिल उनकी और ऊपर कल्याणीया मानू बिटिया के लिए खरीदी गयी सूट् । पुण्यश्लोक कमलेश्वर अब यशेदेहे विद्यमात हैं नहीं । वय के कारण मुझे लगता है मानों जो याद है , उससे कहीं अधिक भुल गया हूँ।

उस समय वे बाहर से नवभारत का रविवासरीय सारस्वत क्रोड़पत्र लिए आ पहुंचे । किसी फोटो जर्णालिस्ट लेखक मित्र का सचित्र प्रकाशित आलेख **महासती अभिशापित हस्तीना** दिखाते हुए मेरी ओर बढ़ा कर कहा – ' उद्‌गाता जी पढ़ीये इसे , कल देखने चलेंगे । लगभग सौ किलोमीटर की दूरी पर है हस्तीना ' ।

आलेख सहित जिन फोटो चित्रों का संयोजन हुआ था , वह था एक विशाल भग्नावशेष, धूलिसात् नींव। जातीय राजपथ पर सूचनास्वरूप बोर्ड पर दर्ज था ' हस्तीना '।

पास ही थे दो-तीन साधारण स्टॉल। फल और चाय नाश्ते का। समीप ही है एक एक तल्ला भवन, फलक है, लिखा है ' हस्तीना अतिथि भवन '। उसके कार्यकर्त्ता हैं तथा है **'सूचना केन्द्र '**। और जो विवरण है वह संक्षेप में - ' विशाल हस्तीना सम्राट् कुरु राजपुरी फूलिसात् होगयी। हो सकता है किसी एक ने भी उसकी सुरक्षा संरक्षण की इच्छा तक की नहीं होगी। किन्तु उससे बाहर आपातत: पच्चीस तीस मील पर नये नये क्षेत्र विकसित होते जा रहे हैं। और नगरों की प्रतिष्ठ होकर उसके वासिन्दे कौलिक वृत्तियों से समृद्ध होते जा रहे हैं । और आज वे शिक्षा, स्वास्थ्य्, खेती , व्योपारादि की दृष्टि से सम्पन्न और स्वच्छल हैं और वहाँ प्रशासनिक अनुशासन विकसित होकर व्यवस्थित है । विलायती शासन काल तक प्रशासन या समाज में उस ाम्बन्ध में किसी ने भी चिन्ता तक की नहीं। स्वाभाविक है।

देश पराधीनता वे मुक्त हुआ । पावन भारत गणराष्ट्र के प्रथम प्राधान मंत्री, वचन सङ्कल्प सिद्ध, विश्व शान्ति, मैत्री के अनुप्रेरक पुरोधा , **राष्ट्रकवि दिनकर** की विशालकाय गृंथ रचना **संस्कृति के चार अध्याय** के लिए शताधिक पन्नों के उपोद्घात लिखकर विश्व शान्ति के प्रति समर्पित करके विश्व राष्ट्रसमूहों के मुखपत्र के रूप में सम्मानित .अप्रतिम विद्वान सारस्वत सर्जनाकार पणिडत जवाहर लाल नेहरू, हस्तीना के विकाश-साधन हेतु कटिबद्ध होकरू वनिष्ठापर प्रतिबद्ध चेष्टा की और उस अभिलाषा से उसके लिए हर प्रकार अनुदान , बिन व्याज के ऋण देकर वास भवन से लेकर व्यवस्थित करते हुए विश्व के विभिन्न देश तथा भारतीय फैक्टरियों की कंपनियों को आह्वान करके अकल्पनीय प्रयास करने के बावजूद सफल हो नहीं पाए । उनके महाप्रयाण के उपरान्त वह सदा के लिए मौन है। तथा हस्तीना जिस प्रकार मौन है, परित्यक्त है , उसी तरह विस्मृत और अचर्च्चित भी ।

भाई कमलेश्वर स्वयं कार चलाते चले। सामने की सीट् पर मैं था। हमारे पीछे पीछे दूरदर्शन प्रसारण वेन और चलमान स्टूडिंयो लेकर हमलोग हस्तीना

पहुंचे। उस समय कमलेश्वर भारतीय प्रसार भारती के प्रमुख थे। और कर्जन रोड़ अपार्टमेण्ट की सरकारी सूट् में दफ्तरी कर्म योजना तथा सामयिक विश्राम के लिए रहा करते थे भी। हमारे पहुंचते ही सरकारी सूचना और लोकवम्पर्क अधिकारी हमें स्वागत कर लेने आए। सब हुआ। वहाँ सै ही प्रसारण वेन से हुआ। बाद में वही दूरदर्शन के प्रायोजित कार्यक्रम में प्रसारित होने के साथसाथ रिकाड़िङ्ग भी हो गया। उस समव वीणा अपा(दीदी)डॉ. **वीणापाणि महान्ति** केन्द्र निदेशिका थीं। और प्रधान मंत्री थीं **श्रीमती इन्दीरा गाँधी।**

हमारे लौटते परम सुहृद् कमलेश्वर ने कहा – 'उद्गाता जी **भक्ति भाव की भोली** तन्मया प्रभु **श्रीकृष्णचन्द्र** की अभिन्नात्म अप्राकृत प्रेयसी **महासती कृष्णा द्रौपदी** के अभिशाप काल कालान्तर में भी अन्यथा हुआ नहीं है। और वह होगा भी नहीं। महासती की तेजस्विनी नारी के रूप में चित्तदाही अपमान की ज्वाला काल कालान्तर में भी निर्वापित शान्त होगी नहीं। उसी के दृष्टान्तस्वरूप जगत के लिए स्थायी कर रखदेने की इच्छा तो करुणामय, जगत्स्रष्टा पालक प्रभु करेंगे ही। यह मेरी आस्था और विश्वास है।

पृथ्वी के परिसर के विचार से हस्तीना एक सीमित परिसर है। **सती शिरोमणी यज्ञसम्भूता के अकाट्य श्राप** का फलभोग तो अब भी कर रही है हस्तीना ? है न महिमा महिमार्णव **बलीआर भुज महाबाहु** ! किन्तु आज समग्र विश्व किस अभिशाप का परिणाम भोग रहाहै , करुणा निधान ! त्राहीत्राही भगत की आतुर कातर पुकार विश्व थरथरर निरत काँपने लगा है। **उद्धार करो , रक्षा करो कृपानिधान।**

हे मेरे प्रिय मानव भाई , एक दूसरे से प्यार करो, स्नेह आदर सम्मान दो। हे शासक मित्र मिथ्या स्वार्थ , अहंकार ; केवल अपनी कुरसी बचाए रखने के इरादे से अहेतुक वाचकि वायदे से भरमाओ नहीं। देखनेवाला सब देखता है , जानता है ! अपने कृत कर्मफल भोगोगे जरूर।

यदा यदाही धर्मस्य.......वचनवद्ध पालक प्रभु , हट नहीं जाएंगे ...यह मेरी आस्था और विश्वास है श्यमसखा ! वह मिथ्या न हो । कातर गुहार प्रर्थना करता हूँ। तुम्हारी अप्रतिमा **प्रियतमा वसुन्धरा** विकल रोदन कर रही है मणिमा महिमार्णव हे **दारु मूरति** कानों में गूंजती नहीं है क्या !

मेरे अप्रतिम दिव्य भगत कवि नना **पुण्यश्लोक श्रीधर उद्गाता** की एक कविता का उद्धरण प्रस्तुत करता हूँ जितना याद कर सकता हूँ। आशा है , उसके भाषान्तरणण की आवश्यकता नहीं है। बोधज्ञ अवश्य ही हृद्बोध करलेंगे....

दारुमूरति हे बारुछ कि मोर दोष ...
छळि कहु नाहिँ फळिछि गोसाइँ गरीबङ्क असन्तोष
लक्षे योजन रे गज डाकिबारे शुणिथिल जेउँ काने;
पासे हाहाकार न शुणइ गीर तार चिन्ह की रहिला धाने ?
(प्रभु जी वही सोचते सोचते श्रीमुख आपका काला पड़गया है ।)
आदि आदि।

०००

(संस्कृत में ... **अपाद पाणि**.....
अवधि कोसलि में
पग बिन चलत सुनत बिन काना....
उसका अभिनव अप्रतिम दृष्टान्त है।
अन्वेषी विवुध पाठक मनन करें , अनुरोध है ।

०००कवि कुटीर,बलाङ्गीर
हिन्दी रूपान्तरण ३१.५.२०२३

आए पराये घर बावरे ...

०

पराये घर को आए बावरे उसे कहते हो मेरा मेरा, सोचा करो
हर बातों का करतापुरुष जो अरूप रूप है , सोचा करो
आए पराये घर बावरे...

कहा है न बस जगत भर को समान रूप में देखने को
अकपटता में सभी प्राणोंमें
प्रेम भरे प्यार करने को
शकति न माँगे भगति खाली चाँहने को
तब आपही मिल जाएगा तुझे तेरा अपना घर !
आए पराए घर बावरे...

दु:ख कहने को कुछ है नहीं मन सुख की वारता वह देता है
गहन काली रात भीती सी प्रतीत हो भी तो
शुभ सुबह की मधुर गीत तो वह गाता फिरता है
कहे श्रीनिवास अरक्षित दास कहा माने
सदा काल सुख आनन्द तेरा भोगेगा बावर
अरूप रूप का करो धिआन गिआन
पा जाएगा आनन्द धाम अपना घर बावरे
आए पराये घर बावो....

पराये घर को आए बावरे उसे कहते हो मेरा मेरा, सोचा करो
हर बातों का करतापुरुष जो अरूप रूप है , सोचा करो
आए पराये घर बावरे...

०मूल गीति कविता आइना शारदीय विशेषाङ्क २०२० में प्रकाशित

०००हिन्दी काव्यान्तरण ३१,५,२०२३

ओळाशुणी में उद्‌गाता

०

दिनाङ्क ३/४/२०२२ इतबार दिवा ग्यारह बजे भव्य अप्रतिम , इस अबोध अकिंचन के प्राति आदर सम्मान की अगाध करुणा का उत्सव समारोह **ओळाशुणी में उद्‌गाता**...स्वरूप मनाया गया था। प्राज्ञापित हुआ था ' **महापुरुष अरक्षित दास** की **महीमण्डल गीता** के हिन्दी अनुवादक युगपुरुष पद्म श्री **डॉ.श्रीनिवास उद्‌गाता** को ओळाशुणी पीठ पर **सम्मान पर्व** ।

मुझे पता है, कि जो किया है वह संत महापुरुष अरक्ष रक्षक अरक्षित दास ने स्वयं किया है। मेरी परिणत आयु, क्षीण नेत्रज्योति, अपरिपक्व प्रज्ञा तथा महीमण्डल गीता की काव्य रचना की अस्वाभाविक वयाकरणिक रीति के कारण पहले मैं उस दिव्य महत् कार्य हेतु मेरी असमर्थता जताए अङ्गीकार किया नहीं था। उस समय भगति गाव भोला सिद्ध महापुरुष ने मेरे समीप अविर्भूत होकर पूछा – 'मना कैसे कर दिया ? मै तुम्हारे पास विद्यमान रहूंगा। और मार्ग दर्शाता रहूँगा। और मैंने स्वीकार अङ्गीकार किया। अत: उस दिन उस सम्मान समारोह में कहाथा – जो किया है भकति भाव भोले महापुरुष ने किया है। आपलोग इस अबोध अकिञ्चन को अभ्यर्च्चित कर रहें, जो उसके योग्य नहीं है।

देव दर्शन,दिव्य भक्ति-शक्ति के सिद्ध महापुरुषगण इस धराधाम को **पराया घर** मानते हैं। और प्रभु श्रीचरणाश्रित होकर टिके धाम उनके लिए **अपना घर** है, जो महापुरुष ने **महीमण्डल गीता** में प्रज्ञापित किया है। वे सर्वद्रष्टा होते हैं। तथा भकत उद्धारण हेतु विभु प्रेरित होकर धरावतरण करते हैं। इसी आस्था और विश्वास से यह अकिंचन भकति भाव भोले ने शायद अपनी असमर्थता जतायी थी और भक्ति सिद्ध महापुरुष ने उस मौन पुकार सुन कर उद्धारक के रूप में सशारीर विराजित हुए थे। मैंने उनके सौम्य शान्त, प्रसन्न रूप-दर्शन किया है। स्वप्नप्राय अचेत-सचेतनता में उन्होंने मुझे पावन ओळशुणी पीठ कोण-अनुकोण दिखाए है। उनके प्रदीपित समाधि-पीठ देखा है। कभी भी नआए , न देखे जब में सब ठीकठीक सही वर्णना करता गया तब सभी चकित विस्मित अभिभूत हुए ।

मेरे पुत्र प्रतिम बापा नवकिशोर और माता श्रीमयी सन्ध्याराणी ने जब मुझसे –' आपने महापुरुष को देखा है क्या ' ? पूछा तब मैंने स्वीकार करके उनका एक प्रतिरूप स्केच चित्रांकित कर सकता हूँ कह कर तत्काल चित्रायित करदिया। जिसके आधार पर मेरे प्रवीण चित्रकार सुहृद दिल्लीप देखकर रेखाङ्कित करदिया है। उसीके आधार पर सिद्ध चित्रकार श्री चन्द्रमणि विश्वाल देढ़–दो अकार में तैलचित्र बना रहे हैं। मेरे उस स्केच को देखकर कनिष्ठ युवराज **श्री देवब्रत देव** उसमें पारिवारिक रूपसादृश्य का होना अनुभूत होकर मुग्ध हुए। ये सारे मेरे प्रति भकति भाव भोला सिद्ध महापुरुष की कृपा है अनुभव करता हूँ।

उन्होंने मेरी बगल में विद्यमान होकर अपनी कृति **महीमण्डल गीता** काव्यन्तरण किया है, तब न असम्भव सम्भ हुआ है ? परन्तु उस अवदान के कारण मुझे गौरवान्वित करते हुए परिपूर्ण सभागार में जिस भाँति गौरव विमण्डित किया गया उसे मैं प्रभु तथा महापुचरुष की करुणा के रूपमें अङ्गीकर करके अभिभूत होकर अपने आपको धन्य कृतार्थ मानता हूँ। उस दिन मैं सभा–संबोधित करते हुए वाष्पगद्‌गद कण्ठ से कहा था – वह मेरी विशाल सेतुबन्धन के लिए गिलहरी सदृश सहभागिता है। जिसे गोस्वामी ने **गिलहरी प्रयास** कहा है । प्रभु करुणा अकूपार मेरी पीठ सहलाकर अपनी उंगलियों की करुणा–रेखाएँ जिस प्रकार स्थायी करदी है वह मेरे दृश्यान्तर में हैं। बनी रहेंगी। आज मुझे जिस भव्य सम्मान–विभूषित किया गया उसे जगत्–जन देख सकेंगे। उस समय हर प्रक्रिया का चित्रोत्तोंलन हो रहा था। बाद में उसका **प्रार्थना** चैनाल तथा दूरदर्शन में भी प्रसारण हुआ । प्रार्थना चैनाल के कर्तानुरुष हैं परम कल्याणीय बोधदर्शी शरणारब्दि, जिन्होने सम्पूर्ण समारोह की संयोजना भी की थी।

उस दिन अतिथियों के रूपमें जिन्हें अपना मत–मन्तव्य व्यक्त करना था उनमें से किसी पारिवारिक अघटना की विडंवना के कारण राजा श्री रवीन्द्र किशोर श्रीचन्दन (बड़कोठा राज परिवार केन्द्रापड़ा) (प्रणम्य वाणीकण्ठ निमाईं हरिचन्दन के कनिष्ठ भ्राता) और श्री देवब्रत देव कनिष्ठ युवराज बड़खेमुण्डि राज परिवार पधार कर शामिल हो नहीं पाए । किन्तु, सुलेखिका श्रीमती मौदामिनी उद्‌गाता कवि डॉ. प्रसन्न कुमार पाटशाणी (राह भटक कर आ पहुंचने में देर होने के कारण मुझे बड़ेभैया तथा मार्गदर्शक के रूपमें सम्मानित समादृत करते आए कवि,

सत्यवाक्)आकर मुझसे वहां अतिथि शाला के कक्ष में मिले थे। अतिथि थीं जिसे मैं माँ मानता हूँ , वह कल्याणीया भुवनेश्वर दूरदर्शन की निर्द्दशिका श्रीमती दीप्ति मिश्र । बाद में प्रत्येक कार्यक्रम का प्रसारण भी हुआथा। और अतिथि थे डॉ तारकप्रसन्न त्रिपाठी , श्री अभिराम प्रसाद भूयाँ , सम्पादक, **शून्यपुरुष**, महीकण्डल गीता का अंग्रेजी अनुवादक, अभिनेता जीवनानन्द पण्डा , अभिनेता श्री मनोजकुमार पण्डा , गायक कण्ठशिल्पी श्री टी.सौरी , श्री चन्द्रमणि विश्वाल , चित्रकार तथा अभिनेता, शिवानी परिवार के सदस्य श्री विभुप्रसाद दाश और तन्मय विद्वान भकति सिद्ध शेक मतलूब अल्ली के सुपुत्र शेक मसूद अल्ली। मेरे परमप्रिय भाई मतलूब की स्मृति स्मारकी नामसे सम्पादित करके प्रकाशित विशाल ग्रंथ**अभिलषित**। यह मेरी स्मृति में सदा श्यामल हो बनी रहेंगी। आमूलान्त श्रद्धास्पद परम आशीर्वादीय शरणारविन्द , प्रार्थना चेनाल की सभा समारोत्सव की मनोज्ञ सुदक्ष परिचालना अप्रमादी थी।

बापा नवकिशोर घूम फिर कर सब की तदारख कर रहे थे। माँ सन्ध्याराणी आपातत: हमारे पास लगे रहकर मेरी सुविधा असुविधाएँ सम्भाल रही थी। बेहद फूर्ति से लाड़ली बहन विजयलक्ष्मी कही अनकही चीजों को चूनचून कर अपनी इच्छा से लाकर देती जारही थी। भुवनेश्वर से हमारे साथ प्यारी बहन आल्हादिनी और भगिनीपति प्रवीण चित्रकार सङ्गीतज्ञ तबलावादक श्री पद्मनाभ मिश्र आए थे। हर दृष्टि से हमारी वह यात्रा सफल, सार्थक, सुखद प्रमोद परितोष के अनगिनत क्षणों का समाहार था जो मेरी स्मृति में सदा श्यामल रहेगी। साथ हमे पितृबत् सँभाल कर ले चलनेवाला पुत्र लुलू शुभेन्द्र भी था।

... ...

किसीने भी कुछ भी किया नहीं होता है । परन्तु अबाध अज्ञानी मैंने किया है कहकर ढिंढ़ोरा पीटता रहता है , डींग हाँकता शेखी बघारता फिरता है । उसके लिए गर्वित भी होता है अहंकार से। उस मानसिकता को यजुर्वेद ने अविद्या कह है और मैं कुछ जानता नहीं , मेरी अन्वेषा है कहता है , वह है विद्या। इस निखिल विश्व जगत में जो भी होगा उसे उन कर्त्तापुरुष ही वम्पन्न किये होते हैं। कथन है विश्व कर्त्ता की मरजी के बगैर तरुशाखों के पत्ते तक आन्दालित हो नहीं पाएंगे। वह कर्त्ता है , जो करता कराता है वह कर्त्ता ;यही बयाकरणिक सूत्र में भी

विवृत होकर है। परम तत्वबोधी भक्तशिरोमणी अरूप अणाकार अव्यक्त पुरुष के अभिन्नात्म पंचसखाओं में अन्यतम भकति भाव भोले जभन्नाथ दास ने अपनी पावन उत्कलीय श्रीमद्भागवत की अनुसर्जना में विश्वनियन्ता के प्रज्ञापनसदृश कहा है, – **करि करउ थाएँ मुहिँ । मो बिनु अन्य गति नाहीँ ।** । मूल तो है वही **भक्ति** उसी भाव से भोला तन्मय ही परम भक्त है। प्रभु उसकी हर कमी स्वयं परिपूर्ण कर देतेहैं । भक्त को निमित्त के रूप में लेकर। स्मरण करें विश्वरूप दर्शन के उपरान्त पूर्णतया सम्मोहित परम सखा पार्थ सव्यसाची को कर्ता पुरुष ने कहा न ? – ' निमित्त मात्र भव सव्यसाची '। प्रभु **नारायण** , पार्थ **नर** और उनके अवतरण का एकमात्र उद्देश्य है – दुष्कृत विनाशन पूर्वक साधु संतों के परित्राण करके सत्य धर्म का संस्थापन । (परम पावनी श्रीगीता में कुरुक्षेत्र समराङ्गण में प्रभु के शाश्वत प्रज्ञापन ... यदा यदा हि धर्मस्य...। विश्व सर्जना के बाद भी हर युगों में सत्पुरुषों का पालन पोषण करते आनेवाले करुणामय नारायण ने नररूपी सखा धनंजय पार्थ से कहा – तुम मेरे साथ प्रत्येक युगों में निमित्त हुए आये हो । किन्तु , तुम विस्मृत हो। यह महासमर आज प्रथम है नहीं । अतीत के अनेकानेक युगों की पुनरावृत्ति है । और उसके बाद सम्मोहित पार्थने करबद्ध प्रणाम करके कहा – **यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि** '।

उपस्थित द्वापर में दुष्कृत नाशन साधुसज्जन भकत परित्राण , धर्म सत्य की प्रतिष्ठा संस्थापन की योजना करके अप्राकृत प्रीति सङ्गिनी अयोनिजा, अभिन्ना योगमाया को लेलीहान यज्ञ शिखा से उठालाये और कहा ' कृष्णा, तुम नव इतिहास की रचना करोगी '। तब योगमाया अपर्णा कृष्णा ने जिज्ञासा की ' सङ्कल्पसिद्ध प्रभु मेरे तुम जो पल भर में सर्वनाश करके धर्म संस्थापन कर सकते हो, उसके लिये क्यों इस अठाहर दिनों का महासमर की योजना बनायी है ' ? तो महिमार्णव आपने कहा– ' इतिहास को साक्षी बनाकर रखने के लिये। साधु संत **भकति** भाव भोले भगतों को अभयाश्रित करने के लिए। उसका प्रारम्भ है अन्ध सम्राट् धृतराष्ट्र का भेद विचार, अहंकार, उद्धत अविचारी पुत्रमोह; ऐसे कि महाभारत उपप्रजागर पर्व में महात्मा विदुर सारे उपदेशों में से एक शब्द को भी अङ्गीकार न करके मानों महासमर को आंमत्रित करके स्वागत कर लाया था सम्राट् के अंध दुराग्रह ने।

प्रत्येक के तुलनात्मक विचार से दृष्टिहीन सम्राट् की अंधी धारणा , दृढ़ विश्वास आस्था थी कि कौरवों की विजय सुनिश्चित है । उसीसे सर्व नियामक प्रभु के प्रति भी उनमें आदर सम्मान भावना नहीं थी। और उनके उद्धत, उद्दण्ड पुत्र दुर्योधन ने जब स्वयं प्रभु आपातत: सन्धी प्रस्ताव लेकर आए और पाण्डवों के लिए मात्र पांच छोटे मुलकों (ओड़िआ में पड़ा)की मांग कुरुसभा में की तब उसने उन्हें बन्दी बनाने का आदेश देने का आस्फालन करने से भी चूका नहीं। और उस के प्रति उन दृष्टिहीन सम्राट का मौन समर्थन भी था। और उस अंधे ने कुरुक्षेत्र धर्मक्षेत्र के प्रेक्षक संजय से प्रारम्भ ही जिज्ञासा की – 'धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सव: । मामका: पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत: सञ्जय '।। उसने मेरे या हमारे पुत्रों ने नहीं बोल पाकर मेरे और पाण्डु पुत्रोंने कहकर भिन्न करके कहाथा। सौ कौरवों समक्ष पाण्डव मात्र पाँच ! सेना संख्या में दुगूनी। उसपर पितामह भीष्म , द्रोण, कर्ण के सदृश अजेय अप्रमित शक्तिसम्पन्न महारथी, विराट विशाल नारायणी सेना और तदुपरी प्रभु कृपानिधान लीलामय का कहना कि 'मैं अस्त्रधारण करूंगा नहीं '। आदिआदि से समृद्ध होने के निश्चिन्त विचार से उसने पाण्डवों की दुर्गति देखने की दुराग्रही अभिलाषा से नारायणस्वरूप श्रीकृष्णद्वैपायन व्यासदेव से प्रार्थना करने उन्होंने संञ्जय को दिव्यदृष्टि परदान करके समराङ्गण में जो घटित होता होगा उसकी धाराविवरणी सम्राट् के कहने से सुनाने की जिम्मेदारी सौंपी थी। उसके विपरीत परिणाम जो होनेवाला है उसका पूर्वानुमान , आशंका संशय भी अंध सम्राट् ने किया होता तो महामुनि व्यासदेव से उसप्रकार अनुरोध न करके परित्राण के लिए कुछ और समीचीन शान्ति समाधान के लिए प्रार्थना करते !!

मात्र , पार्थ का आत्मविश्वास, नारायण के सख्यानुकम्पा हेतु वे अजेय हैं। गुरु, पूजनीयष्ज्‍ ज्येष्ठों के पृति , मातुल, बान्धयों के प्रति स्नेहादर,सम्मान भावना के कारण पार्थ ने दानों पक्षों के तुमुल शङ्खनाद के पश्चात कर्तापुरुष रक्षक सखा से अनुरोध किया – ' मैं देखने की इच्छा करता हूँ किनकिन मुझे युद्ध कसा होगा। इसलिये ' सेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेऽच्युत। ' । दिव्यचक्षुष्मान संजय मोह सम्मोहित मोह सम्मोहित अंध सम्राट् को समराङ्गण की धारा विवरणी सुनाते जा रहे थे। –'अच्युत, दुष्टबुद्धि दुयोधन के हितैषी के रूप में जो राजा महाराजागण युद्ध करने के लिए समवेत हुए है मैं उन्हें देखना चाहता हूँ '। प्रार्थना

करने पर; संजय तब सुनाते है – हे भरतवंशी राजन , निद्राजयी अर्जुन के कहने पर अन्तर्यामी भगवान श्रीकृष्ण ने दिव्य रथ लेकर उभय सेना के मध्य भाग में पीतामह भीष्म तथा गुरु द्रोणाचार्य के समक्ष रख कर कहा –' हे पार्थ समवेत कौरवों को देखो '। तत्पश्चात कौरव सेना मे उपस्थित पितामह, पिता, आचार्य; मातुल ,श्वशुर, भ्राता बंधु मित्र, पुत्र, पौत्र, सुहृदों को देखा।'। समराङ्गण में इस घटित घटना का विवरण धृतराष्ट्र को सुनाते जा रहे थे। धृतराष्ट्र केवल दृष्टिहीन अंध नहीं थे। बहु भाव के अन्धत्व उनमें परिपूर्ण होकर था। सत्य धर्म हेतु अविवेक का अन्धत्व ,मोहान्धता,स्वार्थ पक्षपातिता आदि के अन्धत्वग्रस्थ थे सम्राट्। मैं मेरे सर्वश्रेष्ठ सारस्वत विचारक पाठिका–पाठकों से अनुरोध करना चाहता हूँ कि वे श्रीगीता के निहितांश का एकाग्र अध्ययन करें। नितान्त प्रभावशाली करने के लिए आवश्यक है न विचारूं तो श्रीगीता के अंशविशेष दृष्टान्तस्वरूप उद्धार न करके उसकी अन्तरात्मामें निहित भाव चिन्तन आभासित करूंगा। क्यों कि इस पुस्तक का एक तो निर्द्धारित कलेवर, तथा दूजे सब के मूल आधार के रूपमें भकति भाव भोला तन्मय समर्पित चित्त के यशोगायन का लक्ष्य है मेरा , इस **भक्ति** शीर्षक पुस्तक के माध्यम से।

रणाङ्गण में अपने–अपने क्षेत्रों में प्रस्तुत हुए उपस्थित बन्धु स्वजनों को देखकर कुन्तीनन्दन तृतीय पाण्डव अर्जुन ने अत्यन्त कातर विषादमग्न होकर कहा – ' हे केशव इस समर में युद्धेच्छु अपनों को देखकर मेरे सर्वाङ्ग शिथिल हुए जा रहेहैं। कण्ठ सूख जाता–सा लगनेलगा है। शरीर रोमाञ्चित होकर रोम रोम स्पन्दित होता–सा अनुभव कर रहा हूँ। मुझे मेरा चित्त भ्रमित हाता–सा लग रहा है। और मैं दण्डायमान हुए रहने के लिए भी अपने को असमर्थ मानने लगाहूँ। हे केशव मुझे बहुतरे यिपरीत अपशकून दृश्य होते से लग रहे हैं। उसके साथ साथ समर में स्वजनों का संहार करके मुझे कोई श्रेय प्राप्त होगा, वह भी सोचना नहीं हूँ। मैं अपनी विचरोपपलब्धि व्यक्त करने की अभिलाषा प्रज्ञापित करना चाहता हूँ कि – ' नररूपी पार्थ की अभिन्नात्म नारायण श्रीकृष्ण के प्रति प्रगाढ़ **भक्ति** की करुणामयी शक्ति के कृपा–अवदान विमण्डित होनेके कारण उनमें अप्रमित विश्वास सुदृढ़ है कि जब तक उनके हाथों में देवदत्त गाण्डीव है वे अपराजेय हैं। समर में सुनिश्चित है विजय। मात्र विषादमग्न नररूपी पार्थ नारायण श्रीकृष्ण के आगे

करबद्ध प्रणिपात करके ,बालेते है– ' मैं विजय की कामना आकांक्षा करतानहीं हूँ। मुझे राज्य नहीं चाहिए। सुख की कामना भा है नहीं। हे गोविन्द, हमारी राज्यप्राप्ति से क्या लाभ होगा ? जिन लोगों के लिए हम राज्य, सुख तथा भोग की कामना करते हैं, यदि वे जीवित हुए न होंगे! वे लोग ही तो अपने धन की आशा तज कर युद्धेच्छा से उपस्तित हैं ? मेरे सम्मुख पितामह, गुरु, आचार्य, श्वशुर, मातुल , पुत्र प्रपौद्रादि अन्यान्यसंबधी भी हैं । इस प्रकार विविध रूपमें धनंजय पार्थ नारायण कोसमझाने की च;ष्ठा करके उनसे अंगीकार स्वीकार करने की प्रार्थना की थी। (श्रीगीता द्रष्टव्य) । यहांतक कि प्रभु से कहाथा , केशव वह विजय रक्त रंजित अन्न सदृश होगी जो भोजनीय नहीं है। करुणावरुणालय प्रभु ने भी बहुविध स्वधर्म पालन श्रेय के के प्रसङ्ग में समझाते हुए पार्थ को प्रभावित न कर पाने के कारण बहुरूप अपना परिचय–प्रज्ञापित करते हुए उन्हें सम्मोहित करने अपने अप्रमेय विश्वरूप प्रदर्शित करके और ' जो करना है मैं करूंगा और तुम निमित्तमात्रं भव सव्यसाची ' कथन को अंगीकार करते हुए सम्मोहित, चकित, विस्मित पार्थ ने **यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि** कहकर अङ्गीकार किया। महाभारत महासमर का अन्तिम परिणाम सर्व विदित है। दिव्यदृष्टि से देखकर प्रतिक्षण घटित घटनाओ की धाराविवरणी अंध धृतराष्ट्र को महामना संजय व्यक्त कर जाते समय सर्व नियन्ता प्रभु पार्थ को **भक्ति** के प्रगाढ़ समर्पण का प्रज्ञापन करते हुए करुणामयी आश्वसना देते हुए कहते है ' हे पार्थ सर्वधर्मान परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज। अहं त्वां सर्वपापेभ्यों मोक्ष्ययीष्यामी मा शुचः। ' । यह सुन कर अंध अहंकारी सम्राट् का भक्तिहीनता कवलित प्राण हृद्‌बोध करनही पाया और संजय से पूछा , यह बताओ युद्ध का अन्तिम पीणाम क्या होगा ? और महामना संजन ने क्षुब्ध होकर कहा होगा–' तच्च सन्थत्य रूपत्यद्भुतं हरेः। विस्मयो में महान् राजन दृष्यामि च पुनःनुनः।। और अन्तिम घोषणा के रूप में अहंकारान्ध सम्राट से कहा होगा – यत्र योगेश्वरः कृष्णे यत्र पार्थो धनुर्द्धरः। तत्र श्रीविजयोर्भुति ध्रुवा नीतिमर्तिमम॥ घोषणा करके विराम देते हुए क्षान्त हुए होंगे।। यह मेरा अनुमानित अनुभव है। इसी प्रकार सभी जिज्ञासाओं का समाधान करनेवाली मोहमुक्ति प्रदायिनी पावनी भगवत्‌गीता के मोक्षसन्यासयोग स्वरूप विदित अष्टादशअध्याय सम्पूर्ण हुआ है।

आर्य भारतीय भाषासमूहों में द्वितीय शास्त्रीय मर्यादा विभूषित दिव्य अप्रमादी '**ओड़िआ** में उसे सब के हृदयस्पर्शी ग्राह्य करने की अीभलाषा से व्यक्त करना समीचीन होगा सोचताहूँ।

महामना सञ्जय ने कहा–' मैं स्वयं श्रीकृष्णद्वैपायन नारायणस्वरूप व्यासदेव की करुणा से प्रत्यक्ष भगवान योगेश्वरश्रीकृष्ण के इस परम अनुपम गोपनीय श्रीगीता पार्थ को सुनाते समय श्रवण करके कृतार्थ हुआ हूँ। हे राजन्, योगेश्वर भगवान श्रीकृष्ण और पार्थ के इस परम पावन तथा अद्भुत् कल्पनीय संवाद स्मरण करके मैं बारंवार हर्ष रोकांचित हो रहाहूँ । हे राजन,भगवान के अप्रमेय विराट् विश्वरूप स्मरण करके मैं विस्मय चकित हो रहा हूँ। बारंवार पुलक रोमांचित हो रहा हूँ। हे राजन जहां योगेश्वर भगवान श्रीकृष्ण है और जहां गाण्डीव धारण करके धनंजय पार्थ हैं वहां श्री, विजय , विभूति अटल कीति भी विराजित होकर है। यही मेरा मत है ।

इन सबका मूल आधार है **भकति भाव भोला एकनिष्ठ प्रतिबद्ध समर्पण।** यही भक्तों के परम काम्य हो । जय हो,जयजय हो

०००

हिन्दी रूपान्तरण ६.६.२०२३

सब का मालिक एक

०

प्रगाढ़ ***भक्ति*** के परम चरम समर्पण के स्तर पर भक्त की प्रार्थना मौन हो जाती है। वह है तुरीय अवस्था। प्रगाढ़ **भक्ति के भाव भोला** भगत **भक्तदास प्रभु** की अप्रमित करुणा से आराध्य और आराधक एक और एकात्म अभिन्न हो जाते हैं। उसी स्वरूप अनगिनत सिद्ध ऋषि मुनि, तपस्वी, साधक,सती साध्वी, तपस्विनियों के असंख्या आख्यान-उपाख्यान वैदिक , उपनिषद, पुरणादि में विवृत हैं। वे इच्छा करते हैं और महिमा महिमार्णव कृपानिधान उसे अङ्गीकार करकेसत्य शाश्वत साकार रूपप्रदान करते है। मानों दोनों की इच्छा अभिलाषा एक है। उसी प्रकार सिद्ध, अभिन्न ऋषि मुनि साधक तपस्वियों की वाक्सिद्धि हेतु जगतकर्ता, पालक एकमात्र मालिक के अभिन्नात्म सिद्धगण **सबका मालिक एक** हैं मानकर दूसरे देवी-देवताओं को विभिन्न दायित्व सम्पादन हेतु नियोजित हुए रहते हैं। समकालीन प्रशासन का उदाहरण दें तो यह हृद्बोध ो जाएगा। जैसे ,एक प्रान्तीय जिले के जिलापाल सर्वमय कर्तापुरुष होते हैं। किन्तु. विभिन्न विभाग के अधिकारी कार्यकर्ता रहते हैं। वे जिलापाल के अधस्तन कार्यकर्ता होते हैं। स्टेनो . हिसाव रक्षक, और अलग अलग वर्ग के क्लर्क बाबू . दफ्तरी पिओन से लेकर अर्द्दली पेशकार आदि। वे सारे अपने-अपने नियोजित कर्तव्य सम्पादन करते है। उसी प्रकार विभु नयिजित होकर होते हैं देव-देवियाँ । वे सभी प्रभु के निदेश से कर्तव्य कर्म करते रहते हैं। सिद्ध तपस्व जन हितैसी साधक , वे बस इच्छा ही करते हैं और प्रभु उसे साकार रूप-प्रदान करते हैं। **गोविन्द रीति गोविन्द जाने** । मैं मेरे इस प्रज्ञापन के पुष्टिसाधन के लिये केवल कर्ता पालक प्रभु के अभिन्नात्म शिरड़ी साईं बाबा के कुछेक आख्यानों का उपस्थापन करूंगा, अभिलाषा है मेरी ; इस क्षीणकाय पुस्तक के निरूपित कलेवर की दृटि से। मेरी गोचर-सीमा में तो सद्गुरु मेरे हितकामी माननीय **श्री चन्द्रभानु शतपथी** हैं। पावनी भारत भूमि में और भी तद्रूप पूजनीय विभु प्रतिरूप निश्चित हैं। विशेषत: देवतात्मा हिमाद्री शिखरमाला में। सद्गुरु माननीय **शतपथी** ने **नवनीत शिरड़ी** का निर्माण प्रतिष्ठा की अभिलाषा

की है। उत्कल की पावनी माटी पर गुरुग्राम के रूपमें। एवं वह कौन किस प्रकार कर रहे हैं वही **गोविन्द रीति गोविन्द जाने** ।

० ० ०

उस दिन **साई बाबा** गोधूलीबेला में माटी दीप लेकर दूकान से थोड़ासा तेल मांग लाने के इरादे से पहुंचे । दूकानदार ने कहा – एक बूंद भी तेल नहीं है बाबा ! तब बाबा ने मुसकुरा कर कहा – ठीक है, आज मालिक की मरजी से पानी से दीया जलालूंगा। जैसी मालिक की मरजी ' और अभय मुद्रा में दूकारदार की कल्याणकामना करके वापस चले आए।

शाम ढलने लगा। एक ग्राहक तब तेल खरीदने के लिए आ पहुंचा। दूकानदार ने जब तेल देने को टीन देखा तो उसमें एक बूंद भी तेल नहीं था। बिलकुल खाली था। उसके सर्वाङ्ग पसीना पसीना होने लगा। और उसने ग्राहक को बिन कुछ कहे, बोल न पाकर, बेतहासा दौड़ चला और बाबा के द्वारका माई पहुंच कर देखा दीया जहां जलता रहता है, वहां जल रहा था । बाबा के पैरों में साष्टाङ्ग प्रणिपात करके लेटकर ' मुझे माफ करो, माफ करो बाबा '। गुहारते बिलखने लगा तो बाबा ने बस यही कहा –' बाबा, झूठ से बढ़कर कोई और दूसरा पाप नहीं है। क्यों की वही हर गुनाह की ओर बहकाए ले चलता है। अगर तुम में देने की चाह नहीं थी तो मना कर देता। मालिक कोई और इन्तजाम करदेता। **सबका मालिक एक** है। एक वही देनेवाला। देता वही है। बेइमानी, धोखाधड़ी, झूठ, से नाराज होकर छीन भी लेता है। ... जा जा, सब ठीक है। और दूकानदार ने फिर बाबा का चरणस्पर्श प्रणाम करके लौट आया।

मुझे तब याद हो आयी भोला की परम पावनी तीर्थभूमि वाराणसी की एक घटना। उसे मैं भकति, आस्था , विश्वास एक अकपट छलनाहीन घटना मानकर उल्लेख, करना चाहता हूँ।

एकदा मेरे सिभुलीन **छोटा भाई** श्रीपति कोलकाता के प्रसिद्ध **तिवारी मिष्टान्न भण्हार** और वैदेशिक आमदनी रफतनी के माध्यम से भारतीय कारोबार के सूत्र से भाइयों में बड़े रमाभैया आदि के परम विश्वासी भाई की तरह उन्हीं के साथ उसी भवन में एक उसके लिए निरूपित कक्ष में रहता था। आज इस परिणत आयुष्काल में लगता है याद जितनी है उससे कही अधिक भुल गया हूँ। परन्तु मैंने

भक्ति की मर्मकथा ,जो कहने की अभिलाषा है मुझमें उसके लिए नाम , तिथिबार आदि की सूचना की कोई विशेष आवश्यकता नहीं है। वे सभी भाई **वाराणसी गोदोलिया** में (अब किस रूप में है जानता नहीं हूँ) ठिगने बरगाछ के आगे श्रीपति की इच्छा और योजना के मुताबिक एक अतिथिशाला और कभी कभार अपना वाराणसी में गुजारने के लिए आवास के रूपमें **तिवारी निवास** के नामसे एक भवन का निर्माण करवाया है। **गङ्गाराम** एक विश्वस्थ तत्वावधारक उसके देखभाल के लिये नियोजित था। मैं उस समय ओड़िशा साहित्य अकादेमी के प्रतिनिधि के रूपमें सदस्य विनिमय योजना के अर्न्तगत एक महीने के लिए अकादेमी के आर्थिक अनुदान से सपत्निक उत्तर प्रदेश भ्रमण करते समय श्रीपति ने हमारे वाराणसी में टिकने की व्यवस्था गङ्गाराम के नाम चिट्ठी देकर करवाया था। समीप ही **चौवे जी** की मीठा दुकान और निरामिष भोचनालय था । हम पतिपत्नी वहॉ चाय पानी और लघुआहार तथा भोजन किया करते थे। वाराणसी **भैरवनाथ मंदिर चौक** की बायीं ओर गली में मेरे परम मित्र **डॉ.कमल गुप्त** , (अभिन्नात्म मित्र आर्न्तजातिक ख्याति सम्पन्न कथाकार विभुलीन **कमलेश्वर** के भी अन्तरङ्ग मित्र) **कहानीकार** के नाम से एक कथा-पत्रिका प्रकाशित करते थे। वे उसके सम्पादक थे। (के.अरविन्द कुटीर) । हम उनकी व्यवस्था से वाराणसी, सारनाथ आदि देख आए। वाराणसी में लगभग एक हफ्ता रुक कर वहांसे लखनऊ आए।

एक रोज हम सुबह सुबह चाय के लिए चौवे जी की दूकान को आए। वह चाय भी एक बूंद पानी मिली होती नहीं। उनके चूल्हें पर उबलता दूध से चाय बनाते देखकर कहते कहते कह दिया - ‘आपके फायदे के लिए कहता हूँ चौवे जी, कुछ पानी तो मिलाते दूध में ‘ ? और उन्होंने जो जवाब दिया उससे चकित, लज्जित हुआ । उन्हों ने कहा - क्या बात करते हो पण्डत ! अमरित के साथ जहर मिलाएँ ? मैं तो नफा उठा ही लूँगा, परन्तु कोई भोले पे चढ़ाने विश्वास कर के लिए लेचले तो भोलेको तो पता चल ही जाएगा कि उस चौवेने बेइमानी की है। और उस गराख को गुनाहगार न मानकर मुझे तो कतई माफ करेगा नहीं। ?‘ वेसी थी वाराणसी। प्रचुर भोजन प्रिय थे वहां के भगत। आध जलेबी दूध या आध जलेबी दही याने खोवा जलेबी आध सेर को आध सेर दूध या दही उनका लघु आहार था।

आज समकालीन शठ, प्रवंचना , प्रतारणा के विषम काल में कैसी है वाराणसी कह नहीं पाऊँगा। परन्तु वहां मेरी परमात्मीया कन्या नीरजा , उसके पति डॉ वाणी माधव,नातिन नाती कुहू केतन, अपना भव्य आवास है सारनाथ में (मधुवन) और दामाद **शार्ङ्ग देव कालेज** के प्रिन्सिपाल हैं। बादशाह हैं बादशाह । वे सारनाथ के पी.आर.ओ भी हैं। घर पर सबकुछ अमिश्र दूध दही और गोघृत से प्रस्तुत भोजन, गोसेवा उनमें नित्य आराधना पर्याय में है। माता को स्वयं नहलाया , गोशाल साफ करना मेरे उन वाराणसी के बादशाह दामाद करते हैं।....

वे हैं **भक्ति भाव भोले** सत्यनिष्ठ भगत ....

०००

हिन्दी रूपान्तरण

७.६.२०२३

ॐ
श्रीश्री मंहापुरुष अरक्षित दासाय नमः
०

श्रीश्री महापुरुष अरक्षरक्षक अरक्षित दास के मस्तक से गिरा केश को अति यतन से सहेज कर रखा था विभुलीन **आर्त महारणा** की धमेपत्नी **स्व.अम्वा महारणा** ने। और नित्य पूजा आराधना करती थी।

सम्प्रति महापुरुष की विवेचना से अपने घर पर विभु पग समीप निवास करनेवाले आर्त महारणा के वंशेद्भव समुदाय के क्रम विवरण इस प्रकार है।

१. आर्त महारणा – धर्मपत्नी अम्वा महारणा।
२. अन्तर्यामी महारणा – भाई – अविवाहित
३. परीक्षित महारणा – पुत्र पत्नी दुल्ली महारणा
४. भोवनी महारणा – धर्मपत्नी – जन्म महारणा
५. उनके पुत्र कंवू महारणा – धर्म पत्नी सोवनी महारणा
६, अनन्त महारणा – भाई– अविवाहित
७. कंवू महारणा के पुत्र भोकी महारणा – धर्मपत्नी सुकुटी महारणा।
८. उनके पुत्र हैं शुकदेव महारणा – धर्मपत्नी गुरुबारी महारणा।

(इस पवित्र अलौकिक तथ्य का विवरण प्रदान कारी हैं शुकदेव महारणा। जो अंवी महारणा की चौथी पीढ़ी के वंशज है । उनके कटक जिला स्थित माह्राङ्गा थानान्तर्गत ललित गिरि ग्राम के *शुकदेव महारणा* के वासभवन के नित्य आराधित होकर वह केश है। अलौकिक और विस्मयकर है कि वह केश क्रम अविवृद्ध होता जाता है। अब वे केश एक गुच्छे के रूप में हैं।

(पुनश्च – ललित गिरि के प्रवेश पथ पर जगतकरता पालक प्रभु अरूप अनाकार, अव्यक्त, अनन्त असीम अक्षय, अच्युत परमब्रह्म के नवम अवतार तथागत बुद्धदेव की पवित्र अस्थि एक स्वर्ण फरुए में आविष्कृत हुई थी। वह अपर एक प्रमाण है कि तथागत का जन्मस्थान **कपिलवास्तु** नहीं उत्कल का कपिलप्रसाद है। उसके अनति दूरी पर है **रत्नगिरि विहार** उसे सप्रमाण प्रतिपादित किया है बोधदर्शी, प्रसिद्ध, अप्रमित प्रतिभाधर कथाकार परम सुहृद् श्री शान्तनु आचार्य ने – **रचनाकर**)

सूचना – सुश्री विजय लक्ष्मी

०००

हिन्दी रूपान्तरण

७.६.२०२३।

आतङ्क नाशन हे ...... !

हम कोसल साहित्य सँसकुरुति अकादेमी , दि कोसल हेरीटेज ट्रष्ट के प्रतिनिधियों के रूपमें सितंबर २०१९ द्वितीय हफ्ते में कोसल के वृहत्तम स्वार्थ साधन और **नूआँखाइ भेटघाट** के लिए **जुहार** परिवार कर्तृक आयोजित भव्य समारोह में योगदान करने अध्यक्ष स्वरूप मैं, प्रमुख सचिव वाक्कील,पत्रकार, सुलेखक श्री गोरेखनाथ साहू , कोषाध्यक्ष वरिष्ठ वकील और पत्रकार श्री निमाँइ चरण नायक, शिक्षाविद सुलेखक श्री ब्रजमोहन दानी ने दिल्ली चलकर १४ तारीख को झारसुगुडा हवाई अड्डे पर आ वापस पहुंचे थे। उस अवसर पर जुहार परिवार ने नाट्यभूषण श्री जगदानन्द छुरिआ को उनके बहुबिध अवदानों के कारण अभिनन्दित करते हुए अभ्यर्च्चित पुरस्कृत किया था। अनेक राजनेता, पत्रकार, प्रेसक्लब, दिल्ली विश्वविद्यालय प्रेसमीट आदि विस्तारित विवरण अखबारों आए। हमारे उद्यम यद्यपि एक सफल पदक्षेप है , फिरभी , वह एक सुदीर्घ यात्रा का आद्य पदक्षेप है। उस समय विविध पावन्दियों के बावजूद प्रधान मंत्री के खास सचिव कल्याणीय प्रमोद कुमार मिश्र से भी मिलकर कोसल की सांस्कृतिक सामाजिक तथा सर्बप्राचीन भारतीय जन भाषा कोसलि अष्टम अनुच्छेद के अर्न्तगत सांसैानिक स्वीकति मान्यता आदि के बारे में भी विचार आलोचना कर पाये.... ०००

मैंने अभिन्नात्म परमहंस स्वामी प्रणम्य **श्रीश्री सत्यप्रज्ञानन्द सरस्वती** महाराज से ऊनकी अपनी एक आशीर्वादी माला के साथ बड़ीबड़ी रुद्ाक्ष गोटी की एक माला शोभन की अभिलाषा से कामना की थी। उन्होंने धारण के लिए दियातो है, मात्र उनके पास तत्काल बड़ी गोटी की माला न होने की बजह से बाद में व्वस्था कर देंगे कह कर जब हमलोग दिल्ली में थे तब आपने भी अपने सहयोगी मित्र तत्वावधारक तत्वबोधी संगीतकार **श्री संवित साहू** के साथ **मानसरोवर** की यात्रा की थी। वे भी अक्षरधाम आकर कृपानिधि **स्वामीनारायण** के दर्शनोपरान्त जाचुके थे।। **अक्षरधाम** में डीटेकसन की कड़ी पावन्दियां कठिन से भी कठोर होती है। मन्दिर भर में आपातत: पन्द्रह वेसे जांच अर्गल हैं। जहां सूई तक को वारण करके कें कें रट कर लालबत्ती जलाकर अगाह करते हैं। तब वहां के सुरक्षा कार्यकर्ता वारण योग्य सामग्यिों को जमा देकर गुजरने को कहते है। हमलाग उसी

जाँच तलाशी से बढ़जाते समय अकस्मात मेरे आगे जो आविर्भूत हुए उन्हें मेरे साथियों ने देखा नहीं है। कमर पर से बंधा घुटनोतक का रक्त वस्त्र, गले में रुद्राक्ष की मोटी माला सर्वाङ्ग भस्म विलेपित , आलुलायित जटाएँ , कपाल शोभी विमण्डित सिन्दूर गोरचना की टीका , मस्तक पर पगड़ी की भाँति एक सूक्ष्म रक्त वस्त्र–बन्धन , हाथ में धरे **विशाल त्रिशूल**। और मैं उस रुद्र रूप को चकित विस्मित अभिभूत, सम्मोहित नेत्रों से अपलक देखता। जो अर्गल सूई तक को नूकीला मान कर रोक रहा है उसे पार करके यह त्रिशूल आया किस तरह ? मैंने बस उन्हें मथानत विनम्र प्रणाम ही कर पाया। मेरे सामने दण्डायमान उन्होंने गुरु गम्भीर कंठ से पूछा – ' एक माला चाहिये था न तुम्हें ' ? और मेरे स्वीकार करने पर उन्होंने कहा – ' ठीक है , हम ही देते हैं ' ! और तत्काल बाँह ऊपर उठाकर मानों शून्य से आहरित करके मेरी ओर एक विशाल रुद्राक्ष की माला बढ़ा कर कहा – ' इसमें फुन्दली नहीं है । क्योंकि हम किसी एक जगह नहीं हर जगह होते हैं। स्वयं बना लेना। धारण करना नहीं। सम्भाल नहीं पाओगे। रखे रहना। '। और उसके बाद – ' जाओ अब आगे काई और तुम्हें रोकेगा नहीं, आशीर्वाद है '। कहकर फिर कहा – अब जाओ दर्शन करो ' कहकर मेरी बाहें पकड़ कर घूमा दिया । पलभर के बाद जब मैंने मुड़कर देखा तो मेरे सामने कोई नहीं था। । वे अन्तर्द्धान हो गये थे।

मेरे मित्रोंने उन्हें देखा नहीं। परन्तु मेरे हाथों में माला देखकर पूछा **यह माला पाए कहां से** और हमारे आसपास होते हुए भी वे कुछ भी देखा नहीं था, कुछ भी मालूम हो नहीं पाया था। उन्हें कहकर चकित विस्मित हुए। उसके बाद आगे मुझे एक भी अर्गल रक्षक ने रोका नहीं वरन प्रणाम करके बाहर से आगे बढ़ जाने को कहा।

मैंने अक्षरधाम परिसर से ही स्वामीजी को फोन लगाने का पयाव किया था। परन्तु उनके दूसरे राष्ट्र में तब होने के कारण रोमिङ्ग या कुछ और कहकर लग नहीं पाया। संवित मेरा नाती है। आश्रम अन्तेवासिनी तपस्विनी विशाखा दीदी की बेटी का बेटा। उसकी प्रवीण विदूषी बड़ी बहन आश्रम के प्रत्येक रचनात्मक प्रकाशन की तत्वावधारिका होने के साथसाथ आश्रम की सबकुछ है। मैं लौटकर आने के बाद मुझे संवित के ले चलने से परमात्मीय स्वामी जी को दिखाकर जो

हुआ मुझसे वह बयान सूनकर स्वामीजी ने बताया कि स्वामीनारायण के सम्प्रूदाय के हैं वे भी और मूझे उसके संबन्ध में ढेरसारे तथ्य भी देकर परितुष्ट किया है। शायद मैंने उनसे फुन्दली कहा तो उन्होंने कहा वह फुल्लरी है कहकर अपने गले की मुझे पहनाकर कहा आप पर अप्रतिम नेव भगवत् कृपा है। उस समय मेरे साथ श्री गोरेखनाथ साहू भी उपस्थित थे। उन्हों ने अपनी कुछ रचनाएँ भेंट स्वरूप समर्पण कर आए।

फिल हाल मेरी उम्र के कारण नेत्रज्योति काल समर्पित होने लगी है। यवकाँच से वर्ण पहचानता हूँ। कम्प्यूटर में जूम करके किसी ड्राफ्ट के बगैर जो स्मृति में सहेज दिया है कर्तापुरुष श्यामसखा ने उसीके भरोसे। इस परिणत आयुष्काल में अनुभव करता हूँ मानों जितनी याद है उससे कहीं अधिक भुल गया हूँ । लगता है जो याद है नहीं फिर वही चमक जाती है।

हे कर्तपुरुष जगतपालक आतङ्कनाशन हे ! महिमा महिमार्णय की कोई चिन्ता नहीं है शायद कि आपके असहाय भक्त समूह किस मारात्मक विडंवित स्थिति में हैं। जो नित्यप्रति, निरत निरन्तर बढ़ती जा रही है आप करुणानिधान **आतङ्कनाशन प्रभु** के रहते हैं आतङ्कित... ...

० ० ०

हिन्दी रूपान्तरण ९.६.२०२३

शुक्रबार ३.२५ ए.एम्

सर्वनाम कृपामय कर्ता पुरुष का ... ...

०

सब का मालिक वही एक। दास भगत का मरम समझनेवाला मालिक ही हमारा असली मालिक है न? विश्व भर के क्षेत्र,जाति. इर्म, वर्ण, विश्वास आस्था वे अलगअलग नामों में वही एक कहलाता है। वही लय अटूट रखकर विलय करता है। और करोड़ो को न जानकर एक को जानता हूँ जो दण्डित करता है , वही क्षमा देकर कृपा के अमृत–बर्षण भी करता है। अहंकार गर्वभञ्जन करके गुहार प्रार्थना भी अङ्गीकार करता है।

धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र के समराङ्गण में **पितामह भीष्म** ने जिस समय सिद्ध वाण सन्धान अरूप अनाकार, अणूअणु मे विद्यमान लीलामय के उद्देश्य से करते जा रहेथे तब उन्हें प्रभु के समीप तक न पहुंच पाते देखकर चकित विस्मित **भक्ति** भाव तन्मयता से अन्तरात्मा में दिव्यपुरुष के दर्शन करके गुहारने लगे – ' गोविन्द, मेरे एक भी सिद्ध दिव्यास्त्र क्यों तुम तक पहुंच भी पाते नहीं ' ? तब उत्तरस्वरूप शून्य में परिपूर्ण इच्छामय प्रभु ने कहा – ' कहाँ पहुँचेंगे वे वाण ? मैं कहाँ हूं नहीं जो पहुंचकर लक्ष्यभेद करें ? मैं एक ही पल में प्राप्त आपके सारे देवदत्त वरदान निष्फल कर सकता हूँ । प्रभु की अपार कृपा करुणा से पितामह भूलुण्ठित हुए नहीं और सव्यसाची उनके सर्वाङ्ग वाणविद्ध करतेहुए एक शया प्रस्तुत कर दिया। लुलायित मस्तक के लिए एक उपाधान भी शर सन्धान करते हुए करदिया। तब पितामह गुहारते कहा – ' गोविन्द, मुझे शरशय्या में होते समय दरशन देने की कृपा अवश्य करना। भावी सम्राट धर्मराज युधिष्ठिर के साथ आना। भावबोध से मैंने दाराग्रहण न करने की प्रतिज्ञा करके अविवाहित रहने के कारण मेरा अपुत्रिक दोष खण्डन करदेना। मैं हृद्‌बोध करता हूँ यथार्थ में मैं कौरवों को सुरक्षित संरक्षित कर रखनहीं पाया, उनके आगे ढाल के समान। सत्य धर्म के अङ्गीकार न करके दुराचारी अह्ंकारी दुर्योधन के मदान्ध कर्म आचरण का मौन रह कर अलक्ष ही सम्मति जतायी है। उस समय प्रभु ने उनका अपुत्रिक दोष खण्डन करके कहा– जो जन अपने पितृपुरुषों की पार्वण श्राद्ध तिथि में श्राद्ध करेंगे वे समीचीन विधि

से आपके लिए तिलतर्पण करेंगें। पिण्डदान भी करेंगें। और पितृपक्ष की नरूपित तिथि तथा महालया के अवसर पर वही अयश्य होगा, नोचेत कर्म असम्पूर्ण माना जाएगा। प्रभु जिस समय धर्मराज के साथ दर्शन देने आए उस समय शरशय्या से हाथ जोड़े जिन जिन नामां से उनकी स्तुति स्तवन किया था पितामह ने वही**विष्णु सहस्त्र नाम** के रूप में पावन और ख्यात और अङ्गीकृत है। उस समय पाण्हवों के अन्य सभी भाई तथा कौरव भ्रातागण भी उपस्थित थे। पूभु के समक्ष पितामह ने वे तृषार्त्त है और जलपान की इच्छा की , और वह भी कहा कि मेरी पतित पाक्नी माता का जल दो। तब बिभु आदेश से पार्थ ने शरसन्धान करके अतल भेद करने से उच्छलित जान्हवी गङ्गा जल सवूरित होकर पितामह की तृषा निवारण किया थ ।इन सब के मूलाधार के रूपमें भक्ति भाव भोला तन्मय आतुर चित्त का आसक्त अनुराग ही निहित था।

धर्मराज को भारतवर्ष के भावि सम्राट के रूप में संवोधित करके पितामह ने जो कहा उपदेश की भॉति अनुप्रेवरक दिया था उसे मैं उत्कलयी महाभारत की अनुसर्जना आदि महाकवि शूस्त्रमुनि **शारळा दास** की भाषा में, जितना यास कर पाता हूँ प्रस्तुत करता हूँ –**'कवि कथाकु अन्यथा न करिबु बाबू । लेखनकार कु सदा मान्य देउथिबु ।।**' मैं मेरे प्रिय पाठकों से क्षमा प्रार्थना पूर्वक अनुरोध करताहू , मेरी क्षीणदृष्टि के कारण असमर्थ हूॅ , ग्रंथ–मंथन सम्भव है नहीं। नारायण स्वरूप श्रीकृष्ण द्वैनायन व्यासदेव ने प्रज्ञापित किया है उसका स्मरण कर नहीं पाता हूँ। मेरा इस परिणत आयुष्काल । मैं अनुभव करता हू मानों जो मुझे याद है , उससे कहीं अधिक भुलचुकाहूं। यह द्विरुक्ति है , पर सत्य है। हे मेरे भकति भाव भोले तन्मय पाठक पाठिकाएँ मेरी अबोध ा अविज्ञता को क्षमणीय है , विचारेंगे। ' भक्ति तेसुलभ हरि तर्के बहु दूरे ' । विचार से भावरसास्वादन करेंगे। भावग्राही ग्रहण करके आप पर निरत कल्याण–अमृत करते रहेंगे......

जय हो ! निरामय यशस्वी सुखी बनें आप ! जय हो जयजय हो !

०००

कवि कुटीर, बलाङ्गीर

हिन्दी रूपान्तरण

९.६.२०२३

७.२५पी.एम्

ॐ

हरि अनन्त हरिकथा अनन्ता

०

अनन्त हरिकथा के प्रज्ञापक मृत्युञ्जयी होते है। अमरात्मा हरिप्रिय होते हैं वे सारस्वत रचनाकार कवि सम्राट् **उपेन्द्र भञ्ज** कवि न होकर यदि राजपद से सिंहासनाभिसिक्त हुए होते तो आज हो सकता है विस्मृति के अतल गर्भ में विलीन हो चुके होते। परन्तु, शाश्वत सारस्वत रचनाकार कवि होने के कारण काल-कालान्तर में भी अमर कालजयी पद पर अधिष्ठित होकर रहेंगे।

अनन्त रामकथा की आर्य भारत में सर्वप्राचीन जनभाषा **कोसलि** वर्ग की ललित अनुपम **भक्ति** आश्रित काव्य रचना है **राम चरित मानस** । तथा उसी आर्य भारतीय भाषा समूहों में द्वितीय शास्त्रीय मर्यादा विमण्डित भाषा है , दिव्य अप्रमादी सिद्ध वयाकरणिक अपूर्व सङ्गीतमयी भाषा है **ओड़िआ** । जो गेयता, आलङ्कारिक अनुशासित विन्यसित दिव्य भाषा है। उसी भाषा में प्रणीत है वैदेहीश विलास । दोनों अप्रतिम रचनाएँ हैं **प्रवन्ध काव्य** हैं । यही साहित्य रचना रीतिविद् बोधदर्शी महापुरुषों के प्रज्ञापित सिद्धान्त है। उभय रचनाओं के आख्यान उपाख्यानों का क्रम समान है । किन्तु , **मानस** का रस है **भक्ति** और **वेदेहीश विलास** है **श्रृङ्गार** रसाप्लत। रामकथा के विन्यास में रस श्रृङ्गर के होने पर भी अन्तरात्मा में भक्ति की उपेक्षा कतई सम्भव नहीं है।

मैं रससिक्त वैदेहीश विलास में भक्ति के प्रगाढ़ प्लावन की स्वच्छ निर्मल धारा के अपूर्व अनुपम दृष्टान्त उपस्थापित करने का विनम्र प्रयास करूंगा। यह मेरी अभिलाषा है। जैसी सर्वश्रेष्ठ कवि, सङ्गीतज्ञ नृत्यविद् , कलाकार कृपा अकूपार जगदीश्वर श्यामसखा की इच्छा है। वे जो कहेंगे लिपिबद्ध करता रहूंगा।

भक्ति के रूपायन हेतु मैं उसकी पृष्ठभूमि को प्रज्ञापित करना चाहता हूँ। सोचना हूँ वह आवश्यक है। अहल्या थी पितामह ब्रह्मा की मानस कन्या। सभी सौन्दर्य आहरित करके उन्होंने अहल्या की सर्जना की थी । उस समय विटप लम्पट देवराज इन्द्र ने सोच लिया कि पितामह मुझे कन्या समर्पण करदेंगे ,

परन्तु पितामह ने वह न करके; उस समय महामना महर्षि गौतम जो वेदों की सर्वजन बोध्य भाष्य टीका की रचना निमग्न थे , उनके अवसर विनोदन हेतु उन्हें कन्यार्पण कर दिया। महाऋषि ने अंङ्गीकर तो किया किन्तु परम अतुल्य लावण्यवती , सकल विद्यावती अहल्या से कहा – 'मैंने तुम्हें सम्प्रति मानसिक स्तर में स्वीकार किया है , कायतः नहीं। कारण हो सकता हैं उसकी बजह से मेरी एकाग्र साधना तपस्या विचलित होगी। अतः तुम समुचित काल तक तपस्विनीसदृश ब्रह्मचर्य पालन पूर्वक आश्रम अन्तेवासिनी बनी रहोगी , जिसे आनन्द मन से अहल्या ने सहर्ष स्वीकार किया।

उस दिन महषि नित्य की भाँति आश्रम से स्नानार्थ प्रस्थान करके जाने कारण उनकी अनुपस्थिति से अवसर सुयोग पाकर देवराज इन्द्र महर्षि के छद्म रूप में उपस्थित हुए। जेसे कि स्नान समापन कर आये हैं। किन्तु अति स्वल्प काल में स्नान कर के लौटे पति को देखकर तथा उनकी कामेच्छा व्यक्त करने के कारप ,वह समुचित काल उपस्थित हुआ मानकर अहल्या ने परिपूर्ण मन से देहदान किया। और इन्द्र के प्रत्यावर्तन कर जाते देखकर सर्वज्ञ महर्षि घटित घटना पूर्णतया ज्ञात होगये और देवराज को अभिशापित करके सर्वाङ्ग योनिमय कर दिया। देवराज महर्षि कुछ और भी दण्डविधान कर सकते हैं , आशंका से भयभीत होकर अन्तर्हित होगंये।

महर्षिने अहल्या को प्रस्तरवत् सर्वानुभूतिरहिता कर दिया। किन्तु वे अहल्या के कातर प्रार्थना से वह अहल्या का दोष नहीं , दोषी इन्द्र हैं हृद्बोध कर के कहा मैंने जो श्रापित किया है वह अन्यथा नहीं होगा । परन्त, इस पथ से होकर प्रभु मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम सपत्नी सानुज वनगमन करेंगे। उनके श्रीचरण रेणु के पावन स्पर्श से तुम्हें तुम्हारा कायाशुद्ध रूप प्राप्त हो जाएगा। मेरे तुम पर कोई आक्रोश दुर्भावना है नहीं। तब तक मेरी एकाग्र तपस्यासत् वेद भाष्य प्रणयन भी सम्पूर्ण होगया होगा।

सर्वज्ञ कर्तापुरुष करुणावरुणालय पभु ज्ञात होकर अपने श्रीचरण रज पतित शिला पर बिखेर कर अहल्या पर अपार कृपा की अमृत वर्षा की। और अहल्या ने अपने कायाशुद्ध पूर्वरूप लावण्य प्राप्त होकर महर्षि गौतम के अङ्गीकार से आश्रम में कर्त्री स्वरूप अवस्थान किया था। सती शिरोमणि पंचसती सर्व पात्क

हारिणी हैं , प्रातः वन्दनीया के सम्माननीया और पूजनीया हैं। (पंच सतियाँ – अहल्या,, द्रौपदी , तारा , मन्दोदरी, कुन्ती।)

कवि सम्राट्, शब्दविन्यास तथा आलङ्कारिक अप्रतिम यादुगर **उपेन्द्र भञ्ज** ने अपनी श्रृङ्गार रसाप्लुत अनुपम काव्य रचना **वैदेहीश विळास** जिस प्रकार प्रगाढ़ तन्मय भक्ति के रस प्लावित किया है वह प्रभु के विष्णुपद नाखून कोण से उद्भविता माता पतित पावनी गङ्गा पार करने के करने के राग चोखी से विन्यसित सर्ग में गभीरता से निहित होकर है (यह राग चोखी गायन की शैली नहीं हैं , उत्कलीय काव्य रचना की शैली है , उपेन्द्र भञ्ज तथा महा कवि गङ्गाधर उसके माहीर थे (तपस्विनी – मङ्गळे अइला उषा द्रष्टव्य – रूपान्तरणकार)। मैं उसे संक्षेप में उपस्थापिता करूंगा । । पदों की उद्धृति हुबहू प्रस्तुत करूंगा । पयूक्त सारे शब्दों के संस्कृतनिष्ठ होने के कारण हिन्दी और अन्य गाषाभाषियों के समझने में कोई कठिनायी होगी नहीं, आशा करता हूँ । भारत वर्ष में **रामकथा** के परम अधिकारी इतालीयन **फादर कामिल बुल्के** अपने **रामकथा के उद्भव और विकाश** ग्रंथ में (यह ग्रंथ **रामकथा** के नाम से भी प्रकाशित है। हिन्दी परिषद **प्रयारग विश्वविद्यालय** के द्वारा भी प्रकाशित) इस ग्रंथ में फादर ने सहस्राधिक प्राच्य पाश्चात्य रामायण. रामायण आधारित काव्य खण्टकाव्य नाटकादि की सूचना देते हुए उनकी समीक्षा विवेचना भी की हैं। इसमें वैदेहीश विलास और महाकवि मेहेर की तपस्विनी भी नामोंल्लखित होकर हैं। उसी प्रकार चित्रकूट के **पीठाधीश श्रीश्री परमहंस रामानन्दाचार्य** परम पावन शङ्कराचार्य सदृश अधिष्ठित होकर हैं , अपने प्राज्ञ प्रवचन से रामकथा के विविध सुकुमार रससिक्त रसाणित आख्यान उपाख्यानों की उपस्थापना किया करते हैं। बलाङ्गीर में उनके प्रवचन के सप्ताहव्यापी **मानस** आधारित प्रज्ञापन के मुग्धश्रोताऔ में था । लगता था मानों मर्यादा पुरुषोत्तम विद्यमान होकर हैं। जिस प्रकार चित्रकूट घाट में – ' **तुलसी दास चँदन घिसे तिलक करे रघुवीर** ' ।

इन सब के मूल आधार के रूप में भकति भाव भोला एक सम्पूर्ण समर्पित हृदय ही विद्यमान हुए होता है। मैं मेरी इस सुकुमार सङ्कलन **भक्ति** में अर्न्तनिहित भाव ही समावेशित करने का विनीत प्रयास करूँगा।

शङ्कर और श्रीराम, ये दोनों महिमामय प्रभु अभिन्न और एकात्म हैं। **रामेश्वर** का अर्थान्वयन तत्वदर्शी विद्वान भक्तों ने किया है। **रामस्य ईश्वर यः सः**

रामेश्वर और अनुरूप **रामः ईश्वर यस्य सः रोमश्वर '** । दोनों दोनों के भक्त हैं। जब परम भाक्त महामना **रावण** को महेश्वर ने सभी शक्तियों की क्षमता दे दी तब माता उमा ने जिज्ञासा की थी – 'प्रभु, आपने तो सबकुझ दान कर दिया , आप त्रेतया में क्या लेकर प्रभु की सेवा करेंगे ' ! तब महेश्वर ने कहा – ये सारे तो प्रभु की देन हैं। और मैंने रावण को मेरे एकादश रुद्रावतार में से मात्र दश ही शक्तियां प्रदान किया । और कहा है कि मैं रावण के पूजापीठ पर स्वयं उपस्थित होकर आराधना पूजार्घ्य स्वीकार करूँगा। और मेरे एकादश रुद्रावतार अतुलित बलधाम **मारुति नन्दन** के रूप में अवतरित होकर प्रभु की सेवा करूॅगा। एक बार प्रभु श्रीराम ने महेश्वर से कहा कि मैं आप के रूप में लङ्केश के पूजापाठ पर आराधित होने को चलने की इच्छा करता हूँ। तदनुरूप उपस्थित हुए भी किन्तु भकति भाव भोले रावण ने वह ज्ञात होकर प्रभु से प्रार्थना की – प्रभु , यह लीला न रचाएँ। मोक्ष मुक्ति ही मुझे काम्य है। कृपानिधान , कृपा करें ' ।

वैदेहीश विळास में प्रभु जिस समय गङ्गा पार करने को सपत्नी सानुज उपस्थित हुए तब लाख बुलाने पर भी **विज्ञानी** (विशेष ज्ञान है जिसका वह विज्ञानी तथा विगत ज्ञान है जिसका वह भी विज्ञानी – दृष्टान्ततः विधावा) कैवर्त्त ने सुना नहीं किन्तु कुछ समय के उपरान्त कातर कण्ठ से कहा – **' बधिर नुहइ वीर कहिला तहुँ धीवर जाणिलिणि पथरे पथर अबळा । बालि पड़ि तो चरणु नउका नायिका हेले बुड़िब भेळा '** ।

आपके चरणों से बालू पड़ कर पत्थर किस भाँति जीवन्यसित होकर अबला बन गयी तो यदि मेरी यह आशङ्का है कहीं मेरी यह नांव पैरों के बालू लग कर नायिका न बन जाए। तो मेरी तो वृत्ति ही डूब जाएगी। क्यों कि यह मेरी एकमात्र वृत्ति है जिससे मैं मेरे कुटुम पालन पोषण करता हूँ । अतः मैं आपकेपैर धोये बिना नांव पर बैठने नहीं दूंगा। अर्न्तयामी कैवर्त्त के तन्मय आस्थामय भाव ज्ञात होगये । भावग्राही हैं न प्रभु ? भकति भाव भोला तन्मय वह कैवर्त्त। तदुपरान्त – बढ़ाइ देले पयर भावग्राही रघुवीर विज्ञानी कैवर्त्त धोइला॥ फिर अपनी अँगोछी आँचल से पोंछ डाला। जिन श्रीचरणों का प्रख्यालन पितामह ब्रह्मा करते हैं, वह सौभाग्य प्राप्त हुआ कैवर्त्त । विज्ञानी का अर्थ विशेष

ज्ञान के अधिकारी तथा विगत ज्ञान है जिसका दोनों हैं। उसी प्रकार पयर पय अर्थत् जल और पयर चरण भी वैदेहीश विल्ळाश के इस भांति अगणित शब्द चातुरी लक्षणीय है। प्रभु ने जब कैवर्त्त को महासुल के रूपमे अपनी मुद्रिका देने लगे तो कैवर्त्त ने मना करते हुए कहा – आप भी तो वृत्ति से खिवैया हैं इहलोक से परलोक को पार कराते हैं। मुझ पर कृपा करके यह भवसरिता पार करा देंगे........

०००

रूपान्तरण

१४.जून २०२३

०१.१२ ए,एम्

अनाथ नाथ

(आत्मानूभूत ललित निबन्ध)

०

किसे अनाथ करके रखे हो बलिआरभुज ! महाशून्यता की अप्रमेयता में हे अव्यक्त अनाकार परिपूर्ण विद्यमान हो । महिमा महिमार्णव ने ज्योतिवन्त किया है महाव्योम अनन्त असीम नभ को। आलोक उद्भास से कृतार्थ प्रमुदित आकाश कल्याण की वर्षा करके, हे कृपामय प्रेममय। आपकी प्रियतमा वसुन्धरा के वत्सला तन को अधिकाधिक शिहरित रोमाञ्चित करके पल्लवित, पुष्पित फलवन्त करते चले हो, निरत निरन्तर अनुक्षण ! मुग्ध विभोर हैं आप दोनों **द्यावा–पृथ्वी** ; रासरचाते हे रसपुरुष अहर्निश आप के यशोगान मूर्च्छित होकर है गगन पवन; परिपूर्ण ! **रसौ वे सः** अनाहत अनहद नाद ! सुगन्ध सुरभित मरुत् प्रीति स्पर्श से आमोदित करता जा रहा है प्रकृति को। कामिनी तटिनी को करते हो पूर्णगर्भा, श्यामल शोभा से तट विमण्डित करके अपूर्व छन्दायित लास्य उल्लसित गति से । हे महासागर, तुम्हारी महाशून्यता में एकात्म तन्मया , अभिन्न एकात्म होने की आतुर अभिलाषा से द्रूततर लय में समाहित होते समय निविड़ परिरम्भ में स्वागत करते हो न महाबाहु , छन्दायित कामिनी सरिता को !

तृषा–क्षुधा के अनुपात से जल भोजन दिया है । यहां तक की पङ्क कीट भी उससे वञ्चित है नहीं। जिसे जहाँ नियोजित करके भेजे हो उसे अनुरूप शक्ति सामर्थ्य भी दिये हो। जैसे वह तुम्हारे आदिष्ट काम पूरा करपाए। कवि करने की क्षमता प्रदान करने कों उसे दु:ख वेदना शोकातुरता हर भाँति भावपीड़ित करते हो करुणावारिधि, वह तुम्हारी महिमा गान करने की तन्मयता से रामायण की रचना की है और कृपानिधि आपने उसे आदि महाकवि की महिमा विमण्डित करते हुए प्रतिष्ठित कर के मर्यादित किया है। **ब्रह्मा** और **वामदेव** नारद ने **रत्नाकर** को वाल्मीकि में रूपान्तरित कर के प्रकाण्ड पण्डित , सर्वशास्त्रज्ञ , त्रिकालदर्शी ,हर प्रकार विद्याधूरीण तो कर दिया।परन्तु दु:खातुरता का न वह सामर्थ्य था ?बाल्मीकि आपकी इच्छा से कवि हुए ? वह व्याध तो आपके संङ्कल्प का माध्यम और

निमित्तमात्र था। काममोहित क्रौंच युगल के एक , प्रियतमा को शरबिद्ध करके वध करदिया जो स्नानार्थ चलते महर्षि ने देख कर दु:ख शोक कातर हुए , व्यथित हुए और उस व्यथा ने **व्याध** को अभिशप्त करते हुए कहा ' **मा निषादं त्वमऽगम शाश्वती समा , यत् क्रौंचमिथुनात् एकमवधि काम मोहितम्** '। इस अभिनव पद्य छन्द रीति लय सारास्वत सर्जना के लिए करुणाद तथा आप महिमा महिमार्णव को भी **मर्यादापुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र** के रूप में पहचाल दिलायी । आदि महाकवि, आदि महाकाव्य **रामायण** के रचयिता वाल्मीकि न केवल पावन भारतवर्ष के वरन् विश्व के महामहिम आदि कवि हैं।

हे कुटिल कृपामय, गहन विषम है आपकी परीक्षा की रीति। अपने ही कुल, कुटुम्व, स्वजनों के रक्त से कर्द्दमाक्त कुरुक्षेत्र मे होकर महाभारत महासंग्राम की कथा इतिहास को लिपिबद्ध करने के दायित्व आपही ने नारायण स्वरूप श्रीकृष्ण द्वैपायन **व्यासदेव** पर न्यस्त कर दिया न? अपनी त्तच्छा अभीप्सा के सूत्र से ! महर्षि व्यसदेव में शक्ति भी थी कि **दिव्यचक्षु** के अधिकारी कर पाए **सञ्जय** को । और प्रखर प्रज्ञावन्त सञ्जय दुराग्रही मोहग्रस्थ **अंध सम्राट्** को महासमर के धारा विवरण प्रदान कर पाएँ ! फिरभी उनके परम सत्यबोध न हो पाने का कारण उन्होंने प्रार्थनापूर्वक कामना की ' **सत्यं परमं धी मही** ' । और आपने **तथास्तु** कह अंङ्गीकार किया । परिणामत: महाभारत के उपरान्त सर्वश्रेष्ठ प्रीति महाकाव्य **श्रीमद्भागत** की रचना करके आप महिममार्णव के यशेगायन पूर्वक आपही की बाललीलाओं की रसामृत पान करापाये जगत् को और परितृष्ट किया है !

हे अरूप अनाकार, अव्यक्त , अनिर्वचनीय,अप्रमेय, अकल्पनीय अवर्णननीय, अचिन्त्य, अनन्त, असीम,अक्षर, अजन्मा, शून्यविहारी जगतस्रष्टा पालक आपने अपने अंशमात्र कला देकर निरूपित कर्म सम्पादन हेतु जिन अवतारी भगवानों के रूपमें अवतरित हुए , वे यद्यपि सारे जगत के हितकारी, दु:खापहारी, है उन्हें दु:खमुक्त किया नहीं। क्यों कर ? कल सुबह राजा होनेवाले दिव्य पुरुष को वनवासी कराये। और भी अगणित दृष्ठान्त हैं पुराणों में। और कहीं जगहमिली नहीं कि वन्दीशाला में फाटक पर है विशाल ताला , सशस्थ पहरेदार , बाहर घनघोर वर्षा, यहां तक कि बेड़ियों से जकड़े हुए माता पिता वहीं अवतरित कराये अपने **शिशुकृष्ण** रूप को ? सजग कंस के प्रताड़न से छिप कर पिता ने भरी

उफनती नदी पार करके गोपन ही नन्दपुर गोप में **यशो दी** की कोख में शायित कर आया। क्या वहाँ दानव राक्षस अत्याचार उत्पात कम था ? यहां तक कि सात दिनों के सुकुमार शिशु को मातृवत् स्नेहादर से दूध पिलाने को जो राक्षसी उपस्थित हुई थी वह भी स्तन पर विष लेपन करके आयी थी। और अगणित आख्यान हैं। वे सारे सर्वज्ञात सर्वज्ञात आख्यान उपाख्याप हैं । प्रस्तुत न करके विज्ञजनों से प्रार्थना है, चाहें तो पौराणिक ग्रंथ मंथन करलेंगे ।

आज मानव अपने दु:ख दर्द को ही सबसे बड़ा है , मानने लगा हैं। किन्तु असल साधू संत अपना दुख को कुछ भी है नहीं मानते हुए जगत-दु:ख देखकर आतुर कातर हुआ करते हैं। और वे सनाथ हैं। आपके जिम्में सबकुछ सौप नौछावर करके निश्चिन्त मन से नाम सङ्कीर्त्तन में लीन तन्मय रहते हैं। परम दिव्य चक्षुस्मान अंध संत कवि भीम भोई , तो आप महिमामय के भकति भाव भोला भगत हैं न ?

अनुभवी भक्त कविकुल कहते हैं कि आप एक विन्दू भक्ति-प्रीति के बदले सिन्धु के समान लौटाया करते हैं। लोभ माया मोहबन्धन मे आबद्ध मनुष्य का धन शून्य होजाता नहीं है क्या ? किन्तु वह सोचा करता हैं , क्यों कि वह खरचता नहीं हैं, लोक कल्याण हेतु भी पाईतक का अनुदान देता नहीं है,अत: शून्य नहीं होगा। मात्र वह उस सच को जानता नहीं है, कि उसे वह भोग कर नहीं पाएगा भी। आप महिमा अकूपार तो अतुलित रत्नाकर के जामाता हो ? क्या कमी है आपकी ? ऐश्वर्य की अधिष्ठात्री महालक्ष्मी जिसकी प्रियतमा पत्नी है , पद सेविका है, उसकी अनन्त अप्रमित सम्पत्ति के आकलन भी सम्भव है नहीं। उसके विपरीत अपने हिस्से के भाग को अंशत: भी क्यों न हो हड़पनेवाले का भी तो निस्तार है नहीं! जब तक उससे वह वापस न पालेते तब तक माफ भी तो कर नहीं देते हो ! उसी को कविगण आपकी माया लीला कहते हैं ! आप मणिमा महिमार्णव रसभोगी हैं । द्वारका के प्रमोद उद्यान में आपकी अप्राकृत प्रीति-प्रतिमा कृष्णा के भाव विनोदन हेतु स्वयं काटकाट कर आम न परोस कर उन्हे खिलाते जाते समय जानबूझ कर अपनी ऊंगली ही काटडाली तो, तब घेरे खड़ी इर्षिता अष्टपाटवंशियें को इस भांति चौंकाए कि वे प्रासाद के भीतर दौड़ भागीं, रक्त क्षरण के उपशमन के प्राथमिक प्रतिकार की व्यवस्था करने । राजवैद्य को खबर देने । मात्र असफल

नाकामयाव खाली हाथ लौट आयीं। रङ्गअधरों में मंद मधुर स्मित हास से पीतवास ने उन्हें निहारे सान्त्वना देने के बहाने कहा न प्रभु कि ' तुम सब चिन्तित न हों। सखी ने अपनी बहुमल्य पीतांवरी पाट चीर कर क्षत पर लपेट देने के कारण अब रक्तक्षरण बंद हो गया है और पीड़ा भी है नहीं। ...... और ऊँगली उठाकर रानियों को दीखाने लगे। ......

... विपरीत उसके महर्षि सान्दीपनी के आश्रम में विद्यार्थी जीवन में उस दिन प्रात:काल समिध संग्रह के कर्तव्यानुरोध से सहपाठी मित्र सुदामा के साथ चलते समय वत्सला गुरुमाता ने सुदामा के आँचल में , वन में भूख लगे तो दोनों खा लेना कहकर कुछ भूनें अन्नकण बांध दिया था। उन्हीं अन्न कणों को झूठ कह कर सुदामा बर्षांधकार में अकेले खालिया था। (आख्यान पहले भी सूचित कर चुकाहूँ)वही अपने अंश के भूने अन्नकण वापस न पाने तक आप महिमार्णव ने सुदामा को अरक्षित कङ्गाल कर के रखदिया था न? और पा लेनेके पश्चात पलभर में आपकी ऐन्द्रजालिक करुणा से जो करदिया सुदामा अपनी झोपड़ी ही को ठौरा नहीं पाए। उसी जगह राज महल की भाँति एक प्रासाद रूपान्तरित होकर था। सामने राजराणी सदृश दिव्य वेश रत्नालङ्कार भूषिता पत्नी द्वार पर ही से भ्रमित विमोहित पति की वन्दापना करके स्वागत अगवानी कर भीतर ले चलने को खड़ी पत्नी तो थी परन्तु सुदामा ने वह स्वीकार न करके उसी प्रसाद के समीपएक कुटीर निर्माण करके अवस्थान करके प्रभु मनन चिन्तन में निमग्न निमज्जित होकर आराधना, भजन संकीर्तन करते रहे। उन अनाथ को सनाथ करने की वह सखा की करुणा थी।

और कुरु राजसभा में उस आंचल के टुकड़े के विनिमय में स्वयं वस्त्रावतार में अवतरित होकर प्रियसखी को बाहों मे भर कर घेरे रहे न कृपामय , कुटिल प्रियतम !

उसीसे मथानत होकर करके पूछता हूँ श्यामसखा , किसे अनाथ करके रखाहै आप कृपा करुणानिधि लीलामय ने ?

हे जगदानन्दकन्द , अनाथ तुम्हें निरीह प्यासी आँखों से एकटक ताके रहते हैं। चाहते हैं। और और कुछ का लोभ होता नहीं है उनमें। उनमें प्रखर आत्मविश्वास स्वरूप तुमही उदित विराजित हुए रहते हो। वे सारे सत्य-असत्य,

धर्म – अधर्म के भेदबोधी । समर्पित भक्त हैं। जानते हैं की तुम्हें चाहने से सबकुछ की प्राप्ति हो जाती हैं। और और को चाहनेवाला तुम्हें पाता नहीं है और तुम्हें न पाकर , और कुछ भी न पाकर निःस्व निकांचन हो जाने पर भी दर्प दुराग्रह के मायाजाल से मुक्त हो नहीं पाता। उसका चरम दृष्टान्त तो महाभारत महासमर की चरम अन्तिम परिणति है । समदर्शिताविहीन भेदबुद्धि का मनुष्य को कुछ भी प्राप्त नहीं होता। उन अंध सम्राट् ने पूछा – धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युजुत्सव । मामका पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत सञ्जय।। क्या पाण्डव तेरे नही हैं जो पूछा मेरे और पण्डु के पुत्रों ने क्या किया ? सब मेरे हैं विचार से अभिन्न करके पूछा होता तो सकता है सयामय अपने निर्णय बदल देते ! महासमर बंद भी हो गया होता। सबकुछ सुनसुन कर भी , स्थिति समझते हुए भी अन्त में किस विचार से पूछने लगे– समर की अन्तिम परिणति क्या होगी सञ्जय ? क्या यह सुनने को **'जहां योगेश्वर श्रीकृष्ण हैं , जहां धनञ्जय पार्थ हैं विजय विभूति तो वहां होगी ही '** ! कहकर क्षुब्ध व्यथित सञ्जय धाराविवरण को ही विराम दे आये।

आवश्यकता से अधिक निश्तिच रूपसे गलत राह पर ले चलकर भरमाता है; इस विचार से करुणावरुणालय प्रभु भगत को उसकी आवश्यकता से अधिक देते नहीं हैं , और कुछ अनचाहा भी देते नहीं हैं। सचमें दुर्योधन की क्या कमी थी, अभाव था जिसे पूरा करने के लिए अन्य के न्याय्य अधिकार की हत्या करके मैं मेरा के अभिमान अहंकार से मोहासक्ति से छीन लेने की दुर्वार लालसा जागी थी उसमें, जो उसने भी कर नहीं पाया। ! उस भांति के **अनाथ** को **सनाथ** करने की इच्छा भी प्रभु में होती नहीं है। प्रत्येक काल में जिस तरह आसन, शासन, पद, मर्यादा ,प्रतिपत्ति विभूषित **अनाथ** गण धन, विद्या, बुद्धि सबकुछ होने के वाबजूद सख्य कार्पण्यता के कारण निरपेक्ष , सत्य यथार्थ के स्तावक , परोपकारी हो नही पाते हैं । उसी बजह से दूसरों के उत्तरण का पथरोध करके स्वयं ही **अनाथ** स्वरूप कदम बढ़ाकर वित्ते भर आगे बढ़ नहीं पाते हैं। प्रभु बिलकुल अलभ्य है नहीं। वे जिस रूप में प्रीति–कङ्गाल हैं कि उनकी भांति उनके सरजित जगतभर में कोई एक भी है नहीं। उन्हें पाने की आसान तरीका है कि पहले तो अपने आप से प्यार करो , अपने से प्यार कर अन्य को चाहो उसी प्रकार प्यार स्नेह से समाज समूह जगत से स्नेहमय मित्रता स्थापित हो । यजुर्वेद में एक मंत्र है **' मित्रस्य चक्षुसा '**।

उसमे अन्तर्निहित उपदेश अनुप्रेरणा यही है। तुम एक तन्मय स्नेह सौहार्द् के कदम बढ़ाओगे तो प्रभु तुमसे मिलने दश कदम बढ़ कर आगे पहुंच आएँगे अपने आप तुम्हारे पास ।

जगतबन्धु दीनबन्धु सबके बन्धु हैं। सामान्य विचार से हम बन्धुहीन किसी एक को निर्विकार **अनाथ** कह सकेंगे। प्रभु के प्रति समर्पित आस्था और विश्वास के बलबूते पर महाप्रभु जो भी करेंगे वह मङ्गलविधान के लिए ही करेंगे यह भावना से जिसके चित्त चेतना में जगतनाथ होंगे वह किस तरह **अनाथ** हो सकता है ?

भगवान तथागत बुद्ध के महानिर्वाण के उपरान्त भिक्षु आनन्द संघ के पुरोधा हुए।एक दिन एकने आकर विषादित निवेदन किया ... ' मुझे कोई पथ बतलाएँ । मेरा सबकुछ है . किन्तु शान्ति परितोष है नहीं। मैं अपने आपको**अनाथ** जैसा अनुभव करने लगा हूँ। मेरे क्या करने से मुझे परितोष की प्रप्ति हो पएगी! उसीके ि्ये साधना निराजना का मार्गदर्शन करें '। भिक्षुने मुसकुचराते हुए कहा – ' वह कोई जटिल काम नहीं है। एक सामान्य अभ्यास से तुम्हारे भीतर शान्ति-परितोष परिपूर्ण हो जाएगा । प्रतिदिन प्रभात में उदित सूर्य को प्रणाम करके दोनों हाथ ऊपर उठाकर हँस देना । फिर सोचना जो होगया है वह अच्छा ही है , और जो होनेवाला है वह भी अच्छा ही होगा। उसके बाद फिर से आदित्य को प्रणाम करना । इस तरह केवल मात्र सात दिनों के अभ्यास से सब सुधर जाएगा '। वह आदमी आनन्द मन से भिक्षु को प्रणाम करके जाते समय भिक्षु ने फिर कहा – ' देखो , सात दिनों के बाद तुम तुम्हारे सबसे बढ़कर आत्मीय, अभिन्नात्म एक बन्धु को साथ लेकर आकर मुझसे मिलना '। मात्र कई दिनों के बीत जाने पर भी उसने आकर भिक्षु से मिला नहीं। अनेक दिनों के बाद वह अकेले आकर भिक्षु से मिला तो , भिक्षु ने उससे इस तरह देर होने के कारण के बारे में पूछा। तब उस आदमी ने हाथ जोड़ कर मथानत होकर कहा – ' महाप्रभु, मुझे अभी तक मेरे कोई एक निकटतम बन्धु मिला नहीं। एकको परम आन्तरङ्ग मानता हूँ तो काई और को स्मरण करके कौन है मेरा निकटतम श्रेष्ठ बन्धु वह निर्णय ही कर नहीं पाया। आज भी अकेले ही आया हूँ। मुझे समुचित मार्ग बतला दें '! तो मुसकुराते हुए भिक्षुने कहा – ' वही है तुम्हारी एकमात्र समस्या। तुम अपने किसी परमात्मीय अन्तरङ्ग

मित्र को चुन नहीं पाए , अर्थात् तुम्हारे शतु भी हैं। मन में संशय अनास्था भाव भरे पूरे है। जाओ , किसी को भी शत्रु मानना नहीं। सबको मित्र , सखा, सहोदर मानना और पूर्णप्राण से स्वीकार करना । उसके बाद तुम्हारे मेरे पास कोई समस्या लेकर आने की आवश्यकता ही रहेगी नहीं। जगतनाथ तुम्हारे वाह्याभ्यन्तर विराजित होका हैं । तुम **अनाथ** नहीं **सनाथ** हो । वे तुम्हें समर्थ कृतार्थ करदेंगे... !

यजुवेद में से जिस जिस मंत्र का जिक्र मैंने किया था वह एक अनुपम , अनुप्रेरणा है ....

० ० ०

सब का मूल आधार है **भक्ति** । जो करेंगे वही कर्त्तापुरुष ही करेंगे। या कराएँगे।उनकी मरजी के बिना शाखा के पत्ता तक बात आन्दोलित भी हो नहीं पाएगा जो करता है या कराता हैं वह है कर्त्ता। यह वयाकरणिक सूत्र भी है। और बिना भकति से उन कर्तापुरुष की भकति भाव से भोला बन कर उनकी करुणा प्राप्त होना भी सम्भव नहीं है। उसी से देव पुरुष, अमर सिद्ध पुरुष तपस्वी भी लालसी हो आते हैं।

मैं **रामकथा** के अनन्त कथाक्रम की उपस्थापना करूंगा नहीं। भकति से निमज्जित "आदि महाकवि महर्षि वाल्मीकि के परावतार **गोस्वमी तुलसी दास** की भक्ति प्लावित महार्घ रचना **रामचरित मानस** के अमृत भक्ति रस महासागर से कुछ बूंद मेरे परमप्रिय वाचिका-वाचकों के प्राशन हेतु पञ्चामृत सदृश वितरित करने का विनम्र प्रयास करूँगा , जैसी कृपा करें , प्रभु श्रीराम, मु अबोध अकिंचन पर।

शिशु श्रीराम। **ठुमक चलत रामचन्द्र बाजत पैजनियाँ** -विनोद प्रमुदिता **दशरथ की रानियाँ** ...   ... उस समय देवाधिदेव महादेव आशुतोष ने नटनियाँ के रूपमें और एकादश रुद्रावतार अतुलित बलधाम हनुमान साधारण एक वानर के रूप में प्रभु को वन्दर नाच दिखाकर रीझाने उपस्थित हुए थे। त्रिकालज्ञ अमर तपस्वी काकभुषुण्डी के अयोद्या राजभवन के आँगन में उपस्थित होकर प्रभु विनोद-रत होने की तन्मय वर्णना विद्वान बोधदर्शी प्रवचक मनोरमा पब्लिशर्स के कर्तापुरुष सत्सारस्वत सर्जनाकार भाई **श्री नृसिंहप्रसाद मिश्र** ने की है। वह है **काकभुषुण्डङ्कर आत्मकथा** । उस भकति भाव भोली रचना का हिन्दी रूपान्तरण

मैंने किया है जो मुद्रणाधीन है। उसके साथसाथ कृष्णकथा और स्वामी त्रिकालदर्शी, अप्रतिम गायक सङ्गीतज्ञ चर्मचक्षुहीन परमचक्षुष्मान **सूरदास** के जीवनवृत्त आधारित प्रणम्य बाबूजी प्रवाद रचनाकार **अमृतलाल नागर** के प्रसिद्ध उपन्यास **खञ्जन नयन** का मत्कृत ओड़िआ भाषान्तरण भी **मनोरमा** कर्तृक प्रकाशनाधीन है । जो प्रभु श्रीराम सर्वकर्तापुरष श्यामसखा की मरजी , क्या जाने कब अरजी स्वीकार करेंगें , गोविन्द रीति गोविन्दजानें । भकत की भकति भाव भोली तपस्या की सिद्धि की सुवर्ण सुबह पथ निहारे रहना ही होगा। यह शाश्वत सत्य है कि ब्राह्म मुहूर्त में प्राची घाट पर सुमङ्गली उषा के चरण धोया अलक्तक की अरुणाभा रञ्जित पीताभा नभ की प्रशान्त नीलिमा में एकाकार होकर विष्णुप्रिया वसुन्धरा श्यामल शोभाा विमण्डिता होती रहेगी। प्रत्येक बाह्ममूहूर्त्त में प्रार्थना मुद्रा में ऊर्द्ध्वबाहु शलवृक्षों के ललाट पर **शुक्र** उज्वल प्रभाती तारा ब्रह्म कपोल पर तिलक टका सदृश देदीप्यमान होते रहेंगे (वृहदारण्यकोपनिषद) । निखिल विश्व भकति भाव भोला होकर तन्मयता से जगदीश्वर के यशोगान निरत करते होंगे। वह परमब्रह्म जगतकर्ता पालक की मुखपत्रिका वीणावादिनी माता वाणी , भारती शारदा सरस्वती की तद्गत प्रार्थना **अहीर भैरव नटभैरव, शिवरंजनी. भैरव**, की मन्द्र मूर्च्छना स्वरूप। भगति भाव भोला भगत प्रभाती प्रार्थना में निमग्न होकर **समुद्र वसने देवि पर्वत स्तन मण्डले ...... पदस्पर्श क्षमस्व मे** निवेदन पूर्वक सर्वंसहा वत्सला माता वसुन्धरा से क्षमा याचना करता रहेगा । माता मेरी, तुम्हारे तन पर पैर धरे मैं विछौने से उतरूँगा । करुणामयी माता सहन करके मुझे क्षमा करदेना। तत्पश्चात शय्यात्याग करेंगे न ?

परमेश्वर ईश्वर विस्यमान हैं ; इस आस्था और विश्वास के आश्रित **भक्ति** भाव भोली प्रकृति के सुकुमार स्वरूप से प्रतिपादित हो जाता है। वैष्णवीय महार्घ विचार से वे ही परमपुरुष पुरुष हैं और सभी मानव मानवेतर वानस्पतिक जगत प्रकृति अर्थात नारी हैं। एक कुण्ड में रोपित पुष्प पौधा। एक दिन प्रभात में जल सिंचन करके देखागया उसमें कुछेक कलियाँ खिलीहुई हैं। उसके उपरान्त दूसरे दिन देखागया कलियां फूल बनी खिलीहुई है , और कुछ नयी कलियाँ आयी भी हैं , दूसरे दिन उन खिले फूलों में कुछेक मुरझाए कुण्ड में गिरे पड़े हैं। नये फूलों के साथ नही कलियाँ भी आयी हैं। ये सारे काम रातभर जगकर करता कौन है की

जिज्ञासा के उत्तर स्वरूप वे हैं ईश्वर कहने के व्यतीत और कुछ कहा जा सकता है क्या ?

भक्ति और **प्रीति** अभिन्न अभेदी हैं। उसकी अप्रतिम निदर्शन हैं षोलह सहस्र ब्रज गोपाङ्गना । सिद्ध ऋषि–मुनि तपस्वी जिन्होंने त्रेतया में प्रभु वनबासी श्रीरामचन्द्र के मन–मोहन रूप के सम्मोहन से प्रभु की समीपतर सख्य–सन्निधि की अभिलाषा से प्रार्थना की थी। प्रभुने उन्हें कहा था –'वह इस जन्म में नहीं । तुम्हें त्रेतया से द्वापर तक की प्रतीक्षा करनी होगी । तब मैं श्रीकृष्णचन्द्र स्वरूप अवतरित होकर गोप ब्रज में लीलाविहार करूँगा। और तुमलोग ब्रज गोपाङ्गनाओं के रूप में अवतरित होकर अपनी अभिलभित कामना पूरी कर लेने के समक्ष कुछ भी वाधा–वाधकता होगी नहीं। मूलतः भकति भाव भोले वे तपस्वी मुनि ऋषि समूह श्रद्धा से धीरज धरे युग से युगांतर तक की प्रतीक्षा की थी। उन्हीं के प्रतिरूप–समान **अभिन्नात्म भगत** शिरड़ी साई बाबा ने ' श्रद्धा सबूरी ' तात्विक भावमयता में प्रज्ञापित किया है । **श्रीमद्भागवत** से *राश पञ्चाध्यायी* का तन्मय मनन रूपी रस अवगाहन करेंगे । यह आपसे मेरा सविनय निवेदन है। श्रीमद्भागवत को रसपिपासी बोधवन्त विद्वानों ने विश्व के **सर्वश्रेष्ठ प्रीतिकाव्य** माना है। परम प्रेमिक के रूप में उन्हें प्रीतिआ कह कर संवोधित किया है अप्राकृत प्रेम के रसाल उत्कलीय काव्य विदग्ध चिन्तमणि के कवि प्रणम्य **अभिमन्यु सामन्तसिंहार** ने **लीलाविहारी श्रीकृष्ण** को । प्रभु के भकति–प्रीति का परमायुध है **मोहन मुरली**। आवाहन का मधु–मधुर राग ह **वागेश्री**। लीलाविहारी की मुन्दरी पर अङ्कित है राधा का नाम । भारतरत्न पण्डित **भीमसेन जोशी** एवं तन्मया कोकिलकण्ठी **लता मङ्गेशकर** के *बाँसरी में वागेश्री मुन्दरी में राधा का नाम* युगलगान का स्मरण करेंगे। निवेदन है ।

खिल हरिवंश महापुराण में **प्रभु की बांसरी** व्यवहारिक उदारा मुदारा तारा **तीन ग्राम** की है नहीं उसे **सप्तग्राम** कहा गयाहै । शुद्ध कोमल बारह का बारह गुना एकसौ चौवालीस थाट उसके अष्ट भेद और श्रुति आदि के गुणन के फलस्वरप निबद्धित **सोलह सहस्र राग रागिनियाँ हैं ब्रज गोपाङ्गना**। यह आँकड़े जोड़ कर मुझे मेरे परम सुहृद् प्रवीण संङ्गीतज्ञ सीतार वादक **श्री स्वदेश रञ्जन बागची** ने गाणितिक सूत्र से बताया था। वर्तमान वे वाराणसी गोदोलिया के अपने

आवास में एक प्रशिक्षण संस्था की प्रतिष्ठा की है। उनकी पत्नी गायिका हैं , कन्या **कृत्तिका बिरजू महाराज** की शिष्या तथा कत्थक नृत्याङ्गना है। सबसब का मूल आधार है निष्कपट भक्ति भाव भोली प्रीति की कथा। प्रीति और भक्ति एकात्म अभिन्न हैं। यह अभिन्न एकात्मता में निविड़ निविड़तर होकर है।

लीलाविहारी परमब्रह्म शाश्वत सनातन अरूप अनाकार आपकी जय हो। मणिमा महिमार्णव के यशोगान मुग्ध विदग्द्ध अमरात्म कवियों की जय हो । प्रीतिवती विष्णुप्रिया सरस्वतीगन्धा वसुन्धरा की जय हो। जय जय हो भकति प्रीति की...जयजय हो...

अबोध, अकिञ्चन सामर्थ्यहीन मैं अशेष वशंम्वदता से कृतज्ञता ज्ञापित करके उसे ऋणस्वरूप स्वीकार करके करुणावरुणालय श्यामसखा के श्रीचरणों में साष्टाङ्ग प्रणिपात करके गुहारूँगा , सखा मैं उऋण होने की कामना करता नहीं हूँ। कृपा अकूपार और जो अवशेष है ,अरण्य पथ पर एकदा भक्तकवि, सर्वद्रष्टा गायक सङ्गीतज्ञ शिरोमणि सूरस्वामी को जिस भांति लेचले थे उसी प्रकार मुझ असहाय अनाथ को सनाथ करके पथ बताए ले चलो यह सविनय निवेदन स्वीकार करो... ...

उसदिन परम सन्तोष से महामना सर्वशक्तिमान भकति भाव भोले भक्त रुद्रवीणा के विचक्षण ऐन्द्रजालिक वादनक्षम , सङ्गीतार्णव चन्द्रिका के प्रणेता लङ्केश ने ,अलंघ्य महासागर तटभूमि पर सेतुबन्धन करके आकर लङ्का की बेलाभुमि पर शिविर स्थापन पूर्वक सहस्र सहस्र बलवन्त समरकुशल वानर ऋक्षसेन देख कर आराध्य प्रभु ने पदार्पण किया है तथा मेरी मोक्ष-मुक्तिदाता होनेकी करुणा की है जानकर आश्वासित हुए । आतङ्कित हुए नहीं थे । क्यों कि एकमात्र मारुति नन्दन ने यदि लङ्का को विध्वंसित करके तहसनहस कर दिया तो तब लङ्केश ने अतुलित बलधाम के एक सामान्य वानर नहीं अपनी सर्वज्ञता से **एकादश रुद्रावतार** हैं ज्ञात अनुभूत हुए थे। तथापि माता को दर्शन कर आने की अभिलाषा लेकर भी **अशोकवन** में पहुंच **अशोकवन** में पहुंच कर आस्फालन किया था। महाकवि **कालीदास** की **रघुवंशम्** में उस अभिनयसदृश आस्फालन एवं माता के उत्तर के अंश को मैं जितना स्मरण कर पाता हूँ उद्धार करने का प्रयास करूँगा -

लङ्केश ने कहा – **'भवित्री रम्भोरु त्रिदशवदन ग्लार्निभवति ।**
शते रामस्थाता नयुधि पुरतो लक्ष्मण सखः।।
तब उत्तर स्वरूप माता ने केवल कहा था **' लघिष्ठेदं षष्ठाक्षरपद विलोपात् पठ पुनः '**। उससे

नयुधि युधि हो जाएगा तथा त्रिदश , दश में रूपान्तरित हो जाएगा। फलस्वरुप भक्त चूड़ामणि रावण माता को परोक्ष सूचना देकर लौटे और लङ्का के **प्रमोद उद्यान** में आनन्द प्रमोद से सन्ध्या के उपरान्त भव्य सांस्कृतिक कार्यक्रम अनुष्ठानो का आयोजन किया था।

सन्ध्या के समय प्रभु श्रीराम सानुज मारुति नन्दन के साथ विभीषण को लेकर ऋष्यमूक पर्वत पर से दक्षिण में कोटिचन्द्रप्रभ आलोक उद्‌भास देखकर विस्मित हो जिज्ञासा की – ' लङ्केश, इस आलोक का अपूर्व भव्य उद्भास क्या है ' ? तब विभीषण भी विस्मत चकित हुए थे। किन्तु ज्ञेत्रज्ञ होने के कारण कहा – ' प्रभु, वह लङ्का का प्रमोद उद्यान है। आश्चर्य है , जब कि श्रीराम की सुविशाल सेना उपगत हो चुकी है , बावजूद उसके वहां आनन्द उत्सव वादन गायन नृत्यादि के कार्यक्रम चल रहे हैं ! जो हीरक इन्द्रनीलमणि खचित ग्रथित चन्द्रातप है उसके तले सहस्त्र सुवर्ण प्रदीपों में घृत गन्धपूरित होकर प्रदीपित है। वह उसीकी आभा है '। प्रभु ने फिर पुछा– ' वह विद्युत मणिसदृश कौंधता–सा चमक रहा हैं, क्या है ' ? विभीषण ने कहा – वह है सम्राट् के रत्नमणि खचित कनक मुकुट ' ! 'और वह जो समान्तराल दो शम्पा द्युतिवत् रेखाएँ आन्दोलित हो रही हैं ' ? तो विभीषण ने कहा – ' वह हैं साम्राज्ञी के मणिमय रत्न कुण्डल ' ! तो मुमञ्जल दरहसित प्रभु ने धनुष में प्रत्यञ्चा तान कर अभिमंत्रत करके शरसन्धान करते ही वह चन्दातप भूलुण्ठित होगया। लङ्केश्वर के मुकुट भूपतित होकर साम्राज्ञी दोनो कुण्डल छिन्न होकर भूलुण्ठित होगये। तब तत्काल लङ्केश गद्‌गद आनन्द प्रमुदित होकर नृत्य करने लगे। हर्षित कण्ठसे मन्दादरी से कहा – ' देखा , देखा , मेरे प्रभु की शक्ति ' !

साम्राज्ञी विस्मित हुईं। फिरभी बोलीं – ' मैं प्रारंभ ही से बोलती आ रही हूँ कि जानकी को ससम्मान करके श्रीराम से क्षमा याचना करें। परनारी अपहरण

के महा पातक करो नहीं। किन्तु तब से आपके गर्व अहंकार आपको वारण करके उसकाए रखा था। अब तो समर के लिए नानान् आयोजन की व्यवस्था करने में ही आपातत: कुलनाश हो चुका है '। सुन कर मुसकुराते हुए सुदृढ़ प्रमुदित कण्ठ से दम्भोक्ति-सा लंकेश ने कहा - ' कौन है परनारी ? जिसका मैंने अपहरण करके महापातक किया है ? वह तो मेरी माता है ! पितृसत्य केवल तुमही न पालन करोगे प्रभु ? मेरी माँ को भी साथ लाकर वन के कण्टकाकीर्ण राह पर उन्हें सुख स्वाच्छन्द्य देनेके बदले पीड़ित करोगे क्या ? सो मैंने माता को उठाए ले आकर शोक रहित अशोक वन में रखा है। और प्रभात ैर सन्ध्या के समय नित्य दर्शन करने पहुचता हूँ । किस शास्त्र में यह है कि माता को स्पर्श करना पातक है ? अब तक मुझमें वह पूर्ण-विश्वास नहीं था कि मातृ वचन की रक्षा करने करुणा वारानिधि कर्तापुरुष यथार्थ में उपगत हैं ? .... और में प्रमुदित आश्वस्थ हूँ कि से तारक त्राणकर्ता मुझे मोक्ष मुक्ति प्रदान करने की कृपा करने को उपगत हुए हैं ।आख्यान संक्षेप में इस प्रकार है -

युगों के पहले वैकुण्ठ आलय के द्वारपाल थे जय और विजय।इस जन्म में वे हैं रावण और कुम्भकर्ण। प्रभु नारायण विष्णु से भेंट करने सिद्ध महर्षि दुर्वासा पहुंचे । उस समय माता रत्नाकर दुहिता लक्ष्मी प्रभु की पदसेवारत थीं। उन्होंने महर्षि को रोक कर जाने नहीं दिया। तो महर्षि क्रोधित होकर तुम दोनों राक्षस कुल-सम्भूत होओगे कहकर अभिशापित करदिया। जय विजय की लाख मिनती गुहार सुनी नहीं और वहां से अर्न्तहित होगये। जब माता बाहर आयीं तब उन दोनों से उन्हें आश्वासित कर के कहा था कि क्रोधी महर्षि के आगे हर गुहार अर्थहीन हैं । मैं तुम्हें मोक्ष मुक्ति दिलाने अवतरित होऊँगी , तब तो स्वामी मेरे वचनकी रक्षा के हेतु पधारेंगें ही ....आदि - रूपान्तरणकार)

भकतिभाव भोले परमभक्त सत्चरित्र लङ्केश के विविध राक्षस जन्मों का समापन पर्व है ,यह आस्थामय विश्वास का निवेदन है।

रामायण के तत्परवर्त्ती भक्ति रसाणित आख्यान उपाख्यानों की इस आलेख पुस्तिका के सीमित निरूपित आकार की दृष्टि से अवतारणा न करके विराम देता हूँ। किन्तु ,कृपानिधान श्यामसखा मुझे महामना रावण को महानायक के रूप में लेकर एक उपन्यास की रचना करने को पेरित कर रहे हैं । जो उनकी करुणामय इच्छा।

(सूचित करदेना चाहता हूँ कि उसी विचार से अप्रमित प्रतिभाधर प्रणम्य आचार्य **चतुरसेन शास्त्री** ने **लङ्केश रावण** को महानायक के रूप में लेकर **वयं रक्षामः** हिन्दी उपन्यास की रचना की थी जिसका ओड़िआ रूपान्तरण मैंने कियाथा। (प्रकाशक : **श्री नवकिशोर राज** , **ॐकार पब्लिकेशन,** शक्ति नगर , (बादामाबाड़ी) कटक)प्रभु की इच्छापूत्ति हेतु अब मैं मौलिक एक उपन्यास को किस रूप में विन्यसित करूंगा। गोविन्द रीति गोविन्द जाने। उनसे निदेश की प्रतीक्षा करूंगा। - रूपान्तरणकार) बाचकों से विनम्र अनुरोध है कि वे रामचरित मानस का एकाग्र मनन अनुशीलन करें जानकारी के लिए। यह आर्यभारत की सर्वप्राचीन जनभाषा कोसलि वर्ग की जनभाषा अवधि की रचना है। बनान्, लिंग, विशेष्य विशेषण हलन्त प्रयोग तथा अन्य वयाकरणिक्क जानकारी की यथार्थ सूचना मिल जाएगी। लोक (जन) इस विश्वभर के भाषा शास्त्रियों के वैचारिक सिद्धान्त के अनुसार प्रथम संस्कृत और द्वितीय ओड़िआ शास्त्रीय मर्यादा विमण्डित अप्रतिम भाषाओं की जननीहै । और लिपि देवनागरी होने के कारण आकुमारी हिमाचल की पावन भूमि में पारायण प्रवचन वाचन के लिए कोई कठिनायी है नहीं।

००० ०००

भक्ति और **प्रीति** एकात्म और अभिन्न हैं। भक्ति प्रीति भाव से समर्पित चित्त के भोले बने यथार्थ से हे वत्सला वसुधा के पुत्र-कन्यागण हम अपने आप से प्यार करतेहुए भूमि-भूमा जगतजन समाज से प्यार करें तो अपने आप मेरे प्रीति कङ्गाल प्रभु प्रेममय लीलाविहारी **श्यामसखा** , हम एक कदम आगे बढ़ें तो वे दश कदम बढ़ आऐंगे । अपलक वर्त्तल नेत्र। आरक्त अधरोष्ठ पर खिली मन्दमन्द मुसकान गहन प्रशान्त अंधकार से भी बढ़कर घन कृष्णाभ बाहें पसारे दवना दुर्लभा तुलसी की माला लटकाए भोले भगत को कोलाग्रत करलेने को किस भांति उतावले-से लगते हैं? पीतवसन जगत्पति !!

पाप और पुण्य में अन्तर भेद विचार को ज्ञात होने जटिल सूत्र संहिता के दिग्भ्रमित न होकर केवल मात्र **परोपकार पुण्याय,पापाय परपीड़ने** ।। इस सहज सरल उपदेश को अपने जीवनादर्श ध्येय स्वरूप अङ्गीकार करलेना धर्मत: समीचीन है। सुदूर अतीत, आवहमान काल से विष्णुप्रिया वसुन्धरा, मानव, यहां तक कि देवलोक भी दानव-प्रताड़ित होकर त्रस्त आतङ्कित हुए जगतकर्ता पालक

को गुहारने के अलावा और कुछ भी परित्राण की पंथा पायी नहीं हैं। प्रभु उनकी आकुल पुकार सुन कर धरावतरण करके दानव संहार किया है और सत्य धर्म के संस्थापन प्रतिष्ठा की है। आज इस भयानक कलि के अन्तिम चरण में उसी दानवी दुर्धर्ष अनाचारी की प्रवल प्रताड़ना कवलित हूए है , विश्व भर की माटी और असहाय निरीह मानव ; प्रकृति सहित मानवेतर जीव जगत और वानस्पतिक श्यामल भूमि भी। प्रत्येक राष्ट्र के दानव नायक समूह कोई भी किसीका मित्र बान्धव है नहीं। वे प्रखर शक्तिमन्त मारणास्त्रों से परस्पर को संहार करने के लिए सदा तैयार होकर हैं। परन्तु यही सत्य है कि दोनों का विनाश होगा। मरेंगे। यह भी शाश्वत सत्यहै कि विनाश से सर्जना कतई सम्भव है नहीं। उसके हेतु विकाश, सुरक्षा, संरक्षण नितान्त वाञ्छनीय है। प्रभु ने जगत की सेवा के लिए नञ्चभूतों बो तैनात करके मानव को अधिक विवेक देकर विवेचना तथा विचार-बुद्धि देकर, जो निश्चित ही एक महादान है, उन पञ्चभूतों की सुरक्षा के लिए अप्रदूषित कर रखने के दायित्व सौंपा हैं। वह मानव का महत् कर्तव्य कर्म है। मात्र काल की कराल गति कि उसी मानव के द्वारा सर सरिताएँ नित्य प्रदूषित हैं। कीचड़ों से भरपूर। जंगल लूटने को बस नफे के लिए किसी भी कानूनी पावन्दियों की परवाह न करके दानवरूपी वही मानव उजाड़ता जा रहा हैं अरण्य को।

ये दानव बने मानव हैं तो चरित्रहीन, अहंकारी, दुराग्रही, प्रेम प्रतारक, बलात्कारी, परस्व अपहर्ता, हत्या , काबू अख्तियार करके शोषण, क्या दानव क्या दानवी. अविरत मद्यपायी,ये सारे अकथनीय यंत्रणा झेलते हुए मरेंगे , सहज सरल मृत्यु नहीं। और कोई भी इनका परित्राण कर नहीं पाएगा। भगत संत साधु समूह भकति भाव भोली प्रीति से एकमुख हो **हे नारायण रक्षा करो, रक्षा करो** गुहारने लगे हैं। **उत्कलीय अनुसर्जित** रचना **अतिबड़ी जगन्नाथ दास** की श्रीमद्भागवत में **कंस** की प्रताड़ना असह्य होने कर वसुन्धरा तक गाभी के रूपमें देवी-देवताओं के सहित गुहारने लगी । उसी भागवत में एक पद है **' सरबे होइ एकमुख । डाकिले नारायण रख '** ।। अंध परमचक्षुष्मान त्रिकालदर्शी , **संत कवि भीमभोई** उन्ही भकति भावभोले साधूओं को अनुप्रेरित कर के बोले हैं ' केवल निर्मल मन से प्रमु महिमा के गायन करके भजन कीर्तन करके आनन्द अशंक मन से अड़िग रहो । प्रभु अवतरित होकर दुष्कृत विनाश करके तुम सबके परित्राण करेंगें। सत्य धर्म की पुनः संस्थापना करेंगे। उनकी परम प्रियतमा वत्सला माता वसुन्धरा के

क्लेश सहन कतई कर नहीं पाएँगे। वह है भी सब सब की धात्री **धरित्री**। स्मरण हो **श्रीगीता – यदा यदा ही धर्मस्य...**

शठ स्वार्थसर्वस्व राजनीति के कर्तापुरुरुष **अपनी गद्दी अलीक है** की आशंका से जानकर बेतहासा जो गस्त करते हैं, भित्ति–स्थापन आदिआदि तथा मिथ्या वायदों से प्रजा को बहकाए बाहर से करोड़ों का कर्जा लेकर जो किये जा रहे हैं वह ऋण भार उदासीन निरीह प्रजा पर ही तो लादे जाएँगे न ? प्रजा आज जो भुगत रही है, वह उससे भी अधिकतर क्लेश भुगतेगा। और तथाकथित जनसेवक प्रशासनिक कार्यकर्त्तागण, बैंकों के असाधु अधिकारी और परामर्श दाता उपदेष्टा सिफारीश करने वाला करोड़ों निगल कर आराम से जो डकार रहे हैं ,वे कृतकर्म का फलभोग निश्चित करेंगें । नाना दुराराग्य व्याधि , विनाश की बजह से। वे निश्चित दण्डित होंगे । रिश्वत देदे कर अन्नदाता खेतीहर जिस ऋुण के लिए दरख्वास्त देकर सही रकम से चालीश पैतालीस भाग लेकर घर को लौटता है , अदा करते समय वह हर तरह से सताये आत्मघात ह करने को मजबूर होगा ही। उसकी अन्नदायिनी जमीन उसके लिए परम पावनी तीर्थ भूमि हैं । उसी भूमि को वह आसक्त अनुराग से उसीमें लीन होकर टिके रहने को आत्मघात करता है ... यही हैं स्पर्शकातरता वाध्यता ।... ...

संत कवि फिर कहते है मैं मालूम कर पाता हूँ म्लेच्छ यवन आतङ्की गुप्त रूप में इस पवित्र माटी में अनुप्रवेण करेंगे। तहलका मचाएँगे, पकड़े जाएँगे, मारे जाएँगे मैं महिमा वारानिधि प्रभु को बताऊँगा। नहीं तो वे पछन्ते (बाद में) मुझे टोकते हुए करुणा वरुणालय सामन्त महिमा गुसाइँ कि तू सब देखता जानता था – म्लेच्छ यवन राक्षक आतङ्की घूस पैठिये आकर सरल निरीह भगतों को त्रासित आतङ्कित करने । यह महिमार्णव भी जानते हैं , आपको अगोचर है नहीं फिरभी गुारता हूँ उन्हें निपात करना महा महिम जगतका उद्धर करो प्राणियों की आर्त्ती ,अप्रमित दु;ख देख देख कर सहा नहीं जाता । भले मेरे जीवन नर्क भोगे रहे,मुझे कोई रंज है नहीं। संत कवि के वह जगप्रसिद्ध पद उद्धार करदेने को मैं अपनी आतुरता रोक नहीं पाता हूँ –

प्राणीङ्क आरत दुःख अप्रमित देखुदेखु केबा सहु
मो जीवन पछे नर्के पड़िथाउ जगत उद्धार हेउ ।।

(स्तुति चिन्तामणि)

इस प्रख्यात पद के विश्लेषण टीका मत–मन्तव्य आवश्यक है नहीं। केवल श्लेष स्वरूप कहता हूँ **प्रभु जगत का उद्धार करेंगे तो संतकवि को छोड़ कर करेंगे क्या** ? उन्हें नर्क में पड़े रहने देंगेनहीं .कतई। अंत होगा आतङ्क का , शान्ति मैत्री की प्रतिष्ठा होगी, प्राची पूर्वाशा पीत नारङ्क आभा से शुभ स्वर्णिम प्रभात को स्वागत करके अभिनन्दित अभ्यर्च्चित करेगी ता सब की धात्री माता धरित्री ...

अतः हे मेरे साधु सज्जन भगति भावभोले मनुपुत्र–कन्याएँ , आओ परस्पर से प्यार करें , स्नहे दें सम्मान दें , प्रमुदित मन से भाव संकीर्त्तन करके निलित प्राण का महोत्सव मनाएँ पारस्परिक परपूरक स्नेह श्रद्धा, ईर्ष्या मत्सर रहित मित्रमय सहोहर भावना से , एकात्म अभिन्नता में जगत करता, कढपा–अकूपार , दीनबान्धव, अरूप अव्यय.अव्यक्त अक्षय.असीम. अनन्त अच्युत शाश्वत सनातन के जय– गायन करें।

यह पावन भूमि , सर्वेश्वर भूमा की जय हो , साधु संत सज्जनों की जय हो , जयजय हो माता सर्वसहा वसुन्धरा की ..... जय हो , जयजय हो ...

०००

विद्वान बोधवन्त सर्वश्रेष्ठ विचारक पाठक–पाठिकाओं से विनम्र निवेदन है की , हम ,मैं और सुश्री विजयलक्ष्मी के लिए क्षमा याचना न करना धृष्ठता ही होगी। विशेषकर मूल औड़िआ आलेख में क्योकि हमने जो किया है , मेरी आयु, अस्वस्थता , क्षीण होतीजाती नेत्रज्याति के कारण और कल्याणीया विजयलक्ष्मी की अनिच्छा कृत वर्ण परिमार्जन की खामियों के कारण , क्यों कि **प्रूफ रिडीङ्क** भी एक कला है और कई जगह उसकी आंखें भी धोखा खागयी है। जो प्रमाद आपको गोचर हो उसे सुधार कर वाचन करने की कृपा करेंगे ।

किन्तु इस हिन्दी रूपान्तरण में वैसा प्रमाद यदा कदा परिलक्षित होगा। मैंने रूपान्तरण के समय बारबार देखा है , परिमार्जित भी किया है। तथापि निवेदन है –

चलतः स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः
हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादयति सज्जनाः ।।

विशेष कुछ नहीं परम सुहृद् मेरे .भकित भाव भोले बन कर अपने आपसे , जगत से प्यार करें। भकित भाव के सिद्ध योगी श्रीश्री महापुरुष अरक्ष रक्षक अरक्षित दास अपने कर्ता रूप में कर्ता के प्रतिनिधिस्वरूप हमसे जो कराये हैं वह हमारे प्रति अनन्त कृपा , अपरिसीम करुणा है। पद पङ्कजों में शतकोटी प्रणिपात ।

०००

०

०अविनय निवेदन मिदम्‌०

०

मूलत: **भक्ति** आलेख की सुकुमार पुस्तक का प्रकाशन ओळाशुणी गुम्फा प्रचार प्रसार समिति कर्तृक आर्य भारत की द्वितीय शास्त्रीय मर्यादा विमण्डित दिव्य **ओड़िआ** में मेरी जन्मतिथि ६.१.२०२३के दिन हुआ था (भूल से किताब में अक्षय तृतीया रहगया है) हिन्दी के राष्ट्रभाषा होने के कारण, वह अन्य भारतीय भगिनी भाषाओं को वृहत्तम सारस्वत मंच प्रदान करती है।

वह स्वाभाविक है। अत: हमने चाहा कि वह पुस्तिका हिन्दी में रूपान्तरित हो। किन्तु अनुवाद कार्यरम्भ करने के दौरान मैने देखा कि कहीं कहीं सूचना विकरण, यहां तक कि बर्ण प्रमाद भी विजयलक्ष्मी की लगन के बावजूद , आंखें धोखाखाए , अपरिमार्जित रहगये हैं। अत: वाचकों से निवेदन है कि इस हिन्दी प्रस्तुति को अनुवाद या रूपान्तरण के रूप में न लेकर स्वतंत्र अनुसर्जना मानें। क्यों कि मैंने अनेकत्र तथ्यादि संयोजन , पल्लवन , विश्लेषण , परिमार्जन के माध्यम से अधिकतर स्पष्ट और प्राञ्जल करने की कोशिश की है। भारतीय बैदिक, उपनिषदीय, कथा किंदन्तियों में सहस्त्रों आख्यान उपाख्यान हैं । मात्र औळाशुणी प्रचार प्रसार समिति बहुविध विचार से उसके कलेवर की आपातत: जो सीमा-निर्द्धारण किया है , वह सही और समीचीन भी है। आशा करता हूँ प्रिय वाचक हमारी वाध्यता का हृद्बोध करेंगे।

फिरफिर कहना चाहूंगा कि में सुदृढ़ दम्भ से इस अनुसर्जना को प्रमाद रहित है बोल नहीं पाऊँगा। विज्ञ अनुभवी अभिज्ञ पाठक अवश्य ही मालूम करलेंगे वाचन के दौरान । और सुधार लेनेकी कृपा करेंगे।

जय हो जयजय हो कर्तानुरुष , जगतपालक, कृपानिधान जगतनाथ श्यामसखा की। जय जय हो सिद्ध भगति भाव भोले महापुरुष अरक्षरक्षक अरक्षित

दास की , सरस्वतीगंधा पावनी माता सर्वंसहा धरित्री की , तदगत , एकाग्र, विचारवन्त वाचकों की... ... ...

शेष शुभ।

विभुकृपाभिलाषी

(डॉ.श्रीनिवास उद्गाता)

पद्म श्री, शारळा इम्पा शारळा,साहित्य भारती,अतिबड़ी जगन्नाथ दास सम्मानालङ्कृत तथा पुरस्कृत, आदिआदि से अभ्यर्च्चित प्राक्तन सभापति ओड़िशा साहित्य अकादेमी। प्राक्तन उपदेष्टा भारतीय प्रसार भारती, ललित कला अकादेमी, उत्कल तथा संबलपुर विश्वविद्याय के अकादेमिक कांसिल तथा सिनाट सदस्य आदि आदि । सभापति , आत्मप्रकाशनी , अध्यक्ष कोसल साहित्य सँसकुरुति अकादेमी,सुवर्णपुर

विद्यावाचस्पति ड़ॉ श्रीनिबास उद्गाता
कविकुटीर, बलाङ्गीर , ओड़िशा। डाकाङ्क ७६७००१
चलभाषाङ्क –९४३७४३००१६

दिनाङ्क २५ जून २०२३

महापुरुष अरक्षित दास के जन्मस्थान विजयनगर गढ़ ख्रीष्टाब्द १७७२
(अधुना घेडाहाड ड्याम में विलुप्त) जगन्नाथ मंन्दिर साल २०१०।

महापुरुष अरक्षित दास ने सन्यास जीवन के लिए त्याग किया था
दिगपहण्डि स्थित राज प्रासाद, ये राज प्रासाद का मुख्य द्वार है ।

आराध्य देवी मा ओलाशुणि

महापुरुष अरक्षित दास के
साधना पीठ, अनंत गुफा

महापुरुष अरक्षित दास के
समाधि पीठ

प्रथम मुद्रण – महापुरुष के २६० जन्म वार्षिक उत्सब सुनाबेस एकादशी २०२१ अबसर में।

www.olasuni.com Olasuni App
Mahapurusa Arakhita Das's - Olasuni Gumpha YouTube
E-mail - nabakishoresamal9@gmail.com